# प्रस्तावना

जो अनादि-अविनाशी (Eternal) सत्य हैं, वे सदा ही सत्य हैं। उनमें देश-काल-व्यक्ति के कारण कोई अन्तर नहीं हो सकता है। वे सभी को सर्वमान्य होते और एकमत से स्वीकार्य होते हैं और होने भी चाहिए। इसमें आत्मा, परमात्मा, विश्व-नाटक के अनादि-अविनाशी नियम और सिद्धान्त, कर्म का विधि-विधान मुख्य हैं।

जो स्वेच्छिक विषय हैं, उनके विषय में वैचारिक भिन्नता अवश्य सम्भावी है क्योंकि ये विश्व-नाटक विविधतापूर्ण है। उनमें देश-काल-परिस्थितियों के आधार पर किसी व्यक्ति के अपने ही विचारों में भिन्नता हो सकती है, वे परिवर्तन हो सकते हैं, इसलिए उनकी कोई निश्चित (Hard Fast) सीमा-रेखा नहीं हो सकती है। इनमें धारणायें और सेवा के क्षेत्र विशेष हैं। उनमें एक-दो के विचारों को सम्मान देकर यथार्थ सत्य का निर्णय करना ही यथार्थ है।

ये सृष्टि एक कर्मक्षेत्र है, परमात्मा कर्म के विधि-विधान को जानने वाला है, वही आकर जब सारा ज्ञान देते हैं, तब ही आत्मायें उसको समझकर श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ होती हैं। परमात्मा वह सारा ज्ञान अभी दे रहा है। बाबा ने अभी हमको सुकर्म-अकर्म-विकर्म की गहन गति बताई है और श्रेष्ठ कर्मों की श्रीमत दी है। बाबा की मुरली में भी कई विषयों पर देश-काल-परिस्थिति के अनुसार हर आत्मा को अलग-अलग उत्तर और श्रीमत दी है, इसलिए उनके भाव-अर्थ को देश-काल-परिस्थिति के परिपेक्ष में समझना होता है।

यहाँ पर परमात्मा के द्वारा बताये गये या उनके महावाक्यों के आधार पर कर्म सम्बन्धी कुछ अविनाशी सत्यों का वर्णन किया गया है और उसके आधार भाव व्यक्त किये गये हैं।

# विषय - सूची

1. कर्म और यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान
परमात्मा
आत्मा
विश्व-नाटक
सृष्टि-चक्र
त्रिलोक
कल्प-वृक्ष
योग
कर्म-सिद्धान्त
पवित्रता
अन्य विविध विषयों का ज्ञान
अनुभूति
2. कर्म और कर्म का विधि-विधान एवं कर्म-सिद्धान्त
3. कर्म और कर्म का स्वरूप एवं कर्म के प्रकार
अकर्म -विकर्म-सुकर्म
विकर्म और विकर्म विनाश की प्रक्रिया
4. कर्म और धर्मराज
कर्म और धर्मराजपुरी
कर्म और धर्मराजपुरी के विधि-विधान
कर्म और धर्मराज की सजायें एवं सजाओं से मुक्ति
कर्म और धर्मराज की ट्रिबुनल
5. कर्म और क्यामत अर्थात् विनाश
कर्म और कब्रदाखिल, कब्र से जगाकर कर्मों का हिसाब-किताब चुक्ता करना
6. कर्म और श्रीमत
7. कर्म और विभिन्न योनियों की आत्मायें
8. कर्म और साक्षी स्थिति
9. कर्म और पुनर्जन्म
कर्म और भविष्य जन्म
कर्म और पूर्वजन्म
कर्म और वर्तमान जन्म
10. कर्म और विश्व-नाटक

11. कर्म और कर्म का प्रभाव
12. कर्म और कर्म-फल
कर्म और कर्मों के हिसाब-किताब
13. कर्म और कर्म-भोग अर्थात् दैहिक, दैविक, भौतिक, मानसिक व्याधियाँ
14. कर्म और कर्म-सम्बन्ध एवं कर्म-बन्धन
15. कर्म और प्राकृतिक आपदायें
16. कर्म और कर्मातीत एवं विकर्माजीत स्थिति अर्थात् निर्संकल्प एवं निर्विकल्प स्थिति
कर्म और कर्मातीत स्थिति एवं विनाश का सम्बन्ध
कर्म और मुक्ति-जीवनमुक्ति
17. कर्म और सुख-दुख
18. कर्म और पाप-पुण्य
19. कर्म और दान-पुण्य
20. कर्म और काल-चक्र
21. कर्म और धर्म-सत्ता एवं राज-सत्ता
धर्म और कर्म
22. कर्म और अहंकार-हीनता एवं दोनों से मुक्ति
23. कर्म और अधिकार एवं कर्तव्य
24. कर्म और कर्म-सन्यास एवं कर्मयोग अर्थात् हद-बेहद का सन्यास
कर्म और भक्ति-भावना, परमात्मा एवं ज्ञान
25. कर्म और आपघात - महापाप
कर्म और आपघात और जीवघात का भेद
26. कर्म और स्वर्ग-नर्क
27. कर्म और पुरुषार्थ
कर्म, पुरुषार्थ और भाग्य अर्थात् पार्ट
28. क्र्म और जड़-जंगम एवं चेतन प्रकृति
कर्म और वातावरण
29. कर्म और चिन्तनधारा
30. कर्म और जीवन-मृत्यु एवं जन्म
31. कर्म और दया-मृत्यु
32. कर्म और निश्चयबुद्धि
33. कर्म के सम्बन्ध में विविध प्रश्न और सम्भावित उत्तर
विविधि बिन्दु
सारांश

# कर्म और कर्म का विधि-विधान

ये विश्व-नाटक कर्म और फल का एक अनादि-अविनाशी खेल है, जिसको बाबा ने हार और जीत का खेल भी कहा है। इस खेल में जीत पाने के लिए इस विश्व-नाटक के विधि-विधान और उसमें कर्म के विधि-विधान को जानना अति आवश्यक है, जिससे आत्मा श्रेष्ठ कर्म करके श्रेष्ठ फल की अधिकारी बन सके और अपनी आत्मिक शक्ति का विकास करके इसमें जीत पा सके।

आत्मा के द्वारा ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों से जो भी क्रियायें होती हैं, उनको कर्म कहा जाता है, उसका प्रभाव आत्मा और प्रकृति दोनों पर होता है। हर कर्म का फल अवश्य होता है, जो उसके कर्ता के वर्तमान और भविष्य जीवन को प्रभावित करता है अर्थात् आत्मा को सुख या दुख के रूप में भोगना ही पड़ता है। इसलिए इसको सुख और दुख का खेल भी कहा गया है।कर्म की गति अति गहन है, जिसकी थाह पाना और पूर्ण रीति वर्णन करना तो सम्भव नहीं है, वह तो ज्ञान-सागर परमात्मा और प्रकृति ही जानते, उसमें से कुछ अंश अर्थात कुछ नियम और सिद्धान्त जो परमात्मा पिता ने बताये हैं और उनमें से जो हमारी बुद्धि में जाग्रत हैं और सदा जाग्रत रहें, उनका ही विवेकात्मक एवं विवेचनात्मक रीति से हम यहाँ अध्ययन और वर्णन करने का पुरुषार्थ कर रहे हैं, जिससे वे हमारे जीवन में भी उपयोगी हों और अन्य आत्मायें भी उनसे कुछ लाभ उठा सकें।

"निर्बल आत्मा है वा शक्तिशाली आत्मा है, सर्वशक्ति सम्पन्न है वा शक्ति सम्पन्न है - यह सब पहचान कर्म से ही होती है क्योंकि कर्म द्वारा ही व्यक्ति और परिस्थिति के सम्बन्ध वा सम्पर्क में आते हैं। इसीलिए नाम है - कर्म-क्षेत्र, कर्म-सम्बन्ध, कर्मेन्द्रियाँ, कर्मभोग, कर्मयोग। ... कर्म श्रेष्ठ है तो श्रेष्ठ प्रालब्ध है, कर्म भ्रष्ट होने के कारण दुख की प्रालब्ध है। लेकिन दोनों का आधार कर्म है। कर्म आत्मा का दर्पण है।

अव्यक्त बापदादा 19.3.82

## १. कर्म और यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान

कर्म इस विश्व-नाटक का मूलाधार है। बाबा ने कर्म और कर्म-फल के अविनाशी-अटल विधि-विधानों का ज्ञान हमको दिया है, उनका यथार्थ ज्ञान और निश्चय आत्मा को बुरे कर्मों से रोकता (Control) भी है और श्रेष्ठ कर्मों के लिए प्रेरित भी करता है। इनके विषय में हमारा ज्ञान जितना ही स्पष्ट होता है, उनका अनुभव और निश्चय दृढ़ होता है, वह उतना ही

जीवन में प्रभावशाली होता है, जिससे हमारे कर्मों में श्रेष्ठता आती है। ज्ञान सागर परमात्म संगमयुग पर ही कर्म और विश्व-नाटक के विभिन्न विषयों का ज्ञान देते हैं, जिससे ही आत्मायें श्रेष्ठ कर्म करके चढ़ती कला में जाती हैं। इस विषय में परमात्मा के कुछ महावाक्यों को यहाँ उद्धृत किया गया है।

"निर्बल आत्मा है वा शक्तिशाली आत्मा है, सर्वशक्ति सम्पन्न है वा शक्ति सम्पन्न है - यह सब पहचान कर्म से ही होती है क्योंकि कर्म द्वारा ही व्यक्ति और परिस्थिति के सम्बन्ध वा सम्पर्क में आते हैं। इसीलिए नाम है - कर्म-क्षेत्र, कर्म-सम्बन्ध, कर्मेन्द्रियाँ, कर्मभोग, कर्म-योग।" अ. बापदादा 19.3.82

"बाप यह नॉलेज जानते हैं, जो नॉलेज तुम्हारे में भी इमर्ज हो रही है, जिस नॉलेज से ही तुम इतना ऊंच पद पाते हो। बाप है बीजरूप, उसमें झाड़ के आदि, मध्य, अन्त की नॉलेज है।... अभी संगम पर तुमको यह सारा ज्ञान मिल रहा है।"

सा.बाबा 9.11.04 रिवा.

"ज्ञान रत्न जो अभी तुम लेते हो, वह फिर सच्चे हीरे-जवाहर बन जाते हैं। 9 रत्न की माला कोई हीरे-जवाहरों की नहीं है। इन ज्ञान रत्नों की ही माला है। मनुष्य लोग फिर वे रत्न समझ अंगूठियां पहन लेते हैं। इन ज्ञान रत्नों की माला इस संगम पर ही मिलती है। ये रत्न ही तुमको भविष्य 21 जन्म मालामाल बनाते हैं।" सा.बाबा 10.1.69

"जो भी कर्मों का हिसाब-किताब है, वह भोगना ही है।... मनुष्य को अपने कर्मों का हिसाब मनुष्य जन्म में ही पाना है।" मातेश्वरी 24.6.65

"अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाना है क्योंकि यह कर्म-क्षेत्र है, कर्म-भूमि है, इसमें जो बोयेंगे सो पायेंगे। यह भी इसका नियम है। बाप कहते हैं - इस लॉ को तो मैं भी ब्रेक नहीं कर सकता हूँ, भल मैं वर्ल्ड ऑलमाइटी अथॉरिटी हूँ।"

मातेश्वरी 24.6.65

"यह सभी राज़ बाप ही समझाते हैं कि अभी हर चीज बिगड़ चुकी है। अभी मैं आया हूँ तो हर चीज को सुधारता हूँ। इसके लिए पहले मैं मनुष्यात्माओं को सुधारता हूँ, उससे सब चीजें सुधर जाती हैं।" मातेश्वरी 24.6.65

ज्ञान ही आत्मा के लिए श्रेष्ठ कर्म करने या भ्रष्ट कर्म करने का आधार है। जब आत्मा में यथार्थ ज्ञान होता है तो आत्मा के कर्म श्रेष्ठ होते हैं और जब आत्मा अपने यथार्थ आत्मिक स्वरूप, परमात्मा के स्वरूप और विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान को भूलती है, उसके कर्म साधारण या विकर्म होने लगते हैं और आत्मा की गिरती कला होती है। हमारी सदा चढ़ती

कला हो, उसके लिए ही परमात्मा संगमयुग पर आकर यथार्थ ज्ञान देते हैं, जिससे आत्माओं और समस्त विश्व की चढ़ती कला होती है। उस ज्ञान के कुछ मुख्य-मुख्य विषयों और उनके विधि-विधानों को संक्षिप्त रूप में यहाँ वर्णन करने का पुरुषार्थ किया गया है, जिनके विषय में विस्तार से जानकर हम श्रेष्ठ कर्मों की शक्ति धारण कर सकते हैं और अपने कर्मों को श्रेष्ठ बना सकते हैं।

## कर्म और आत्मा, परमात्मा एवं विश्व-नाटक

ये सृष्टि एक रंगमंच है, जहाँ आत्म, परमात्म और प्रकृति का खेल अनादि काल से चलता आ रहा है और अनन्त काल तक चलने वाला है। परमात्मा न्यायकारी, समदर्शी, सर्व ज्ञान-गुण-शक्तियों का सागर है, ब्रह्मा बाबा भी बाप समान मास्टर ज्ञान-गुण-शक्तियों का सागर बन गया है और उसका भी हर आत्मा के प्रति अति प्यार है। दोनों की सर्वात्माओं के प्रति सदा शुभ भावना, शुभ कामना है और उनकी अनन्त शक्तियाँ सर्वात्माओं पर सदा बरस रही हैं परन्तु इस विविधतापूर्ण विश्व-नाटक में हर आत्मा का पार्ट और उसके अपने कर्म की प्रधानता है अर्थात् हर आत्मा अपने कर्म और विश्व-नाटक के पार्ट अनुसार उनसे ज्ञान-गुण-शक्तियों को प्राप्त करती है और करेगी तथा अपने कर्म में लायेगी। इसलिए किसी आत्मा को किसी की प्राप्तियों से ईर्ष्या करने की आवश्यकता नहीं है बल्कि हर आत्मा को अपने कर्म पर पूरा ध्यान रखना चाहिए और उसके बाद जो प्राप्ति हो, उसमें सदा सन्तुष्ट रहना चाहिए, यही ज्ञान का गुह्य राज़ है।

ये विश्व कर्म-क्षेत्र है, जहाँ आत्मायें अपना अनादि-अविनाशी अभिनय करने के लिए आती हैं। यहाँ कोई भी आत्मा कर्म के बिना रह नहीं सकती और कोई भी कर्म बिना फल के हो नहीं सकता। इस सत्य के अनुसार हर आत्मा को अपने कर्म का फल सुख-दुख के रूप में अवश्य मिलता है। इस तरह इस विश्व में कर्म करना आत्मा के हाथ में है और फल परमात्मा या ड्रामा के हाथ में है। इस विश्व-नाटक की यथार्थता को देखें तो कर्म और फल दोनों की ही इस विश्व-नाटक में अनादि-अविनाशी नूँध है। हमको इसे साक्षी होकर देखना है और ट्रस्टी होकर पार्ट बजाना है तथा इस खेल का आनन्द लेना है। अंग्रेजी में भी किसी लेखक ने लिखा है - Events can't be changed but we can change our attitude towards events. जब परमात्मा से प्राप्त यथार्थ ज्ञान से हमारा दृष्टिकोण परिवर्तन हो जाता है तो इस विश्व-नाटक का हर दृश्य और घटना अच्छी लगने लगती है।

हर आत्मा का अपना, सर्व आत्माओं का और परमात्मा का हर पल-विपल का पार्ट

विश्व के कम्प्युटर में भरा हुआ है और भरता जाता है, जो समय पर अपना काम करता है। परमात्मा इस विश्व-नाटक का अनादि ज्ञाता है, वह जब चाहे संकल्प करते ही इसकी किसी घटना या दृश्य को देख सकता है।

परमात्मा सर्वशक्तिवान, बुद्धिमानों की बुद्धि है। वह कभी भी किसकी भी बुद्धि को परिवर्तित कर सकता है परन्तु ड्रामा के विधि-विधान और कर्मों की गहन-गति का ज्ञाता होने के कारण उनके विधि-विधान नियमानुसार समय पर ही वह कार्य करता है।

"मनुष्य जीवन में कर्म के आधार से सुख और दुख की प्रालब्ध चलती है अर्थात् हम जो कर्म करते हैं, उसकी प्रालब्ध सुख या दुख के रूप में भोगते हैं। सुख-दुख का सम्बन्ध कर्म से है। कर्म को किस्मत नहीं कहेंगे। ... कोई फिर कह देते हैं - किस्मत भी भगवान ने बनाई है। लेकिन परमात्मा कोई की किस्मत नहीं बनाते हैं। ... गीता में भी वर्णन है कि जीवात्मा अपना ही शत्रु और अपना ही मित्र है।" मातेश्वरी 15.12.63

"जैसे बाप की पूजा होती है वैसे तुम्हारी आत्मा की भी पूजा जरूर होनी चाहिए। ... शिवबाबा कहते हैं मैं भी इनसे बहुत भारी सर्विस करता हूँ, इसलिए पहले-पहले मेरी पूजा होती है। फिर जिन आत्माओं द्वारा सर्विस करता हूँ, सारे विश्व को पवित्र बनाता हूँ, उन्होंकी भी पूजा जरूर होनी चाहिए।" सा.बाबा 29.08.03 रिवा.

"हरेक आत्मा का अपना-अपना कर्म का खाता चलता है। जो करते हैं सो पाते हैं। ... यह है कर्मक्षेत्र, कर्म की खेत, जहाँ हरेक मनुष्य आत्मा अपना पार्ट प्ले करती है। परमात्मा कहते हैं - इसमें हिसाब तो मेरा भी है लेकिन मैं आत्माओं के सदृश्य जन्म-मरण में आऊं और आत्माओं के सदृश्य कर्म का उल्टा खाता बनाऊं, मेरा ऐसा पार्ट नहीं है।"

मातेश्वरी 21.06.64

"सभी आत्माओं को माया के बन्धनों से छुड़ाना और फिर नई दुनिया का सेपलिंग लगाना और पुरानी दुनिया का परिवर्तन करना ... यह सब काम उनका है। ... दूसरा गॉड इज ट्रुथ कहते हैं। तो ट्रुथ क्या चीज है, किसमें ट्रुथ ? यह भी समझने की बात है। ... नहीं, गॉड इज ट्रुथ का मतलब ही है कि गॉड ने ही आकर सब बातों की जो सच्चाई है, वह बताई है। ... जो सर्वज्ञ है, वही ट्रुथ को जान सकता है" मातेश्वरी 21.06.64

"कई बच्चे बड़े चतुर हैं। चतुर सुजान से भी चतुराई करते हैं।... होती अपनी इच्छा है लेकिन बाहर का रूप सेवा का बना देते हैं। इसलिए बापदादा मुस्कराते हुए, जानते हुए, देखते हुए, चतुराई समझते हुए भी कई बच्चों को बाहर से इशारा नहीं देते। लेकिन ड्रामा अनुसार इशारा मिलता जरूर है। वह कैसे ? ... मन की उलझन के रूप में इशारा मिलता रहता है।"

अ.बापदादा 5.12.84

"अज्ञान काल में मनुष्य समझते हैं कि ईश्वर ही दुख-सुख देते हैं। परन्तु बाप ईश्वर यह धन्धा नहीं करते हैं। यह तो कर्मों अनुसार ड्रामा बना हुआ है। जो जैसा कर्म करता है, ऐसा फल पाता है। इस समय कर्म बनाने की बात है, कर्म कूटने की बात नहीं।"

सा.बाबा 4.8.71 रिवा.

"कब पतित भी यहाँ छिपकर आते हैं। वे अपना ही नुकसान कर लेते हैं। अपने को ठगते हैं। बाप को तो ठगने की बात ही नहीं। ... कहेंगे ड्रामा अनुसार इनकी तकदीर में नहीं है तो भगवान भी क्या करे।"

सा.बाबा 20.8.71 रिवा.

"हमको अपने कर्म पर अटेन्शन तो देना ही पड़े। ऐसे नहीं कि जो होना होगा, सो होगा। नहीं, अपने कर्म के ऊपर ध्यान हो। ड्रामा और कर्म, पुरुषार्थ और प्रालब्ध का यह खेल बना हुआ है। इन सब बातों को अच्छी तरह से समझना है। अगर यह ड्रामा की बात समझ में नहीं आती है तो इसको छोड़ दो। परमात्मा को जानना जरूरी है क्योंकि उससे योग लगाना है।"

मातेश्वरी 23.4.65

"हमको अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाकर अपनी प्रालब्ध ऊंची बनानी है। बाप आता है कर्मों का ज्ञान देने। ... उनका भी यह पार्ट है, तभी तो उनकी महिमा है नॉलेजफुल। ... जो करेंगे, सो जरूर पायेंगे।"

मातेश्वरी 23.4.65

"बाप अपने कर्म श्रेष्ठ बनाने की नॉलेज देते हैं, जिससे पिछले पाप भी दग्ध हों और आगे के लिए भी हमारे कर्म कम्पलीट पवित्र बनें ... उसकी प्रालब्ध से हम सदा सुख को पाते रहें।"

मातेश्वरी 23.4.65

"जो पाप कर्म करते हैं, उसका दण्ड तो जरूर मिलेगा ना। बाप थोड़ेही बैठ दण्ड देगा। यह तो ऑटोमेटिक ड्रामा बना हुआ है, जो चलता रहता है। बाप इसके आदि-मध्य-अन्त का राज़ समझाते हैं।"

सा.बाबा 19.2.69 रिवा.

"भारत में ही रामराज्य था, भारत में ही रावण-राज्य है। रावण-राज्य में 100 परसेन्ट दुखी बन जाते हैं। यह खेल है। ... ड्रामा में जो नूँध है, वह फिर भी होगा। हम किसकी ग्लानि नहीं करते हैं। यह तो बना-बनाया अनादि ड्रामा है।"

सा.बाबा 20.1.05 रिवा.

"तुम जानते हो - जिन्होंको बाप नॉलेज दे रहे हैं, वे ही भक्ति मार्ग में उनके मन्दिर, शास्त्र आदि बनाते हैं। ... यूँ तो उत्तम पुरुष बहुत ही होते हैं परन्तु वे एक ही जन्म में उत्तम, मध्यम और कनिष्ट हो पड़ते हैं।"

सा.बाबा 10.11.06 रिवा.

## १. परमपिता परमात्मा एवं ब्रह्मा बाबा

परमात्मा ही कर्म की गहन गति का पूर्ण ज्ञाता है और वही आकर कर्म का विधि-विधान बताता है। वह कर्म करता भी है और करना सिखाता भी है, इसलिए उनको करन-करावनहार कहा जाता है। परमात्मा ने श्रेष्ठ कर्मों के लिए आत्माओं का मार्ग प्रशस्त करने के लिए ब्रह्मा बाबा के द्वारा ऐसे कर्म कराये और उनके रथ द्वारा स्वयं भी ऐसे कर्म करके दिखाये, उनका अनुभव कराया है, जो हम आत्माओं के लिए आदर्श, मार्ग-दर्शक हैं। इसलिए ही बाबा कहते तुमको ब्रह्मा के कदम पर कदम रखना है और कुछ नया नहीं करना है। सदा कर्म श्रेष्ठ रहें, उसका यही यथार्थ और सुगम मार्ग है।

परमात्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है और अनन्त गुणों और शक्तियों का सागर है, उसके ज्ञान, गुण, शक्तियों और कर्तव्यों का जितना हमको स्पष्ट ज्ञान होगा, उनका अनुभव होगा, उतना ही हम उससे वह ज्ञान, गुण, शक्तियाँ ले सकेंगे, जिससे हमारे कर्मों में श्रेष्ठता आयेगी। परमात्मा का अवतरण होता ही है आत्माओं को श्रेष्ठ कर्म सिखाकर श्रेष्ठाचारी दुनिया की स्थापना करने के लिए।

परमात्मा शब्द के भाव-अर्थ का ज्ञान
परमात्मा के ज्ञान-सागर स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के पिता स्वरूप का ज्ञान
परमात्म के सर्वशक्तिवान स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा सर्वव्यापी नहीं, एक देशवासी है अर्थात् परमधाम का वासी का ज्ञान
परमात्मा के सर्वज्ञ, जानी-जाननहार स्वरूप का ज्ञान
परमात्म के न्यायकारी और समदर्शीपन का ज्ञान
परमात्मा के परकाया प्रवेश का ज्ञान
परमात्मा के अवतरण कि विधि-विधान का ज्ञान
परमात्म मिलन का ज्ञान
परमात्मा के लिब्रेटर-गाइड अर्थात् मुक्ति-जीवनमुक्ति दाता पन का ज्ञान
परमात्मा के गुणों और कर्तव्यों का ज्ञान
परमात्मा के बाग़वान स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के पतित-पावन स्वरूप और कर्तव्य का ज्ञान
परमात्म के गरीब-निवाज कर्तव्य का ज्ञान

परमात्मा के समदर्शी स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के खिवैया स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के सौदागर स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के निराकार और साकार स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के रहमदिल स्वरूप का ज्ञान
परमात्मा के परकाया प्रवेश और ब्रह्मा के स्वरूप का ज्ञान
ब्रह्मा बाबा के गुणों, विशेषताओं और कर्तव्यों का ज्ञान
ब्रह्मा बाबा के अनेक जन्मों का ज्ञान और सृष्टि की आत्माओं से सम्बन्ध आदि-आदि

हिन्दू धर्म में परमात्मा के साकार और निराकार दोनों रूपों का गायन-पूजन, वर्णन तो होता है परन्तु उनके सत्य स्वरूप का राज़ और अनुभव अभी संगमयुग पर ही समझ में आता है, जब परमात्मा बताते हैं।

"यह संसार का चक्र कैसे चलता है, उसे जानना, इसी का नाम है ज्ञान। बाप कहते हैं - इसी का मैं नॉलेजफुल हूँ। मेरे पास इसकी फुल नॉलेज है। यह कर्मों का खाता कैसे चलता है, कैसे नम्बरवार सब आते हैं। इन सभी बातों को मैं जानता हूँ, जिसको कोई मनुष्य नहीं जान सकता क्यों कि सभी मनुष्य इस जन्म-मरण के चक्र में आने वाले हैं। जो इस चक्र में आने वाले हैं, वे इन बातों को नहीं जान सकते। ... सभी मनुष्य जन्म-मरण के चक्र में आकर अपनी पॉवर्स खो देते हैं।" मातेश्वरी 24.6.65

"परमात्म कहते हैं - मेरी परम-आत्मा, सर्वशक्तिवान, जानी-जाननहार, ज्ञान का सागर ... कहकर महिमा करते हैं। यह मेरी महिमा कोई मुफ्त की थोड़ेही है। मैंने काम किया है और मेरा कुछ कर्तव्य है, मैंने बहुत ऊंचा काम यहाँ किया है, इसलिए महिमा है।"
मातेश्वरी 24.6.65

"शिव भगवानुवाच - मैं ही पतित-पावन, ज्ञान का सागर हूँ। तुम बच्चे जानते हो शिव बाबा इसमें प्रवेश होकर हमको अपना और रचना के आदि मध्य अन्त का राज़, भक्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग के रस्म-रिवाज का राज़ और सृष्टि-चक्र कैसे फिरता है, अनेक धर्मों की वृद्धि कैसे होती है आदि आदि यह सभी डिटेल में समझाते हैं।" सा.बाबा 17.11.72

"अन्त में बच्चों को यहाँ आकर रहना है। हमारा यादगार भी यहाँ है। ...जैसे शुरू में बाबा ने तुम बच्चों को बहलाया है, फिर पिछाड़ी में बहलाना शुरू करेंगे। जैसे पहले वालों को प्यार किया था, पिछाड़ी वालों का भी हक है। उसी समय ऐसे फील करेंगे जैसे वैकुण्ठ में बैठे हैं।"
सा.बाबा 27.5.71 रिवा.

"बाप से तुमको ताकत मिलती है, जिससे तुम पावन बनते हो। ... आत्मा कैसे पावन बनेंगी, यह कोई भी बता नहीं सकते हैं।" सा.बाबा 9.9.04 रिवा.

"प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय ... युनिवर्स से युनिवर्सिटी अक्षर निकला है। ... बाप ही आकर सारे युनिवर्स को पावन बनाते हैं।"

सा.बाबा 2.2.05 रिवा.

"ईश्वर क्या रक्षा करते हैं, सो तो तुम बच्चे जानते हो। कर्मों का हिसाब-किताब तो हर एक को अपना चुक्तू करना ही है। ... बाप कहते हैं हम तो आते हैं पतितों को पावन बनाने।"

सा.बाबा 2.2.05 रिवा.

"63 जन्मों के हिसाब-किताब यहाँ ही चुक्तू होने हैं। अपने पिछले संस्कार, स्वभाव बाहर इमर्ज हो सदा के लिए समाप्त हो रहे हैं - इस कर्मों की गुह्य गति को न जान घबरा जाते हैं।... याद रखो - सच्चे बाप को अपने जीवन की नैया दे दी है तो सत्य की नॉव हिलेगी लेकिन डूब नहीं सकती।" अ.बापदादा 3.5.77

परमात्मा तो कर्म के नियम-सिद्धान्त बताता है, उनका यथार्थ ज्ञान देता है, फिर जो करता है, वह उसके अनुसार फल पाता है। परमात्मा को किसके कर्मों को देखने की आवश्यकता नही है परन्तु वह सर्वज्ञ सर्वशक्तिवान है, यदि वह चाहे तो सब जान सकता है। सृष्टि के अटल नियम हैं, जिनके अनुसार हर आत्मा को अपने कर्म का फल जाने-अन्जाने मिलता ही है। कर्म का फल तो हर आत्मा को परमात्मा जाने तो भी भोगना पड़ेगा और न जाने तब भी भोगना ही पड़ेगा।

"निराकार बाप को भी साकार का आधार लेना ही है। जैसे निराकार बाप ने साकार ब्रह्मा का आधार लिया, अभी भी ब्रह्मा के अव्यक्त फरिश्ते के रूप में आधार लेने के बिना आपकी पालना नहीं कर सकते हैं।" अ.बापदादा 10.3.96

"बाबा है सिखलाने वाला। यह तो जानते हो कि यह बाबा अच्छी धारणा कर अच्छी मुरली सुनाते हैं। अच्छा, समझो इसमें शिवबाबा है, वह तो है ही मुरलीधर परन्तु यह बाबा भी तो जानता है ना। नहीं तो इतना पद कैसे पाते हैं? बाबा ने समझाया है कि हमेशा समझो शिवबाबा सुनाते हैं। शिवबाबा की याद में रहने से तुम्हारा भी कल्याण हो जायेगा।"

सा.बाबा 24.11.03 रिवा.

"प्रजापिता ब्रह्मा का पार्ट वण्डरफुल है। यह बाप विचार सागर मंथन कर तुमको सुनाते रहते हैं। कितनी वण्डरफुल नॉलेज है।... टीचर स्टूडेण्ट को कभी 100 मार्क्स नहीं देंगे, कुछ कम देंगे। वह है ऊंचे ते ऊंचा, हम हैं देहधारी, तो बाबा मिसल 100 परसेन्ट कैसे बनेंगे? ये बड़ी

गुह्य बातें हैं। कोई सुनकर धारण करते हैं तो खुशी होती है। ... अनेक प्रकार की मार्क्स हैं। कोई निमित्त है, बहुतों को ज्ञान लेने के लिए प्रबन्ध करते हैं तो उनको भी फल मिल जाता है।"

सा.बाबा 24.3.04 रिवा.

"ब्रह्मा बाप तो सदा आदि से "तुरत दान महापुण्य", इसी संस्कार को साकर रूप में लाने वाले रहे ना। करेंगे, सोचेंगे, प्लेन बनायेंगे, यह संस्कार कभी साकार रूप में देखे ? अभी-अभी करने का महामन्त्र हर संकल्प और कर्म में देखा ना! उसी प्रमाण बच्चों से भी क्या आशा रखेंगे ? समान बनने की आशा रखेंगे ना! सबसे पहले मधुबन वालों के आगे रखते हैं। ... मधुबन सबसे बड़ा शोकेस है। ... परिवार का प्रत्यक्ष सेम्पुल, कर्मयोगी का प्रत्यक्ष सेम्पुल, अथक सेवाधारी का प्रत्यक्ष सेम्पुल, वरदान भूमि के वरदानी स्वरूप का प्रत्यक्ष सेम्पुल कौन हैं ? मधुबन निवासी हो ना!"

अ.बापदादा 25.5.83

"दुनिया में पहले सिर्फ भारत ही था। सतयुग में देवताओं को कोई खण्ड का मालूम नहीं रहता है। ... रचता और रचना की जो कुदरत है, उसको जानना होता है।... बाप कहते हैं - मैं कर्मों की गति को जानता हूँ। इस समय जो अच्छा कर्म करेंगे, वे फल भी अच्छा पायेंगे। यह कर्मक्षेत्र है।"

सा.बाबा 14.11.06 रिवा.

"बच्चों को अच्छे कर्म भी करने हैं। बाप की याद में रहने से कब बुरा कर्म होगा ही नहीं।... एक-दो के नाम-रूप में फंस मरते हैं। यहाँ तुम्हारा जिस्मानी प्यार नहीं होना चाहिए। कोई से भी लेना-देना नहीं है।... ब्रह्मा द्वारा स्थापना होती है तो उनके द्वारा सब कुछ करना है।... इनके हाथ में आया गोया शिवबाबा के हाथ में आया। सेन्टर भी खोलना है तो थ्रू इनके खोलो।"

सा.बाबा 8.11.06 रिवा.

"ब्रह्मा बाप का स्लोगन रहा - "जो कर्म मैं करूँगा, मुझे देख और करेंगे", ... जगदम्बा का विशेष रहा - "हुक्मी हुकुम चलाये रहा", वह चलाये रहा है और हम निमित्त बन चल रहे हैं। तो दोनों स्लोगन इमर्ज रखो। ... कर्म में दिखाई दे।"

अ.बापदादा 28.11.97

"टीचर्स कहने से कहाँ-कहाँ नशा चढ़ जाता है, इसलिए बापदादा निमित्त सेवाधारी कहते हैं ... सेवा के निमित्त आत्माओं में अभी विल पॉवर चाहिए। विल पॉवर बढ़ाने से औरों को भी बाप के आगे सहयोगी बनाये विल करा सकते हो। ... जैसे ब्रह्मा बाप ने आदि में धन की विल की, जिससे यज्ञ स्थापन हुआ और अन्त में शक्तियों की विल की, जिससे यह सेवा वृद्धि को पा रही है। तो फॉलो ब्रह्मा बाप। ... सेवा भी जरूर करनी है और स्व-उन्नति भी जरूर करनी है।"

अ.बापदादा 25.3.90

## २. आत्मा का ज्ञान

आत्मा के सम्बन्ध में परमात्मा ने हमको अनेक प्रकार का ज्ञान दिया है, जिसका जितना अच्छा ज्ञान होगा, उतना ही आत्मा की विकर्मों से अरुचि और श्रेष्ठ कर्मों में अभिरुचि होगी। आत्मा इस सत्य ज्ञान को समझकर, उसको जीवन में धारण कर अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर इस जीवन में ही जहाँ है, जैसी स्थिति में है, उसी में परमानन्द का अनुभव कर सकती है। अभी संगमयुग पर आत्मा के सम्बन्ध में परमात्मा ने जो ज्ञान दिया है, उसमें कुछ विशेष बातें जो हमारे कर्म को प्रभावित करती हैं, उनको संक्षिप्त में यहाँ लिख रहे हैं:-

आत्मिक स्वरूप एवं आत्मा के गुण-धर्मों का ज्ञान
मन-बुद्धि-संस्कार और आत्मा के अस्तित्व का ज्ञान
आत्मा और शरीर के अस्तित्व एवं दोनों के सम्बन्ध का ज्ञान
आत्मा के लेप-क्षेप अर्थात् आत्मा के पतित और पावन बनने का ज्ञान
आत्माओं के पूज्य और पुजारीपन का ज्ञान
आत्मा रूपी बैटरी चार्ज और डिस्चार्ज होने का ज्ञान
आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध का ज्ञान
आत्मा-परमात्मा के भेद और उनकी समानता का ज्ञान
आत्मा के 84 जन्मों का ज्ञान
आत्मा के अविनाशी संस्कारों का ज्ञान
आत्मा की विभिन्न योनियों का ज्ञान
मनुष्यात्मा मनुष्य योनि में ही पुनर्जन्म लेती है, पशु योनियों में नहीं का ज्ञान
विभिन्न योनि की आत्माओं के कर्मों और उनके सुख-दुख का ज्ञान
आत्माओं के लिंग परिवर्तन का ज्ञान
आत्मा के वृत्ति और वायब्रेशन का वातावरण पर तथा वातावरण का आत्मा की स्थिति पर प्रभाव का ज्ञान
आध्यात्मिक ज्ञान, मनोविज्ञान और दोनों के भेद का ज्ञान
आध्यात्मिक ज्ञान और दार्शनिक ज्ञान का ज्ञान
आत्मा की कर्मातीत स्थिति का ज्ञान
आत्मा के प्रकृति साथ और आत्माओं के परस्पर हिसाब-किताब का ज्ञान
आत्माओं के परस्पर सम्बन्धों के हिसाब-किताब और कल्पान्त में पूरा करके वापस घर जाने

का ज्ञान
फरिश्ता आत्माओं और प्रेतात्माओं का ज्ञान तथा दोनों के गुण-धर्मों में अन्तर का ज्ञान
देह में रहते फरिश्ता स्वरूप का ज्ञान
ईविल सोल्स एवं उनके प्रभाव का ज्ञान
आत्मा के परमधाम में रहने, वहाँ से आने और वापस जाने का ज्ञान
आत्मा के सतयुग और कलियुग में देह त्याग विधि-विधान का ज्ञान
आत्मा की चेतनता की परख का ज्ञान
परमानन्द अर्थात् अतीन्द्रिय सुख और विषयानन्द के विषय में ज्ञान
धर्म-पिताओं के परकाया प्रवेश का ज्ञान
आत्मा के मोक्ष और कर्मातीत स्थिति का ज्ञान
आत्मा विश्व-नाटक में पार्टधारी स्वरूप का ज्ञान

"देह में भृकुटी है अकाल आत्माओं का तख्त। आत्मा एक तख्त छोड़कर झट दूसरा लेती है। ... अभी है ब्राह्मण कुल का तख्त। यह है पुरुषोत्तम संगमयुग का तख्त।"

सा.बाबा 17.10.04 रिवा.

"बाप की श्रीमत है - अपने को आत्मा निश्चय करो। बच्चों को आत्मा का परिचय भी दिया है। आत्मा भृकुटी के बीच निवास करती है। आत्मा अविनाशी है, यह तख्त अर्थात् शरीर विनाशी है।"

सा.बाबा 16.8.04 रिवा.

"जैसे बापदादा अशरीरी से शरीर में आते हैं ऐसे ही तुम सभी बच्चों को भी अशरीरी होकर के शरीर में आना है।"

अ. बापदादा 13.11.69

"शरीर द्वारा कर्म कराने वाली मैं आत्मा हूँ, वह नहीं भूले। ... शरीर से काम कराते हुए भी कराने वाली मैं आत्मा अलग हूँ, यह प्रैक्टिकस करो तो कभी भी बॉडी कान्शस की बातों में नीचे-ऊपर नहीं होंगे।"

अ.बापदादा 27.2.96

## ३. विश्व-नाटक का यथार्थ ज्ञान

ये विश्व एक अनादि-अविनाशी नाटक है, जहाँ हम सभी आत्मायें पार्ट बजाने आते हैं। परमात्मा का भी इसमें पार्ट है। इस नाटक के विधि-विधानों का ज्ञान जितना स्पष्ट होगा, उतना ही हमारे कर्मों में श्रेष्ठता आयेगी।

विश्व-नाटक और उसकी संरचना का ज्ञान

विश्व-नाटक की अनादि-अविनाश्यता का ज्ञान
विश्व-नाटक के गुण-धर्मों (Characterstics) का ज्ञान
विश्व-नाटक के विधि-विधान, नियम-सिद्धान्तों का ज्ञान
विश्व-नाटक के सत्य, न्यायपूर्ण, कल्याणकारिता के सिद्धान्त का ज्ञान
विश्व-नाटक में सतोप्रधानता और तमोप्रधानता के सिद्धान्त का ज्ञान
विश्व-नाटक की विविधता और सतत परिवर्तनशीलता का ज्ञान
विश्व-नाटक की स्वत: गतिशीलता का ज्ञान
विश्व-नाटक की अनादि-अविनाशी शूटिंग के रि-शूटिंग का ज्ञान
विश्व-नाटक की परमानन्दमयता का ज्ञान
विश्व-नाटक के आदि-मध्य-अन्त का ज्ञान
विश्व-नाटक में सूर्य, चांद, तारों के अस्तित्व और महत्व का ज्ञान
विश्व-नाटक में साक्षी स्थिति का ज्ञान
विश्व-नाटक में पुरुषार्थ के महत्व और विधि-विधान का ज्ञान
विश्व-नाटक की खेल-भावना का ज्ञान
विश्व-नाटक में मोक्ष का ज्ञान
विश्व-नाटक में मुक्ति-जीवनमुक्ति का ज्ञान

"बच्चों को ड्रामा पर पक्का रहना है तो उस समय ही फिकर से फारिग हो जायेंगे।"

सा.बाबा 23.12.68 रात्रि क्लास

"यह बना-बनाया नाटक है, हम समझते हैं यह सभी एक्टर्स हैं। निन्दा तो कर नहीं सकते। नाटक की तो जरूर महिमा ही करनी पड़े। अपना ही नाटक है, हम उस नाटक के एक्टर्स हैं। नाटक को एक्टर्स खराब थोड़ेही मानेंगे। इसको देखकर तुम खुश होते हो, निन्दा नहीं कर सकते। बाकी मनुष्यों को माया के फंदे से छुड़ाने लिए समझाते हैं।"

सा.बाबा 28.1.69 रात्रि क्लास रिवा.

"यह है बड़ा वण्डरफुल ड्रामा। अभी तुम बच्चे आदि से लेकर अन्त तक सब जानते हो। ... बाप के पास सारा ज्ञान है, तुम्हारे पास भी होना चाहिए। ... यह साक्षात्कार आदि सब ड्रामा में नूँध हैं, इसमें तुमको मूँझने की दरकार नहीं है।"

सा.बाबा 28.3.05

"बाप आकर सारे सृष्टि चक्र की नॉलेज देते हैं।... यह चक्र फिरता रहता है। ये बड़ी सूक्ष्म बातें हैं समझने की। यह बना-बनाया खेल है। ... देही-अभिमानी बनें तब खुशी का पारा

चढ़े। ... बाबा से कोई बात पूछते हैं तो बाबा कहते हैं - ड्रामा में जो कुछ बताने का है, वह बता देते हैं। ड्रामा अनुसार जो उत्तर मिलना था सो मिल गया, बस उस पर चल पड़ना है।"

सा.बाबा 16.2.05 रिवा.

"तुम बच्चों को कितनी खुशी होती है। जैसे बाप की बुद्धि में सारा ज्ञान है, वैसे तुम्हारी बुद्धि में भी है। बीज और झाड़ को समझना है। ... ड्रामा अनुसार यह सब होना ही है, इसमें घृणा नहीं आती। नाटक में एक्टर्स को कभी किससे घृणा आयेगी क्या! ... यह एक ही पुरुषोत्तम संगमयुग है, जब तुम पुरुषोत्तम बनते हो। सत्य बनाने वाला, सतयुग की स्थापना करने वाला एक ही सच्चा बाबा है।"

सा.बाबा 29.6.04 रिवा.

"अभी तुम पुरुषोत्तम संगमयुग पर बैठे हो, बाकी और सब हैं कलियुग में। ... मैं बैठकर तुमको ड्रामा राज़ समझाता हूँ। मैंने बनाया हो तो फिर कहेंगे कब बनाया! बाप कहते हैं - यह अनादि है ही। कब शुरू हुआ, यह सवाल नहीं आ सकता। अगर कहेंगे फलाने समय शुरू हुआ तो कहेंगे बन्द कब होगा? परन्तु नहीं, यह तो चक्र चलता ही रहता है। ... यह है पुरुषोत्तम संगमयुग, इसमें पुरुषार्थ कर पावन बनना है। ... दिन प्रतिदिन सीढ़ी नीचे उतरते तमोप्रधान बनते जाते हैं। यह भी ड्रामा बना हुआ है। एक्टर्स होकर ड्रामा के क्रियेटर, डायरेक्टर, मुख्य एक्टर को न जाने तो क्या कहेंगे!"

सा.बाबा 10.5.04 रिवा.

"मूसलाधार वरसात, अर्थ-क्वेक आदि सब होना है। अभी तुम बच्चों ने ड्रामा का सब राज़ समझा है। ... तुम बच्चों को सब बातें अच्छी रीति समझकर औरों को भी समझाना है, खुशी में भी रहना है। ... भल कितने भी दुख, मौत आदि होंगे, तुम उस समय खुशी में होंगे। तुम जानते हो मौत तो होना ही है। कल्प-कल्प का यह खेल है, फिकरात की कोई बात नहीं।"

सा.बाबा 24.7.04 रिवा.

"विनाश के लिए तैयारी कर रहे हैं। तुम जानते हो ड्रामा में उन्होंका भी पार्ट है। ड्रामा के बन्धन में बांधे हुए हैं। तुम बच्चों के लिए यह कोई नई बात नहीं है। ... यह भी जानते हो बरोबर महाभारत लड़ाई लगी थी। ... सारा ड्रामा ही 5 हजार वर्ष का है, लाखों वर्ष की बात नहीं।"

सा.बाबा 25.8.06 रिवा.

"सबकी बीमारी एक जैसी हो न सके। कर्म भी एक जैसे हो न सकें। तो कदम-कदम पर बाप से पूछना चाहिए। ... ड्रामा में मुझे भी पार्ट मिला हुआ है। पांच तत्वों को भी अपना-अपना पार्ट मिला हुआ है, सो सबको बजाना है। धरती को उथलना है, विनाश होना है। ... बड़ा विचित्र ड्रामा है।"

सा.बाबा 26.10.06 रिवा.

## 4. सृष्टि-चक्र का ज्ञान

ये भी ज्ञान सागर बाप ने बताया है कि यह सृष्टि का खेल चक्रवत चलता है, इसलिए इसे सृष्टि-चक्र कहा जाता है। श्रेष्ठ कर्म करने और विकर्मों से बचने के लिए इस सृष्टि-चक्र का ज्ञान परमावश्यक है, इसलिए लिए ही परमात्मा आकर इस सृष्टि-चक्र का ज्ञान देते हैं। इस सृष्टि-चक्र के विधि-विधानों का जितना स्पष्ट ज्ञान हमारी बुद्धि में होगा, उतना ही हमारे कर्मों में श्रेष्ठता आयेगी और हमारा जीवन सुखमय होगा। नई निर्विकारी दुनिया की स्थापना के लिए इस सृष्टि-चक्र के विधि-विधानों का ज्ञान परमावश्यक है। परमात्मा के द्वारा बताये गये विधि-विधानों का सार रूप में यहाँ वर्णन करते हैं, जिससे वे हमारी बुद्धि में रहें और हमारे कर्म श्रेष्ठ हों।

सृष्टि-चक्र के चक्रवत् गतिशीलता का ज्ञान
सृष्टि-चक्र के हू-ब-हू पुनरावृत्ति के सिद्वान्त का ज्ञान
सृष्टि-चक्र की अवधि का ज्ञान
सृष्टि-चक्र के आदि-मध्य-अन्त का ज्ञान
सृष्टि-चक्र में पुरुषोत्तम संगमयुग का ज्ञान
सृष्टि-चक्र में स्वदर्शन चक्र और स्वदर्शन चक्रधारी बनने का ज्ञान
स्वास्तिका का ज्ञान अर्थात् चार युगों की आयु और उसकी दिशा और दशा का ज्ञान
सृष्टि-चक्र में समय की विशेषता का ज्ञान
सृष्टि-चक्र में जो हुआ अच्छा हुआ ...जो होगा अच्छा होगा का ज्ञान
सृष्टि-चक्र में "नथिंग न्यू" का ज्ञान और महत्व

इन सब तथ्यों का विवेक संगत, तर्कयुक्त ज्ञान परमात्मा संगमयुग पर ही आकर देते हैं, जिससे सृष्टि-रचना के विषय में प्रचलित अनेक प्रकार की भ्रान्तियों का निराकारण होता है और आत्मायें श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ और प्रवृत्त होती हैं।

"पहले-पहले बाप का परिचय दे फिर ये चित्र दिखाना है। ... दिन प्रतिदिन चित्र भी शोभनीक होते जाते हैं। जैसे स्कूल में नक्शे बच्चों की बुद्धि में होते हैं। तुम्हारी बुद्धि में फिर यह रहना चाहिए। ... अभी हम पुरुषोत्तम संगमयुग पर हैं, यह पुरानी दुनिया विनाश को पायेगी।"

सा.बाबा 21.6.04 रिवा.

"अब उड़ने और नीचे आने का चक्र पूरा हो। ... जब यह चक्र पूरा होगा तब स्वदर्शन चक्र दूर से आत्माओं को समीप लायेगा। यादगार में क्या दिखाते हैं? एक जगह पर बैठे चक्र भेजा और वह स्वदर्शन चक्र स्वयं ही आत्माओं को समीप ले आया। स्वयं नहीं जाते, चक्र

चलाते हैं। तो पहले यह सब चक्र पूरे हों तब तो स्वदर्शन चक्र चले।"

अ.बापदादा 2.4.84 दादियों के साथ

"अभी तो अधिकारी बन गये ना! पुकार का समय समाप्त हुआ। संगमयुग प्राप्ति का समय है न कि पुकार का समय है। सहज पुरुषार्थी अर्थात् सबको पार कर सहज सर्व प्राप्ति करने वाले।" अ.बापदादा 11.4.83

"तुमने 84 जन्म कैसे लिए, यह तुम नहीं जानते हो, मैं बताता हूँ। यह ज्ञान कोई भी शास्त्र में नहीं है। ... लक्ष्मी-नारायण में यह सृष्टि-चक्र का ज्ञान ही नहीं है। अगर उनको यह मालूम हो कि 16 कला से फिर 14 कला बनना है तो उसी समय ही राजाई का नशा उड़ जाये। वहाँ तो है ही सद्गति।" सा.बाबा 22.12.03 रिवा.

"ड्रामा के हर दृश्य को ड्रामा चक्र में संगमयुगी टॉप प्वाइन्ट पर स्थित होकर देखेंगे तो स्वत: ही अचल-अडोल रहेंगे। ... चक्र में संगमयुग ऊंचा युग है।... इसी ऊंची प्वाइन्ट पर, ऊंचे स्थान पर, ऊंची स्थिति पर, ऊंची नॉलेज में, ऊंचे ते ऊंचे बाप की याद में, ऊंचे ते ऊंची सेवा स्मृति स्वरूप होंगे तो सदा समर्थ होंगे। जहाँ समर्थ है, वहाँ व्यर्थ सदा के लिए समाप्त हो जाता है। ... ड्रामा का विचित्र पार्ट है, विचित्र का चित्र पहले नहीं खींचा जाता है। हलचल का पेपर अचानक होता है। ... जो हुआ परिवर्तन के पर्दे को खोलने के लिए बहुत ही अच्छे ते अच्छा हुआ। न भगवती (डा.) का दोष है, न भगवान का दोष है। यह तो ड्रामा का राज़ है। इसमें न भगवती कुछ कर सकता, न भगवान। यह तो ड्रामा का खेल है।"

अ.बापदादा 30.7.83

"हम पुरुषोत्तम संगमयुग पर हैं - यह किसकी बुद्धि में याद रहे तो भी सारा ड्रामा बुद्धि में आ जाये। ... तुम ब्राह्मण ही जानते हो, अभी हम पुरुषोत्तम संगमयुग पर हैं। जो ब्राह्मण हैं, उनको ही रचयिता और रचना का ज्ञान बुद्धि में है।" सा.बाबा 10.12.05 रिवा.

"तुम जानते हो हमारा बाप नॉलेजफुल है, उसमें सारे ड्रामा की नॉलेज है। अभी हमको भी नॉलेज मिल रही है। यह चक्र बड़ा अच्छा है। यह पुरुषोत्तम युग होने के कारण तुम्हारा यह जन्म भी पुरुषोत्तम है।"

सा.बाबा 6.9.06 रिवा.

## ५. त्रिलोक का ज्ञान

श्रेष्ठ कर्मों को करने के लिए ये तीन लोकों का ज्ञान भी अति आवश्यक है क्योंकि इससे ही हमको पता चलता है कि ये दुनिया हमारा स्थाई घर नहीं है, घर हमारा परमधाम है,

यहाँ तो हम पार्ट बजाने आये हैं और पार्ट पूरा करके फिर घर वापस जाना है, जिससे यहाँ के वस्तु और व्यक्तियों से नष्टोमोहा बनते हैं और आत्मा श्रेष्ठ कर्म करने में प्रवृत्त होती है। इसलिए श्रेष्ठ कर्म करने के लिए त्रिलोक का ज्ञान भी अति आवश्यक है। त्रिलोक के ज्ञान में बाबा ने मुख्यता निम्नलिखित बातों का ज्ञान दिया है।

ब्रह्म लोक (ब्रह्माण्ड) का ज्ञान अर्थात्

ब्रह्म लोक क्या है?

ब्रह्म लोक में आत्मायें कैसे रहती हैं और कब तक रह सकती हैं?

ब्रह्म लोक से आत्मायें कब और कैसे आती हैं तथा कब और कैसे जा सकती हैं?

ब्रह्म लोक की स्थिति क्या है अर्थात् वह भूमण्डल के एक तरफ अर्थात् ऊपर है या चारो तरफ है?

सूक्ष्म वतन का ज्ञान

सूक्ष्म वतन की स्थिति और वहाँ की गति-विधि का ज्ञान

सूक्ष्म वतनवासी ब्रह्मा - विष्णु - शंकर का ज्ञान

सूक्ष्म वतन का इस विश्व-नाटक में क्या महत्व है और उससे क्या सम्बन्ध है?

स्थूल वतन का ज्ञान

स्थूल वतन में इस विश्व-नाटक का ज्ञान

विश्व-नाटक के आदि-मध्य-अन्त का ज्ञान

कैसे आत्मायें परमधाम से आकर यहाँ पार्ट बजाती हैं?

"बरोबर बाप से शिक्षा लेकर हम स्वर्ग में जायेंगे, नम्बरवार पुरुषार्थ अनुसार। बाकी जो भी जीव की आत्मायें हैं, वे शान्तिधाम में चली जायेंगी। ... स्वर्ग स्थापन हो गया फिर नॉलेज की दरकार नहीं। यह नॉलेज बच्चों को पुरुषोत्तम संगमयुग पर ही सिखलाई जाती है।"

सा.बाबा 10.9.04 रिवा.

"आत्मायें मूलवतन वा ब्रह्म महतत्व में निवास करती हैं, वह है हम आत्माओं का घर। यह आकाश तत्व है, जहाँ साकारी पार्ट चलता है। ... अभी है संगमयुग, जिसको कल्याणकारी संगमयुग कहा जाता है। यहाँ आत्मा और परमात्मा का मिलन होता है।"

सा.बाबा 11.9.06 रिवा.

"बाप को जब पहले-पहले नई रचना रचनी होती है तो पहले सूक्ष्मवतन को ही रचेंगे।... पहले-पहले तुम वाया सूक्ष्मवतन से नहीं आते हो, सीधे आते हो। अभी तुम सूक्ष्मवतन में आ-जा सकते हो। ... जब तक तुम सम्पूर्ण पवित्र नहीं बने, तब तक तुम ऐसे नहीं कह सकते हो

कि हम सूक्ष्मवतन में जा सकते हैं। तुम साक्षात्कार कर सकते हो।"

सा.बाबा 7.9.06 रिवा.

तीनों लोकों का परस्पर क्या सम्बन्ध है ?
त्रिलोकीनाथ का ज्ञान अर्थात् त्रिलोकीनाथ कौन है, कैसे है और कब बनता है ?

## ६. कल्प वृक्ष का ज्ञान

कल्प-वृक्ष के ज्ञान से हमको पता पड़ता है कि हम सभी आत्मायें एक ही वृक्ष के पत्ते हैं और हम ब्राह्मण आत्मायें इस वृक्ष के आधार रूप हैं, सर्व आत्माओं के पूर्वज हैं। आधार और पूर्वजों का क्या कर्तव्य होता है, जब इस सत्य पर विचार करते हैं तो स्वत: ही सर्व आत्माओं के प्रति हमारे दिल में प्यार जाग्रत होता है और हमारे कर्म उसके अनुरूप होने लगते हैं।

कल्प-वृक्ष शब्द का और उसके वृक्ष के समान गुण-धर्मों का ज्ञान
कल्प-वृक्ष की कलम का ज्ञान अर्थात् देवी-देवता धर्म की स्थापना का ज्ञान
आदि सनातन देवी-देवता धर्म और उसका विभिन्न धर्मों के साथ सम्बन्ध का ज्ञान
संसार में विभिन्न धर्मों की स्थापना और सबके विलीन होकर एक सत धर्म की स्थापना का ज्ञान
परमात्मा और विभिन्न धर्म स्थापकों के धर्म-स्थापनार्थ परकाया प्रवेश का ज्ञान
सृष्टि में विभिन्न धर्मों की स्थापना का ज्ञान और धर्म-स्थापना में दो आत्माओं के पार्ट का ज्ञान।
आत्माओं का एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तित होने और कल्पान्त में अपने मूल धर्म में वापस आने का ज्ञान
आदि-सनातन धर्म रूपी तने से विभिन्न धर्म रूपी शाखायें-प्रशाखायें निकलने का ज्ञान
आदि सनातन देवी-देवता धर्म और हिन्दू धर्म के सम्बन्ध का ज्ञान
सनातन शब्द का ज्ञान
सृष्टि में जनसंख्या वृद्धि और कम होने का ज्ञान
कल्प-वृक्ष की आयु और उसके लाखों वर्ष न होकर, 5000 वर्ष के होने का ज्ञान
विभिन्न धर्मों की आयु का ज्ञान अर्थात् उनके स्थापना और विनाश का ज्ञान
कल्प-वृक्ष के अक्षयपन अर्थात् अनादि-अविनाशयता का ज्ञान
वृक्षपति अर्थात् वृक्षपति के अस्तित्व और बृहस्पति की दशा का ज्ञान

"संगमयुग की यादगार निशानियां सभी धर्मों में हैं। ... यह सभी धर्म आपकी शाखायें हैं,

कल्प-वृक्ष की शाखायें हैं। ... इसलिए यह कल्प-वृक्ष की निशानी अन्य धर्म की शाखायें भी हर वर्ष मनाते हैं। सारे वृक्ष का ग्रेट-ग्रेट ग्राण्ड फादर ब्रह्मा है।"

अ.बापदादा 25.12.89

परमात्मा को वृक्षपति भी कहा जाता है परन्तु परमात्मा को वृक्षपति क्यों कहा जाता है? वृक्षपति की दशा सबसे श्रेष्ठ क्यों मानी जाती है? ब्रह्मा को भी सृष्टि का आदि-पिता कहा जाता है परन्तु वह कैसे आदि-पिता है? आदि आदि बातों का ज्ञान भी अभी ही परमात्मा ने दिया है।

कल्प-वृक्ष के ज्ञान से विश्व-बन्धुत्व की भावना जाग्रत होती है और "वसुधैव कुटुम्बकम" का अनुभव होता है, जो आदि सनातन देवी-देवता धर्म का प्राण है और विश्व-शान्ति और परम सुख का आधार है। कल्प-वृक्ष के ज्ञान से आत्मा में विश्व-प्रेम जाग्रत होता है, जिससे कर्मों में श्रेष्ठता आती है।

कल्प-वृक्ष के ज्ञान से हम आत्माओं में पूर्वजपन की भावना जाग्रत होती है, जिससे विश्व-कल्याण का कर्तव्य करने की भावना जाग्रत होती है और विश्व-कल्याण का कर्तव्य करना सम्भव होता है।

संगमयुग कल्प-वृक्ष का फूल और सतयुग कल्प-वृक्ष का फल है। फूल फल से ऊंचा और श्रेष्ठ होता है परन्तु फल से डाल झुक जाती है, ऐसे ही सतयुग से कलायें उतरती जाती हैं। संगमयुग कल्प-वृक्ष का बीज है। बीज के ऊपर ही वृक्ष का आधार होता है, ऐसे ही संगमयुगी जीवन के कर्मों, प्राप्तियों, सम्बन्धों के आधार पर हम अपने भविष्य सारे कल्प के संस्कारों, कर्मों, प्राप्तियों, सम्बन्धों को समझ सकते हैं और उस अनुसार कर्म करके भविष्य को श्रेष्ठ बना सकते हैं।

"बच्चे जानते हैं - हमारा बीज है वृक्षपति, जिसके आने से हम पर बृहस्पति की दशा बैठती है।... अभी तुम बच्चों पर बृहस्पति की दशा है। ... भगवानुवाच - काम महाशत्रु है, उसको जीतने से तुम विश्व का मालिक बनते हो।"

सा.बाबा 4.6.04 रिवा.

"बाप बीजरूप, नॉजेजफुल है तो हम भी झाड़ को पूरा समझ गये हैं। ... एक धर्म की फिर से स्थापना और अनेक धर्मों का विनाश होता है। ... कल्प पहले भी संगम पर आकर तुम बच्चों को राजयोग सिखाया था।"

सा.बाबा 13.9.06 रिवा.

## ७. योग का यथार्थ ज्ञान

श्रेष्ठ भाग्य के निर्माण के लिए श्रेष्ठ कर्म करना आवश्यक है। श्रेष्ठ कर्म करने के लिए श्रेष्ठ कर्मों के ज्ञान के साथ-साथ श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति भी अति आवश्यक है। उस शक्ति को प्राप्त करने के लिए योग ही एकमात्र साधन और साधना है। इसलिए ही परमात्मा ने योग का ज्ञान दिया है और योग का अभ्यास कराया है। योग क्या है, उसकी साधना क्या है, उससे प्राप्ति क्या होती है, इन सब बातों का ज्ञान परमात्मा ने अभी संगमयुग पर दिया है, जिससे हमको श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान और जीवन में उसके महत्व का भी आभास हुआ है तथा योग द्वारा हमारे में श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति आई है। योग के सम्बन्ध में परमात्मा ने जो ज्ञान दिया है, उसमें मुख्यता निम्नलिखत बातें विशेष उल्लेखनीय हैं, जो श्रेष्ठ कर्मों के लिए अति आवश्यक हैं।

योग का अर्थ एवं योग अर्थात् याद का ज्ञान

योग के विधि-विधान का ज्ञान

योग का ज्ञान, उसके विधि-विधान का राज़ भी परमात्म संगमयुग पर ही बताते हैं, जिसको जानकर ही हम योग का यथार्थ अभ्यास कर सकते हैं और उसमें सफलता पा सकते हैं।

"योगी वह है, जो अपनी दृष्टि से ही किसी को शान्त कर दे। ... एकदम सन्नाटा हो जायेगा। जब तुम अशरीरी बन जाते हो फिर बाप की याद में रहते हो तो यही सच्ची याद है।"

सा.बाबा 30.5.05 रिवा.

"कोशिश कर अपने को आत्मा निश्चय करो तो बाप की याद भी रहेगी। देह में आने से फिर देह के सब सम्बन्ध याद आयेंगे। यह भी एक लॉ है। ... किसकी रग टूटती नहीं है। पूछते हैं - बाबा यह क्या है! अरे, तुम नाम-रूप में क्यों फँसते हो। एक तो तुम देहाभिमानी बनते हो और दूसरा फिर तुम्हारा कोई पास्ट का हिसाब-किताब है, वह धोखा देता है।"

सा.बाबा 3.6.05 रिवा.

"अगर योग नहीं लगता तो अवश्य ही इन्द्रियों द्वारा अल्पकाल के सुख प्राप्त कराने वाले और सदाकाल की प्राप्ति से वंचित कराने वाले कोई न कोई भोग भोगने में लगे हुए हैं, इसलिए अपने निजी कार्य को भूले हुए हैं। जैसे आजकल के सम्पत्ति वाले वा कलियुगी राजायें जब भोग-विलास में व्यस्त हो जाते हैं तो अपना निजी कार्य राज्य करना वा अपना अधिकार भूल जाते हैं। ऐसे ही आत्मा भी भोग भोगने में व्यस्त होने के कारण योग भूल जाती है।... जहाँ भोग है, वहाँ योग नहीं।"

अ.बापदादा 16.10.75

"बाबा फोटो निकालने को भी मना करते हैं। ... बाबा-मम्मा का चित्र देखने लग पड़ेंगे, शिव बाबा भूल जायेगा। तुम आत्माओं को तो निराकार बाप को याद करना है। इसलिए मैं फोटो आदि देखता हूँ तो फाड़ भी देता हूँ। समझते हैं यह मम्मा-बाबा के फोटो देखते रहते हैं। मरने समय अगर उनको ही देखते रहे तो दुर्गति हो जायेगी। ...समझते हैं इनका शिव बाबा से योग टूटा हुआ है, तब कहते हैं बाबा हमारे साथ फोटो निकालो। बाबा को यह फोटो आदि निकालना अच्छा नहीं लगता। कहाँ साकार में फंस कर मर न जायें।"

सा.बाबा 16.7.72 रिवा.

"तुमको नशा होना चाहिए गुप्त में बाप से हम वर्सा ले रहे हैं। कोई चित्र आदि को हम याद नहीं करते हैं। फोटो के लिए कहते हैं। मैं समझता हूँ पूरा ज्ञान नहीं उठाया है तब फोटो मांगते हैं। ... कोई भी चित्र को याद नहीं करना है। शिव बाबा का फरमान है मामेकम् याद करो।...माँ की याद में शरीर छोड़ने से दुर्गति को पायेंगे।"

सा.बाबा 17.7.72 रिवा.

"बाबा आये हैं मुरली चलाकर चले जायेंगे। इनकी बुद्धि भी वहाँ रहती है। ...इनमें शिवबाबा ही न होगा तो याद क्यों करेंगे।... तुम याद वहाँ करो।... ऐसे नहीं सिर्फ इनको बैठ देखना है। बाबा ने समझाया है शिव बाबा को याद कर फिर इनकी गोद में आना है। नहीं तो पाप हो जायेगा।"

सा.बाबा 12.11.73 रिवा.

"अभी शिवबाबा मिला है तो उनकी मत पर चलना चाहिए ना। कोई भी देहधारी को याद नहीं करना है। कोई की भी याद न आये। चित्र भी कोई का नहीं रखना है। एक शिवबाबा की ही याद रहे।"

सा.बाबा 14.10.04 रिवा.

"इसको ही योग अग्नि कहा जाता है। यह भारत का प्राचीन राजयोग है, जो बाप ही हर 5 हजार वर्ष के बाद आकर सिखलाते हैं। बेहद का बाप ही भारत में, इस साधारण तन में आकर तुम बच्चों को यह योग सिखलाते हैं। इस याद से ही तुम्हारे जन्म-जन्मान्तर के पाप कट जायेंगे।"

सा.बाबा 28.9.04 रिवा.

"बच्चों की हर प्रकार की सम्भाल भी होती रहती है। बीमारी आदि में भी विकारी मित्र-सम्बन्धी आयें, यह तो अच्छा नहीं है। हम पसन्द भी नहीं करें। नहीं तो अन्तकाल वह मित्र-सम्बन्धी ही याद पड़ेंगे। ... नहीं, उन्होंको बुलाना, कायदा नहीं है। ... यह है होलीएस्ट ऑफ होली स्थान। पतित यहाँ ठहर न सकें।"

सा.बाबा 16.9.04 रिवा.

"अपनी नसीब को बनाना अपने हाथ में है। तो अब लॉटरी के इन्तजार में नहीं रहना, इन्तजाम करते रहना। तो योग से ही एम पूरा होगा परन्तु दोनों बातों को न चाहने वाला ही निर्संकल्प

होता है, उनको ही सच्चा योगी कहा जाता है।" (दोनों की चिन्ता न हो, स्वभाविक पुरुषार्थ हो)

अ.बापदादा 6.7.69

"वह याद स्थाई ठहरती नहीं है। मैं आत्मा बिन्दी हूँ, बाबा भी बिन्दी है, वह हमारा बाप है। ... आत्मा भी निराकार, परमात्मा भी निराकार है, इसमें फोटो की भी बात नहीं है। तुमको तो आत्मा निश्चय कर बाप को याद करना है और देहाभिमान छोड़ना है।"

सा.बाबा 7.2.05 रिवा.

"तुम बच्चों की याद यथार्थ है। तुम अपने को इस देह से न्यारा, आत्मा समझकर बाप को याद करते हो। तुमको कोई की भी देह की याद नहीं आनी चाहिए। ... देही-अभिमानी होकर जितना बाप को याद करेंगे, उतना विकर्म विनाश होंगे। अभी तुमको ज्ञान का तीसरा नेत्र मिलता है।"

सा.बाबा 18.2.05 रिवा.

"बाप को याद करने से ज्ञान आप ही इमर्ज हो जाता है। जो बाप को याद करता है, उनको हर कार्य में बाप की मदद मिल ही जाती है। ... अगर नॉलेज से लाइट-माइट नहीं तो वह नॉलेज ही किस काम की! ... ईश्वरीय नॉलेज क्या बनायेगी ? ईश्वरीय स्थिति।"

अ.बापदादा 24.1.70

"भल बच्चे कहते हैं कि बहुत सहज है परन्तु मैं जो हूँ, जैसा हूँ, वैसा जानकर याद करते हैं! ... मैं आत्मा बिन्दु हूँ और हमारा बाबा भी बिन्दी है। ... मनुष्यों को यह कैसे समझायें, इस पर विचार सागर मंथन चलना चाहिए।"

सा.बाबा 2.2.05 रिवा.

"अभी पुरुषार्थ है विस्तार को समाने का। ... जिस समय बुद्धि को बहुत विस्तार में गई देखो, उसी समय यह अभ्यास करो कि इतने विस्तार को समा सकती हूँ।"

अ.बापदादा 5.4.70

"जन्म जन्मान्तर का देहाभिमान मिटाकर देही-अभिमानी बनें, इसमें बड़ी मेहनत है। कहना तो बड़ा सहज है परन्तु अपने को आत्मा समझें और बाप को बिन्दु रूप में याद करें, इसमें मेहनत है। बाप कहते हैं - मैं जो हूँ, जैसा हूँ, ऐसा कोई मुश्किल याद कर सकते हैं। ... आत्मा-परमात्मा दोनों एक जैसे बिन्दु हैं।"

सा.बाबा 25.1.05 रिवा.

"कितना भी कोई कार्य में बुद्धि विस्तार में गई हुई हो लेकिन विस्तार को एक सेकेण्ड में समाने की शक्ति नहीं है। क्या ऐसे बोल वा यह संकल्प ऐसे मालिक के हो सकते हैं ? ... बाप के सामने बच्चा आकर कहे कि बाबा हमको मदद करना, शक्ति देना, सहारा देना, इसको क्या कहा जाता है। क्या इसको रॉयल भिखारीपन नहीं कहेंगे ?"

अ.बापदादा 23.6.73

"ऐसे बुद्धि को जब चाहो, जितना समय चाहो, जहाँ स्थित करना चहो, वहाँ स्थित नहीं कर सकते हो? ... इस कला से ही अन्य सर्व कलायें स्वत: ही आ जाती हैं।"

अ.बापदादा 12.11.72

"देही-अभिमानी स्थिति सर्व विकारों को सहज ही शान्त कर देती है। ... बापदादा अचानक डायरेक्शन दें कि इस शरीर रूपी घर को छोड़कर इस देह-अभिमान की स्थिति को छोड़ देही-अभिमानी बन जाओ, इस दुनिया से अपने स्वीटहोम में चले जाओ तो कर सकेंगे?... युद्ध करते ही तो समय नहीं बिता देंगे ?"

अ.बापदादा 12.11.72

"जैसे स्थूल कर्मेन्द्रियों का मालिक बन जब और जैसे चाहो कार्य में लगा सकते हो, वैसे ही संकल्प को वा बुद्धि को जब और जहाँ लगाने चाहो, वहां लगा सकते हो? ... पढ़ाई का लास्ट पाठ कौनसा है और फर्स्ट पाठ कौनसा है? फर्स्ट पाठ और लास्ट पाठ यही अभ्यास है। ... यह है बुद्धि की ड्रिल।"

अ.बापदादा 18.6.71

"योद्धे जो युद्ध के मैदान में रहते हैं, उनको जब भी और जैसा आर्डर मिलता है, वैसे ही करते जाते हैं। ऐसे ही रुहानी वारियर्स को भी जब और जैसा डायरेक्शन मिले, वैसे ही अपनी स्थिति को स्थित कर सकते हैं?... एक सेकण्ड से भी कम समय में जैसी स्थिति में स्थित होना चाहें, उस स्थिति में टिक जायें।"

अ.बापदादा 18.6.71

"विस्तार करना और विस्तार में जाना आता है लेकिन विस्तार को जब चाहें तब समेटना और समा लेना - यह प्रैक्टिस कम है। ज्ञान के विस्तार में जाना जानते हो लेकिन ज्ञान के विस्तार को समाकर ज्ञान स्वरूप बन जाना, बीजरूप बन जाना - यह प्रैक्टिस कम है।"

अ.बापदादा 18.6.70

"अव्यक्त स्थिति में सर्व संकल्प स्वत: सिद्ध हो जाते हैं। ... अव्यक्त मूर्त को सामने देख समान बनने का प्रयत्न करना है। जैसा बाप वैसे बच्चे। ... बिन्दु रूप में तब टिक सकेंगे जब पहले शुद्ध संकल्प का अभ्यास होगा। ... एक्सीडेण्ट के समय ब्रेक नहीं लगती तो मोड़ना होता है। बिन्दु रूप है ब्रेक, शुद्ध संकल्पों से अशुद्ध संकल्पों को हटाना है मोड़ना।"

अ.बापदादा 7.6.70 पार्टियों के साथ

"बापदादा से मुलाकात करते समय बिन्दु रूप की स्थिति में स्थित रह सकते हो? ... बिन्दुरूप स्थिति जब एकान्त में बैठते हो तब हो सकती या चलते-फिरते भी हो सकती है? अन्तिम पुरुषार्थ याद का ही है। इसलिए याद की स्टेज वा अनुभव को भी बुद्धि में स्पष्ट समझना आवश्यक है।"

अ.बापदादा 24.7.70

"बिन्दुरूप स्थिति क्या है और अव्यक्त स्थिति क्या है, दोनों का अनुभव क्या-क्या है? क्योंकि

जब नाम दो कहते हैं तो जरूर दोनों के अनुभव में भी अन्तर होगा।... फरिश्ता रूप की स्थिति अर्थात् अव्यक्त स्थिति जिसकी सदाकाल रहती है, वह बिन्दुरूप में भी सहज स्थित हो सकेगा। ... कार्य करते बीच-बीच में समय निकाल कर इस फाइनल स्टेज अर्थात् बिन्दुरूप का पुरुषार्थ करना चाहिए।" अ.बापदादा 24.7.70

"जैसे बापदादा व्यक्त में आते भी हैं तो भी अव्यक्त रूप के अव्यक्त देश के अव्यक्त प्रवाह में रहते हैं। वही बच्चों को भी अनुभव कराने के लिए आते हैं। ऐसे आप सभी भी अपनी अव्यक्त स्थिति का अनुभव औरों को कराओ।" अ.बापदादा 24.1.70

"अच्छा सारे दिन में अव्यक्त स्थिति कितना समय रहती है? बिन्दु रूप के लिए नहीं पूछते हैं, अव्यक्त स्थिति कितना समय रहती है? ... अव्यक्त स्थिति के लिए कह रहे हैं। अव्यक्त स्थिति आठ घण्टा बनाना बड़ी बात नहीं है। अव्यक्त की स्मृति अर्थात् अव्यक्त स्थिति। ... गीत है ना - न वो हम से जुदा होंगे ..। जब जुदा ही नहीं होंगे तो स्नेह दिल से कैसे निकलेगा।" अ.बापदादा 18.6.70

"किसके संकल्पों को रीड करना - यह भी एक सम्पूर्णता की निशानी है। जितना-जितना अव्यक्त भाव में स्थित होंगे, उतना हर एक के भाव को सहज समझ जायेंगे।... अव्यक्त स्थिति रूपी दर्पण को साफ और स्पष्ट करने के लिए तीन बातें सरलता, श्रेष्ठता और सहनशीलता की आवश्यकता है।" अ.बापदादा 7.6.70

"जिनके व्यर्थ संकल्प नहीं चलते वे अपनी अव्यक्त स्थिति को ज्यादा बढ़ा सकते हैं। शुद्ध संकल्प भी चलने चाहिए लेकिन उनको भी कन्ट्रोल करने की शक्ति होनी चाहिए। ... व्यक्त में अव्यक्त स्थिति का अनुभव क्या होता है, वह सभी को प्रैक्टिकल में पाठ पढ़ाना है।" अ.बापदादा 23.1.70

राजयोग और हठयोग के अन्तर का ज्ञान
राजयोग-हठयोग की समानताओं और असमानताओं का ज्ञान
निर्संकल्प समाधि और निर्विकल्प समाधि का ज्ञान
बिन्दु रूप स्थिति और उस स्थिति के अभ्यास का ज्ञान
बिन्दुरूप स्थिति और अव्यक्त स्थिति का ज्ञान
विभिन्न प्रकार के योग और उनका राजयोग से सम्बन्ध का ज्ञान
रुहानी ड्रिल का ज्ञान और अभ्यास
योग की सफलता में एकान्त और एकाग्रता के महत्व का ज्ञान
स्मृति और विस्मृति का ज्ञान

स्मृति से समर्थी का ज्ञान
योग की सफलता में मौन के महत्व का ज्ञान
योग में विभिन्न प्रकार की बाधायें, तूफान और उन पर विजय का ज्ञान
योगानन्द (परमानन्द) और विषयानन्द का ज्ञान

परमात्मा के द्वारा सिखाये गये इस योग को कर्मयोग भी कहते हैं क्योंकि कर्मों की श्रेष्ठता के लिए कर्म करते भी योग अति आवश्यक है। वास्तविकता तो ये है कि योग भी एक कर्म है, जो आत्म-कल्याण के लिउ किया जाता है। इसलिए श्रेष्ठ जीवन के लिए कर्म और योग एक-दूसरे के पूरक हैं।

## कर्म और योग

कर्म और योग का बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है, इसलिए कर्मयोग का गायन है। कर्मयोग के विषय में हठयोग के प्रणेताओं ने भी बहुत वर्णन किया है और बाबा ने भी हमको कर्मयोग का ज्ञान दिया है। बाबा ने कहा है - योग में आत्मा से कोई बुरा कर्म हो नहीं सकता, कर्म करते भी तुमको योग का अभ्यास करना है। वास्तव में योग भी एक कर्म ही है, जो आत्मा के कल्याणार्थ किया जाता है, जिससे आत्मा के पिछले पाप-कर्म भस्म होते हैं, वातावरण और प्रकृति पावन बनती है। कर्म में भी योग है अर्थात् कर्म से हमारा किन्हीं वस्तु या व्यक्तियों से सम्बन्ध रहता है परन्तु उस सम्बन्ध को योग नहीं कहा जाता है क्योंकि वह गिरती कला में ले जाने वाला होता है, इसलिए योग शब्द का प्रयोग परमात्मा के साथ सम्बन्ध को ही कहा जाता है क्योंकि उससे आत्मा और विश्व की चढ़ती कला होती है।

श्रेष्ठ कर्म करने के लिए आत्मिक शक्ति चाहिए। आत्मिक शक्ति के विकास का एकमात्र साधन परमात्मा से योग है। जब आत्मा का योग परमात्मा से होता है तो आत्मा को परमात्मा से प्रेरणा मिलती है, आत्मिक शक्ति बढ़ती क्योंकि परमात्मा सर्वशक्तिवान, ज्ञान का सागर है। परमात्मा ज्ञान का सागर, सर्वशक्तिवान है इसलिए आत्मा का योग परमात्मा से होता है तो आत्मा के कर्म श्रेष्ठ कर्म होते हैं, जिसके फलस्वरूप जीवन सुखमय होता, इसलिए इस योग को कर्म-योग भी कहा जाता है।

"कई समझते हैं हम अपने को आत्मा समझ शान्त में बैठते हैं। परन्तु इससे भी कोई पाप भस्म नहीं होगा। बाप कहते हैं - अपने को आत्मा निश्चय कर फिर मुझे याद करो। जितना प्यार से बाबा को याद करेंगे तो विकर्म विनाश होंगे और फिर वर्सा भी मिलेगा।"

सा.बाबा 20.6.72 रिवा.

* कर्म और योग साथ2 रहे तो ये जीवन परमानन्दमय अनुभव होगा, सदा कर्म में सफलता होगी। कर्म और योग दोनों का बैलेन्स हो, परन्तु अज्ञानता या आदत के वशीभूत कब कर्म कान्शस हो जाते अर्थात् कर्म प्रधान हो जाता और योग गौड़ हो जाता तो योग के समय भी कर्म के संकल्प चलते रहते, जिससे योग नहीं लगता। उस समय योग भी नहीं लगता और कर्म भी नहीं होता इसलिए समय, संकल्प और शक्ति व्यर्थ जाती है और योग न लगने के कारण जब पुन: कर्म करते तो कर्म भी सफल नहीं होता। इसलिए कर्म और योग में बैलेन्स रहे, उसके लिए कर्म करते समय भी बीच-बीच में समय निकाल कर योग का अभ्यास करना अति आवश्यक है। इससे कर्म भी श्रेष्ठ होगा और योग में भी उच्च स्थिति होगी।

* ड्रामा का ज्ञान और सर्वशक्तिवान परमपिता परमात्मा की स्मृति रहे तो कब कोई व्यर्थ संकल्प चल नहीं सकता। ड्रामा के बिना कोई कार्य हो नहीं सकता, जहाँ सर्वशक्तिवान परमपिता परमात्मा है, वहाँ अहित या कोई अप्रिय घटना हो नहीं सकती। कोई भी घटना यों ही नहीं होती, हर घटना का आधार अवश्य होता है, कोई हिसाब-किताब अवश्य होता है।

* अंशमात्र भी पाप कर्म या पाप कर्म का संकल्प योग में और जीवन में सच्चे सुख की अनुभूति में विघ्न रूप अवश्य बनेगा।

* जब ये पूर्ण निश्चय हो जायेगा कि हमारा जो कर्मभोग है, दुख-अशान्ति है, वह हमारे ही कर्मों का परिणाम है तो वह दूसरे का चिन्तन न करके, दूसरों को दोष न देकर स्वयं श्रेष्ठ कर्म करने का पुरुषार्थ अवश्य करेगा और श्रेष्ठ कर्म करने के लिए परमपिता परमात्मा से अवश्य सम्बन्ध स्थापित करने का पुरुषार्थ करेगा या सम्बन्ध रखेगा, परमात्मा से योगयुक्त होगा, जिससे उसका भविश्य भी श्रेष्ठ होगा और वर्तमान में भी कर्मभोग को सहन करने की शक्ति होगी। कर्मभोग भी हल्का हो जायेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जीवात्मा के सुख-दुख के लिए कर्म का मुख्य स्थान है और कर्मों की श्रेष्ठता के लिए अर्थात् श्रेष्ठ कर्मों के ज्ञान और श्रेष्ठ कर्मों को करने के लिए शक्ति प्राप्त करने के लिए परमात्मा से योग होना अति आवश्यक है और श्रेष्ठ कर्म ही सुखी जीवन का एकमात्र आधार हैं।

"जहाँ सर्वशक्तिवान बाप साथ है, वहाँ सर्व शक्तियां भी साथ होंगी ना। जहां सर्वशक्तियां हैं, वहाँ मेहनत करने की आवश्यकता नहीं। ... हर कर्म में वरदाता का वरदान मिला हुआ है। जहाँ वरदान होता है, वहाँ मेहनत नहीं होती।" अ.बापदादा 13.3.90 पार्टी 3

## ८. कर्मों की गुह्य गति का ज्ञान

ये सृष्टि कर्म-फल-कर्म पर आधारित एक घटना-चक्र है। कर्म इसका मुख्य घटक है और परमात्मा को कर्म की गुह्य गति का ज्ञाता कहा जाता है, उसने कर्म की गुह्य गति का जो ज्ञान दिया है, उसका विस्तार से वर्णन तो अलग से किया गया है, यहाँ उसके मुख्य-मुख्य बिन्दुओं का वर्णन करते हैं।

कर्मों की गहन गति का ज्ञान
कर्म के नियम-सिद्धान्त एवं विधि-विधान का ज्ञान
विकर्म और विकर्म विनाश की प्रक्रिया का ज्ञान
सुकर्म-अकर्म-विकर्म का ज्ञान
सुकर्म कर्म करने के विधि-विधान का ज्ञान
धर्मराज और धर्मराजपुरी का ज्ञान
धर्मराजपुरी के विधि-विधान का ज्ञान
धर्मराज की सजायें और सजाओं से बचने का ज्ञान
धर्मराज की ट्रिबुनल का ज्ञान
कब्रदाखिल और कब्र से जगाने का ज्ञान
कर्म और कर्म फल का ज्ञान
निष्काम कर्म का ज्ञान
कर्मातीत अवस्था का ज्ञान
कर्मातीत स्थिति और कर्म-बन्धन की स्थिति का ज्ञान
कर्मभोग और कर्मयोग का ज्ञान और कर्मयोग द्वारा कर्मभोग पर विजय का ज्ञान
कर्म-बन्धन और कर्म-सम्बन्ध का ज्ञान
कर्मातीत और विकर्माजीत स्थिति का ज्ञान
कर्म और प्राकृतिक आत्माओं का सम्बन्ध
धर्म और कर्म का ज्ञान
पाप-पुण्य का ज्ञान
आत्मा का खाता जमा और ना (-) होने का ज्ञान
पापों का बोझ चढ़ने और पाप भस्म कर पावन बनने का ज्ञान
कर्म और विश्व-नाटक के विधि-विधान के सम्बन्ध का ज्ञान

"दूसरी तरफ बाप सुप्रीम जस्टिस के रूप में कल्याणकारी होने के कारण बच्चों के कल्याणार्थ ईश्वरीय लॉज भी बताते हैं। सबसे बड़े से बड़ा संगम का अनादि लॉ कौनसा है ? ड्रामा प्लॉन अनुसार एक का लाख गुणा प्राप्ति और पश्चाताप वा भोगना - ये ऑटोमेटिकली लॉ अर्थात् नियम चलता ही रहता है। बाप को स्थूल रीति-रस्म के माफिक कहना वा करना नहीं पड़ता है कि इस कर्म का यह फल वा इस कर्म की ये सजा है। लेकिन यह ऑटोमेटिक ईश्वरीय मशीनरी है... इसीलिए गाया हुआ है - "कर्मों की गति अति गुह्य है।"

अ.बापदादा 3.5.77

"भाग्य अपने कर्मों के हिसाब से सभी को मिलता है। द्वापर से अब तक आप आत्माओं को भी कर्म और भाग्य के हिसाब-किताब में आना पड़ता है लेकिन वर्तमान भाग्यवान युग में भगवान भाग्य देता है। भाग्य की श्रेष्ठ लकीर खींचने की विधि है "श्रेष्ठ कर्म रूपी कलम", जो बाप आप बच्चों को दे देते हैं, जिससे जितनी श्रेष्ठ, स्पष्ट जन्म-जन्मान्तर के भाग्य की लकीर खींचने चाहो, उतनी खींच सकते हो। और कोई समय को यह वरदान नहीं है। इसी समय को यह वरदान है।"

अ.बापदादा 16.1.85

"यह है धर्माऊ कल्याणकारी जन्म। अभी हमारा कल्याण होने वाला है, इसलिए यह कल्याणकारी जन्म और कल्याणकारी युग कहा जाता है। इस संगम का किसको पता नहीं है। संगम को युगे-युगे कहा है तो 4 संगम हो गये। बाप कहते हैं - नहीं, वे तो उतरती कला के संगम हैं, अभी ये है चढ़ती कला का संगम।"

सा.बाबा 27.2.02 रिवा.

"बापदादा बच्चों के वर्तमान और भविष्य के भाग्य को देखकर हर्षित हैं। वर्तमान कलम है भविष्य की तकदीर बनाने की। वर्तमान को श्रेष्ठ बनाने का साधन है - बड़ों के इशारों को सदा स्वीकार करते हुए स्वयं को परिवर्तन कर लेना।"

अ.बापदादा 2.3.85

"राज्य अधिकारी अर्थात् सर्व सूक्ष्म और स्थूल कर्म इन्द्रियों के अधिकारी। क्योंकि स्वराज्य है ना! तो कभी-कभी राजे बनते हो या सदा राजे रहते हो ?... तो सदा स्वराज्य अधिकारी सो विश्व राज्य अधिकारी। सदा चेक करो - जितना समय और जितनी पॉवर से अपनी कर्मेन्दियों, मन-बुद्धि-संस्कार के ऊपर अभी अधिकारी बनते हो, उतना ही भविष्य में राज्य अधिकार मिलता है। अगर अभी परमात्म पालना, परमात्म पढ़ाई, परमात्म श्रीमत के आधार पर यह एक संगमयुग का जन्म सदा अधिकारी नहीं तो 21 जन्म कैसे राज्य अधिकारी बनेंगे। हिसाब है ना! इस समय का स्वराज्य, स्व का राजा बनने से ही 21 जन्म की गैरन्टी है।"

अ.बापदादा 17.10.03

"संगमयुग है ही एक का पदमगुणा जमा करने का युग। ... कैसा भी कमजोर तन हो, रोगी

हो लेकिन वाचा-कर्मणा नहीं तो मन्सा सेवा अन्तिम घड़ी तक भी कर सकते हो। ... कैसे भी बीमार हो अगर दिव्य-बुद्धि सालिम है तो अन्त घड़ी तक भी सेवा कर सकते हैं।"

अ.बापदादा 18.2.85

"बिरला के पास कितनी ढेर मिल्कियत है। मन्दिर बनाते हैं, उससे कुछ भी नहीं मिलता है। गरीबों को थोड़ेही कुछ देते हैं। मन्दिर बनाया, जहाँ मनुष्य आकर माथा टेकेंगे। हाँ, गरीब को दान में देते हैं तो उसका रिटर्न में मिल सकता है। धर्मशाला बनाते हैं तो बहुत मनुष्य जाकर वहाँ विश्राम पाते हैं तो दूसरे जन्म में अल्पकाल के लिए सुख मिल जाता है। ... संगमयुग पर बाप सारे ड्रामा के आदि-मध्य-अन्त का राज़ समझाते हैं।"

सा.बाबा 6.5.04 रिवा.

"अभी है पुरुषोत्तम संगमयुग, जब बाप आकर राजयोग सिखलाते हैं। बाप ही कर्म-अकर्म-विकर्म की नॉलेज सुनाते हैं। आत्मा ही शरीर लेकर कर्म करने यहाँ आती है... सतयुग में विकर्म होता ही नहीं, इसलिए वहाँ दुख होता ही नहीं।"

सा.बाबा 23.7.04 रिवा.

## ९. पवित्रता का ज्ञान और जीवन में उसके महत्व का ज्ञान

परमात्मा को पतित-पावन कहकर आत्मायें पुकारती हैं क्योंकि आत्मायें पतित बनने के कारण विकर्मों में प्रवृत्त होती हैं, जिसके फलस्वरूप दुखी होती हैं। आत्माओं पर कैसे विकर्मों का बोझा चढ़ता है और उस विकर्मों का बोझ उतरने से ही आत्मायें सुखी होती है। इसलिए ही परमात्मा ने पवित्रता का ज्ञान दिया है। श्रेष्ठ कर्म करने के लिए पवित्रता अति आवश्यक धारणा है।

सम्पूर्ण और सम्पन्न पवित्रता का ज्ञान

सच्ची पवित्रता अर्थात् आत्मिक पवित्रता का ज्ञान

सच्ची पवित्रता, ब्रह्मचर्य व्रत और दोनों में अन्तर एवं सम्बन्ध का ज्ञान

जीवन में पवित्रता के महत्व का ज्ञान

संगमयुग की पवित्रता और सतयुग की पवित्रता के सम्बन्ध और उसमें अन्तर का ज्ञान

सन्यासियों की पवित्रता का भी बाबा ने महिमा की है। कन्याओं की पूजा क्यों होती है, उसका भी ज्ञान परमात्मा ने दिया है परन्तु यथार्थ पवित्रता क्या है, वह ज्ञान अभी परमात्मा ने दिया है। बाबा ने कहा है - पवित्रता आधार है चढ़ती कला का परन्तु पवित्रता की सम्पूर्णता अन्तिम स्थिति है। सम्पूर्ण पवित्र आत्मा इस धरा पर रह नहीं सकती, ।

"अभी बच्चे जानते हैं राखी एक ही बार बाँधते हैं, जो फिर हम 21 जन्म पवित्र रहें। तो जरूर कलियुग के अन्त में राखी बाँधने वाला चाहिए। राखी कौन आकर बांधते हैं? कौन प्रतिज्ञा कराते हैं? स्वयं बाप और जो उनके वंशावली ब्राह्मण हैं, वे ही राखी बांधते हैं।"

सा.बाबा 12.08.03 रिवा.

"वास्तव में इसका अर्थ तुम समझते हो। बाप आकर कहते हैं - बच्चे, प्रतिज्ञा करो। राखी बांधने से कुछ नहीं होता है। यह तो कसम उठाया जाता है कि बाबा, हम अभी पवित्र रहेंगे। ड्रामा में इन उत्सवों की भी नूँध है। सतयुग-त्रेता में राखी बांधने की दरकार नहीं रहती।"

सा.बाबा 12.08.03 रिवा.

"सभी के ऊपर लाइट का ताज चमक रहा है। यह संगमयुगी ब्राह्मण जीवन की विशेषता है। पवित्रता की निशानी है यह "लाइट का ताज", जो हर ब्राह्मण आत्मा को बाप द्वारा प्राप्त होता है। ... पवित्रता की प्राप्ति आप ब्राह्मण आत्माओं को उड़ती कला की तरफ सहज ले जाने का आधार है।"

अ.बापदादा 14.11.87

"आज बापदादा अपने छोटे से श्रेष्ठ सुखी संसार को देख रहे हैं। ... इस सुखी संसार में सदा सुख-शान्ति सम्पन्न ब्राह्मण आत्मायें हैं क्योंकि पवित्रता, स्वच्छता के आधार पर यह सुख-शान्तिमय जीवन है। जहाँ पवित्रता वा स्वच्छता है वहाँ कोई भी दुख-अशान्ति का नाम निशान नहीं। ... यह बुद्धि रूपी पाँव पवित्रता के किले के अन्दर रहे तो संकल्प तो क्या स्वप्न में भी दुख-अशान्ति की लहर नहीं आ सकती। दुख-अशान्ति का जरा भी अनुभव होता है तो अवश्य कोई न कोई अपवित्रता का प्रभाव है। पवित्रता, सिर्फ कामजीत जगतजीत बनना नहीं है लेकिन कामजीत अर्थात् सर्व कामनायें जीत।"

अ.बापदादा 23.12.85

## १०. अन्य विविध विषयों का ज्ञान

इसके अतिरिक्त ज्ञान सागर परमात्मा ने अभी संगमयुग पर अनेकानेक अन्य बातों का भी ज्ञान दिया है, जो सभी श्रेष्ठ कर्म करने में सहयोगी बनते हैं, अति आवश्यक हैं और हमको भ्रष्ठ कर्म करने से रोकते हैं, इसलिए श्रेष्ठ कर्म करने के लिए उनका ज्ञान भी अति आवश्यक है, इसलिए ही परमात्मा ने उन सबका ज्ञान दिया है। जिनमें कुछ मुख्य-मुख्य विषयों का संक्षिप्त में यहाँ वर्णन करते हैं।

ब्रह्मा का ज्ञान

ब्रह्मा-सरस्वती का ज्ञान और उनके सम्बन्ध का ज्ञान

बेहद के दिन और रात का ज्ञान
ब्रह्मा की अनेक भुजाओं और चतुर्मुख का ज्ञान
"भारत का ही प्राचीन सहज राजयोग गाया हुआ है। गीता में भी राजयोग नाम आता है। बाप तुम्हें राजयोग सिखलाकर राजाई का वर्सा देते हैं। ... पुरुषोत्तम संगमयुग पर ही प्रजापिता ब्रह्मा होना चाहिए। ... बाप ही इन चित्रों को इस रथ में आकर करेक्ट करते हैं।"

सा.बाबा 30.6.04 रिवा.

"बाप बह्मा तन में प्रवेश करते हैं, इसलिए इनको भागीरथ कहा जाता है। ... तुम जानते हो अभी हम ईश्वरीय सन्तान हैं, फिर दैवी सन्तान बनेंगे तो डिग्री कम हो जायेगी। इन लक्ष्मी-नारायण की भी डिग्री कम हैं क्योंकि उनमें यह ज्ञान नहीं है। ज्ञान ब्राह्मणों में ही है।"

सा.बाबा 11.6.05 रिवा.

"हर एक बात पर अच्छी रीति विचार करना चाहिए। ब्रह्मा को कहते हैं - मुझे याद करो तो यह बनेंगे। ब्रह्मा को कहा गोया ब्रह्मा मुख वंशावली सबको कहा - मुझे याद करो। ... जब यह समझें कि हम आत्मा, परमात्मा के बच्चे हैं तब खुशी का पारा चढ़े और कहें कि हम बाप को याद जरूर करेंगे।"

सा.बाबा 6.9.06 रिवा.

"भगवान आकर प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा रचना रचते हैं प्रजा की।... बाबा यह ब्राह्मण धर्म संगम पर ही रचते हैं। ... ब्रह्मा को सूक्ष्मवतन में समझते हैं ... तुम पवित्र बन फिर फरिश्ते बन जाते हो। ... रचता निराकार बाप है, ब्रह्मा को रचता नहीं कहेंगे।"

सा.बाबा 26.8.06 रिवा.

"शिवरात्रि कहते हैं लेकिन आपके लिए अभी रात्रि नहीं है, आपके लिए अमृतवेला है। आप तो रात्रि से निकल गये। ... अमृतवेला सदा वरदान का समय है। ... अपना ऐसा वरदानी स्वरूप देखते हो ?"

अ.बापदादा 16.2.96

परमात्मा की छत्रछाया का ज्ञान और अनुभव
ज्ञान-भक्ति-वैराग्य का ज्ञान
काशी कलवट का ज्ञान और अनुभव
सतयुग-त्रेता की राजाई और उसके विधि-विधान का ज्ञान
यथार्थ दान और अविनाशी ज्ञान रतनों के दान का ज्ञान
दानी, महादानी और वरदानी पन का ज्ञान और अनुभव
नर्क की धन-सम्पत्ति स्वर्ग में ट्रान्सफर करने का ज्ञान

ईश्वरीय सेवा, उसके महत्व और उसमें सफलता का ज्ञान
सागर मंथन का ज्ञान और विचार-सागर मन्थन का ज्ञान
त्याग और भाग्य का ज्ञान और त्याग से भाग्य का अनुभव
"त्याग से भाग्य प्राप्त करने वाली श्रेष्ठ आत्मा हो। त्याग ही भाग्य है, यह सदा याद रहे। ...
सेवाधारी बनना - यह भी संगमयुग पर विशेष भाग्य की निशानी है।"

अ.बापदादा 25.12.85 टीचर्स

आपघात और जीवघात का ज्ञान
आत्माओं से दुआयें लेने और दुआयें देने का ज्ञान और अनुभव
परमात्मा की दुआयें लेने का ज्ञान और अनुभव
इच्छामात्रम् अविद्या का ज्ञान और अनुभव
पैगम्बर-मैसेन्जर का ज्ञान और अनुभव
गीता-ज्ञान, उसके समय और गीता ज्ञान-दाता का ज्ञान
राम-रावण, कौरव-पाण्डव का ज्ञान
जीते जी मरने का ज्ञान और अनुभव
अमृत और विष का ज्ञान
विभिन्न त्योहारों, पर्वों और उत्सवों का ज्ञान
गोप-गोपियों और मुरलीधर की मुरली का ज्ञान
रुद्र माला और वैजन्ती माला का ज्ञान और वैजन्ती माला का दाना बनने का ज्ञान
तीसरे नेत्र का ज्ञान और अनुभव
ईश्वरीय गुण, दैवी गुण और आसुरी गुणों का ज्ञान और उनके अन्तर का ज्ञान
सच्ची स्वतन्त्रता का ज्ञान और अनुभव
साइलेन्स और साइन्स का ज्ञान तथा उनके परस्पर सम्बन्ध का ज्ञान
भगवान, भाग्य और भाग्य-विधाता का ज्ञान
त्याग और भाग्य का ज्ञान
भगवान बाप और भगवान को बच्चा बनाने का ज्ञान और अनुभव
बाप और वर्से अर्थात् बाप का वारिस बनने और बनाने का ज्ञान
योगबल - भोगबल का ज्ञान
योगबल और भोगबल से सन्तानोत्पत्ति और उसके विश्व पर प्रभाव का ज्ञान
देह-भान, देहाभिमान का ज्ञान और उसके आत्मा पर प्रभाव का ज्ञान

बैलेन्स का ज्ञान और बैलेन्स से ब्लेसिंग पाने का ज्ञान एवं अनुभव
आत्मा और शरीर, स्व-सेवा और विश्व-सेवा, साधन और साधना, अधिकार और कर्तव्य, स्वमान और सम्मान आदि-आदि में बैलेन्स स्थापित करके स्व-उन्नति को पाने का ज्ञान और अनुभव परमात्मा द्वारा संगमयुग पर ही आत्माओं को मिलता है।
भारत का यथार्थ ज्ञान
पुरुषार्थ और प्रालब्ध का ज्ञान
सृष्टि की हिस्ट्री-जॉग्राफी का ज्ञान
सत्य नारायण, अमर कथा, तीजरी की कथा, वेदों-शास्त्रों का सार रूप में ज्ञान
आत्मा के मूल गुण शान्ति, शक्ति, पवित्रता, स्वतन्त्रता आदि आदि का ज्ञान
परमात्मा के परकाया प्रवेश और ब्रह्मा द्वारा नई रचना का ज्ञान
आत्मा के पुण्यात्मा और पापात्मा बनने का ज्ञान
पुण्यात्मा, पवित्रात्मा और पापात्मा का ज्ञान
पतित और पावन का ज्ञान
पावन से पतित और फिर पतित से पावन बनने का ज्ञान
"सुखधाम में बाप नहीं ले जायेंगे। उनकी लिमिट हो जाती है घर तक पहुँचाना। यह सारा ज्ञान बुद्धि में रहना चाहिए। ... काल को हुक्म नहीं है नई दुनिया में आने का। ... बाप कहते - मुझे भी नई दुनिया में आने का हुक्म नहीं है। मैं तो पतितों को ही पावन बनाने आता हूँ।"
सा.बाबा 15.10.04 रिवा.

परमपिता परमात्मा आत्मा को पावन बनाता नहीं है परन्तु पावन बनने का रास्ता बताता है अर्थात् वह ज्ञान देता है और उनकी याद से आत्मा में ज्ञान की धारणा होती है देहाभिमान खत्म होता है और आत्मा की मूल (Original) स्वभाव-संस्कार, गुण-शक्तियां जागृत हो जाती हैं।
"अभी बाप को याद करना है क्योंकि बाप की याद से बैटरी को चार्ज करना है। ... मूलवतन में तो हैं ही आत्मायें, शरीर तो है नहीं, इसलिए बैटरी कम होने की बात नहीं। मोटर जब चले तब बैटरी चालू होगी।" (शरीर के साथ ही बैटरी डिस्चार्ज होती तो चार्ज भी शरीर के साथ ही होती है)
सा.बाबा 30.8.04 रिवा.
"बाप ने बताया है - यह युद्ध का मैदान है, टाइम लगता है पावन बनने में। इतना ही समय लगता है कि जब तक लड़ाई पूरी हो। ऐसे नहीं कि जो शुरू में आये हैं, वे पूरे पावन हो गये।"

सा.बाबा 19.11.04 रिवा.

"विकारी नाम ही विशश का है। पतित ही बुलाते हैं आकर पावन बनाओ। क्रोधी नहीं बुलाते हैं। ... तुम बच्चों को कितना अतीन्द्रिय सुख में रहना चाहिए। तुम यहाँ अविनाशी ज्ञान-धन से बहुत साहूकार बन रहे हो।"

सा.बाबा 13.7.05 रिवा.

"कट चढ़ती है आहिस्ते आहिस्ते, जैसे आटे में लून। फिर द्वापर में बहुत कट चढ़ती है। विकारों की कलायें आहिस्ते-आहिस्ते बढ़ती हैं। 16 कला से 14 कला होने में 1250 वर्ष लग जाते हैं।"

सा. बाबा 16.1.72 रिवा.

आत्मा के ऊपर अनेक जन्मों के पापों की मैल जमी हुई है, बोझा चढ़ा हुआ है, वह कैसे भस्म होता है और आत्मा कैसे पावन होती है, वह राज़ और उसका विधि-विधान का ज्ञान भी परमात्मा अभी संगमयुग पर देते हैं, तब ही आत्मा पावन बनती है।

प्रश्न है कि आत्मा अविनाशी है, उस पर मैल कैसे चढ़ती है और वह मैल क्या है?

वास्तव में अपने मूल स्वरूप को भूलने से आत्मा देह-भान और फिर देहाभिमान में आ जाती है। यह देह-भान और देहाभिमान ही आत्मा पर मैल अर्थात् खाद है, जो दिनोदिन गहरी होती जाती है। देहभान से जब आत्मा देहाभिमान में आती है उसके वशीभूत आत्मा से अनेक प्रकार के विकर्म अर्थात् पाप-कर्म होते हैं, जो आत्मा के दुख का कारण बनते हैं। संगमयुग पर परमात्मा आत्माओं को आत्मा, परमात्मा और सृष्टि-चक्र, कर्मों आदि का यथार्थ ज्ञान देते हैं और राजयोग सिखाते हैं। उस ज्ञान और योग के अभ्यास से आत्मा को पुन: अपने आत्मिक स्वरूप की स्मृति जाग्रत हो जाती है और उसके सतत अभ्यास करने से वह स्मृति पक्की होती जाती है अर्थात् देहाभिमान की कट उतरती जाती है। यथार्थ ज्ञान और आत्मिक स्वरूप की स्थिति से कर्मभोग भी सहज समाप्त होता है और आत्मा पावन बन जाती है।

"पत्थरबुद्धि को पारसबुद्धि बनाने वाला है ही परमपिता परमात्मा बेहद का बाप। इस समय तुम्हारी बुद्धि पारस है क्योंकि तुम बाप के साथ हो। फिर सतयुग में एक जन्म के भी फर्क जरूर पड़ता है। सेकण्ड बाई सेकण्ड कला कम होती जाती है। इस समय तुम्हारा जीवन एकदम परफेक्ट बनता है जब तुम बाप मिसल ज्ञान का सागर, सुख-शान्ति का सागर बनते हो।"

सा.बाबा 21.7.04 रिवा.

ज्ञान को सर्वश्रेष्ठ धन भी कहा गया है, परन्तु वह कौनसा ज्ञान है, जो सर्वश्रेष्ठ है। दुनिया में अनेक प्रकार के ज्ञान हैं, परन्तु उनमें आध्यात्मिक ज्ञान सर्वश्रेष्ठ है, जो ज्ञान सागर परमात्मा के द्वारा ही कल्पान्त में आत्माओं को मिलता है। जिसके पास इस ज्ञान धन का

खज़ाना भरपूर है, वह सदा, सर्वदा, सर्वत्र सुख-शान्ति का अनुभव करेगा। परमात्मा की प्रथम महिमा ही है - ज्ञान का सागर। परमात्मा के ज्ञान के सागर का स्वरूप अभी संगमयुग पर ही प्रत्यक्ष होता है। ज्ञान को प्रकाश भी कहा जाता है, जिस ज्ञान प्रकाश में आत्मायें श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ होती हैं।

"परमात्मा को बीज कहा जाता है। वह सारे झाड़ की नॉलेज देता है। परमात्मा को ज्ञान सागर कहते हैं ना। ज्ञान सागर है, तब ही पतित-पावन है। लिखते हो तो बड़ी समझ से लिखना चाहिए। पहले पतित-पावन कहें वा ज्ञान सागर कहें? जरूर ज्ञान है, तब तो पतित को पावन बनायेगा। तो पहले ज्ञान सागर, पीछे पतित-पावन लिखना चाहिए।"

सा.बाबा 13.10.72 रिवा.

"सर्व सम्पत्ति से श्रेष्ठ खज़ाना ज्ञान धन है, जिससे सर्व धन की प्राप्ति स्वत: ही हो जाती है। ... खज़ानों के भण्डारे भरपूर हैं? इतने भण्डारे भरपूर हैं, जो सदा महादानी बनकर दान करते रहो तो भी अखुट भण्डार हो।" अ.बापदादा 7.5.83

"अभी तुमको कितनी अच्छी नॉलेज मिलती है। ... जिनकी बुद्धि में यह नॉलेज टपकती रहेगी, उनको अपार खुशी होगी। तुम्हारे सिवाए कोई नहीं, जो यह नॉलेज समझ सके। गॉड फादर को ही वर्ल्ड ऑलमाइटी अथॉर्टी, नॉलेजफुल कहा जाता है। ... तुमको नॉलेज देने वाला बाप है, वह कितना बड़ा नॉलेजफुल है। तुम कितना मर्तबा पाते हो, कितनी खुशी होनी चाहिए। हम बेहद के बाप की सन्तान हैं। ... सदैव बुद्धि में यह ज्ञान टपकता रहे तो तुम खुशी में रहेंगे, फिकर से फारिग हो जायेंगे।"

सा.बाबा 3.10.2001 रिवा.

ज्ञान सागर परमात्मा ने जो भी ज्ञान दिया है, वह हमारे कर्मों से किसी न किसी रूप में सम्बन्धित अवश्य है, इसलिए ही परमात्मा ने वह ज्ञान हमको दिया है। ज्ञान के कुछ तथ्य हमको विकर्मों को भस्म करने में सहयोगी है तो कुछ तथ्य हमको विकर्म करने से रोकने में सहयोगी होते हैं और कुछ तथ्य हमको श्रेष्ठ कर्म करने में सहयोगी होते हैं, श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति प्रदान करते हैं, इसलिए ज्ञान सभी राज़ किसी न किसी रूप से कर्म से सम्बन्धित अवश्य हैं। परमात्मा वह सब ज्ञान हमको देता है, इसलिए परमात्मा को अकर्म-विकर्म-सुकर्म की गति का ज्ञाता कहा जाता है।

## अनुभूतियाँ

ज्ञान सागर सर्वशक्तिवान परमात्मा ने हमको अनेक विषयों का ज्ञान दिया है और अनेक प्रकार की दिव्य अनुभूतियाँ भी कराई हैं, जिससे आत्मा को श्रेष्ठ कर्म करने की प्रेरणा मिलती है और उसके आधार पर आत्मा श्रेष्ठ कर्म करने और भ्रष्ट कर्मों से मुक्त होने में समर्थ होती है। उन अनुभूतियों के आधार पर आत्मा अपने में श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति अनुभव करती है। जैसे -

आत्मा के सच्चिदानन्दमय आत्मिक स्वरूप, गुणों-शक्तियों की अनुभूति,
अपने (परमात्मा) ज्ञान-सागर, सर्वशक्तिवान स्वरूप की अनुभूति,
ईश्वरीय गोद की अनुभूति,
परमात्मा की मदद की अनुभूति,
आत्माओं को एक-दूसरे को आत्मिक शक्ति की मदद देने और मदद लेने की अनुभूति,
विश्व-नाटक की सत्यता, न्यायपूर्णता, कल्याणमयता की अनुभूति,
पुरुषोत्तम संगमयुग के कल्याणकारी समय की अनुभूति,... आदि आदि

इन सभी दिव्य अनुभूतियों से हम आत्मायें अपने में श्रेष्ठ कर्मों की शक्ति अनुभूति करते हैं, हमारी प्रवृत्ति श्रेष्ठ कर्मों में होती है, जिससे हमारे कर्म श्रेष्ठ होते हैं और जिसके फलस्वरूप हमको अपना ये संगमयुगी जीवन परमानन्दमय अनुभव होता है और उज्ज्वल भविष्य के प्रति आश्वस्त होते हैं।

## २. कर्म का विधि-विधान एवं नियम-सिद्धान्त

ये विश्व-नाटक कर्म-फल-कर्म के घटना-चक्र पर आधारित अनादि-अविनाशी नाटक है, जिसमे कर्म और फल का अनादि-अविनाशी विधि-विधान है और दोनों में अद्वितीय सन्तुलन है अर्थात् इसमें किसी भी आत्मा का कोई भी कर्म कब निष्फल नहीं होता है और कोई भी फल किसी भी आत्मा को बिना कर्म के नहीं मिल सकता है। कर्म आत्मा का स्वभाविक गुण है, इसलिए कोई भी आत्मा कर्म के बिना इस कर्मक्षेत्र पर रह नहीं सकती। आत्मा का अपना कर्म ही उसके सुख-दुख का मूल कारण है। हमारे कर्म सदा श्रेष्ठ हों, उसके लिए ही परमात्मा ने हमको कर्मों का ज्ञान दिया है। जीवन में श्रेष्ठ कर्म करने और सच्चा सुख पाने के लिए कर्म के विधि-विधान का ज्ञान अति आवश्यक है। परमात्मा ने विश्व-नाटक का जो

ज्ञान दिया है, उससे ये पता चला और अनुभव हुआ कि इस नाटक में आत्मा के पार्ट, कर्म और फल का अद्भुत सन्तुलन है, जिससे कोई भी आत्मा किसी को दोष नहीं दे सकती है, कोई भी आत्मा कर्म के बिना रह नहीं सकती और कोई भी कर्म बिना कर्म-फल के होता नहीं है अर्थात् हर आत्मा को अपने कर्म का फल अवश्य मिलता है। इसलिए लौकिक गीता में भी लिखा है - हे अर्जुन तू कर्म कर, फल की चिन्ता मत कर। विश्व-नाटक के अनादि नियमानुसार हर आत्मा कर्म करने के लिए और कर्मानुसार कर्मफल भोगने के लिए बाध्य है अर्थात् हर आत्मा को कर्म करना ही पड़ता है और कर्म का फल भोगना ही पड़ता है। इस कर्म, कर्म-फल और फिर कर्म के आधार पर ही ये विश्व नाटक आदि से अन्त तक सफलता पूर्वक चलता है।

विश्व-नाटक में कर्म का अटल विधि-विधान नूँधा हुआ है। कर्म और फल का ये विधि-विधान स्व-चालित है अर्थात् कोई कर्म का फल देता नहीं है, हर आत्मा को अपने कर्मानुसार स्वत: मिलता है। परमात्मा कर्म के विधि-विधान का ज्ञाता है और वह विधि-विधान हमको आकर बताता है, उस विधि-विधान को जानकर जो जैसा कर्म करता है, वह उसका फल पाता है। फल देने में परमात्मा का कोई हाथ नहीं है अर्थात् वह चाहे तो किसी को उसके कर्म का अच्छा या बुरा फल दे या न चाहे तो न दे, ऐसा नहीं है। हर आत्मा को फल स्वत: मिलता है। कर्म के विधि-विधान का ज्ञान देना परमात्मा का पार्ट है, जिसके अनुसार वह अपने निश्चित समय पर आकर इस विश्व-नाटक और कर्म के विधि-विधान का राज़ समझाता है। इस विश्व-नाटक और कर्म की गहन गति को समझना मनुष्य की शक्ति से परे है परन्तु ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण, कल्याणकारी है और कर्म का विधान पूर्ण न्यायपूर्ण है। जो आत्मा अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर इस विश्व-नाटक को देखता और पार्ट बजाता है, वह इसकी न्यायपूर्णता और परम सुख को अनुभव करता है। कर्म के विधि-विधान के सम्बन्ध में जो यहाँ लिख रहे हैं, ये तो नाम-मात्र या अंश-मात्र ही है। कर्म का विधि-विधान तो अति गुह्य है, जो यथार्थ रूप में परमात्मा ही जानता है। समय-समय पर बाबा के द्वारा कर्म के सम्बन्ध में कुछ विधि-विधानों, नियम-सिद्धान्तों के विषय में महावाक्य उच्चारे गये हैं, उनके आधार पर कुछ का उल्लेख यहाँ किया गया है।

"बाप कर्मों की गुह्य गति बैठ समझाते हैं। ... मैं तुम बच्चों को राजयोग सिखाता हूँ। ... मैं सभी आत्माओं का बाप हूँ, पढ़ाता भी आत्माओं को हूँ। इसको कहा जाता है स्प्रीचुअल फादर। ... आत्मा को कर्मों अनुसार ही रोगी-निरोगी शरीर आदि मिलता है।"

सा.बाबा 5.10.04

* ये विश्व-नाटक एक कर्मक्षेत्र है, यहाँ कोई भी आत्मा स्थूल या सूक्ष्म कर्म अर्थात् पार्ट के बिना रह नहीं सकती और कोई भी कर्म फलहीन नहीं होता। जो आत्मा जैसा कर्म करती, उस अनुरूप उसका फल अवश्य भोगती है। गायन है - "तुलसी ये तन खेत है, मन्सा भया किसान। पाप-पुण्य दो बीज हैं, जो जस बुवै सो तस लुनै निदान।" इस कर्मक्षेत्र पर आत्मायें कर्म करने और उनका फल भोगने के लिए ही अवतरित होती हैं। इसीलिए तुलसीदास ने कहा है - कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस कीन्ह तासु फल चाखा।

* हर आत्मा के अपने कर्म ही उसके सुख-दुख का मूल कारण हैं, दूसरे व्यक्ति तो ड्रामा अनुसार केवल निमित्त कारण बनते हैं। इसीलिए लौकिक गीता में भी कहा है - जीवात्मा अपना आपही मित्र है और आपही अपना शत्रु है।

*कर्म एक दर्पण है, जिसमें कर्ता आत्मा की अन्तर्भावना प्रतिबिम्बित होती है और जो उसकी वंश परम्परा को भी प्रदर्शित करता है एवं भूतकाल और भविष्य के संस्कार-स्वभाव का भी साक्षात्कार कराता है। इसलिए हर आत्मा को कर्म के विधि-विधान और सिद्धान्त को समझकर कर्म करना चाहिए, जिससे उसका फल सुखमय हो।

* साधारण रूप से देखें तो जो कर्म दिल को खाता है वह विकर्म होता है, उसको करने से आत्मा को सदा बचना चाहिए।

* कर्म के विधि-विधान अनुसार पाप कर्म और गलत कर्म करने वाले की सुरक्षा करना या उसके दण्ड से बचाने का प्रयत्न करने वाला भी उस पाप कर्म में भागी होता है। इसी तरह से श्रेष्ठ कर्म करने और श्रेष्ठ कर्म की प्रेरणा देने वाले को भी उस श्रेष्ठ कर्म के फल में हिस्सा मिलता है।

* पाप कर्म करने वाले को साधन-सम्पत्ति या राय-सलाह के द्वारा पाप कर्म करने में सहयोग करने वाले पर भी पाप-कर्म का बोझ चढ़ता है, वह भी उसमें भागीदार बनता है।

* हर चेतन्य प्राणी में मन-बुद्धि-संस्कार है और वह अपनी श्रेणी अनुसार कर्म करता है और उसके कर्म अनुसार ही उसको फल मिलता है और उसके आधार पर उसका जन्म-पुनर्जन्म होता है। सभी चेतन्य प्राणी अपने कर्मानुसार अपनी योनि में ही सुखी-दुखी होते हैं अर्थात् किसी भी योनि की आत्मा अकारण न दुख पा सकती और न सुख पा सकती।

* मन्सा-वाचा-कर्मणा आत्मा जो भी कर्म करती, जिससे व्यक्ति सीधा प्रभावित होते हैं, वातावरण प्रभावित होता है, जिससे वर्तमान में या भविष्य में आत्मायें प्रभावित होती अर्थात् सुख-दुख पाते, उसका फल कर्ता आत्मा को सुख या दुख के रूप में अवश्य मिलता है। भल फल के निर्णय में कर्म के स्वरूप से कर्ता की भावना प्रधान होती है। पेड़ लगाने, अस्पताल,

धर्मशाला आदि बनाने से अच्छा फल और फेक्टरी के दूषित धुयें, बारूद के धुयें, गैस आदि से वातावरण को दूषित करने से भी कर्ता को उसका फल अवश्य भोगना पड़ता है और सामूहिक रूप में उसका लाभ उठाने वालों को सामूहिक रूप में दुख भोगना पड़ता है।

आत्मायें जो सामूहिक रूप से भोगना भोग रही हैं, उसके भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष कारण अवश्य हैं क्योंकि बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता है और बिना कर्म के किसी आत्मा को कोई दुख नहीं मिल सकता है। ऐसे ही जो सामूहिक रूप से जो हम अच्छे कर्म करते हैं, जिससे वातावरण शुद्ध होता है, उसका फल भी सामूहिक रूप में मिलता है। जैसे अभी हम सामूहिक रूप से योग करते हैं, जिससे वातावरण शुद्ध होता है, उसका फल सतयुग में सतोप्रधान सुखदायी प्रकृति के रूप में मिलता है। भक्ति मार्ग में यज्ञ आदि का विधि-विधान भी इसी सत्य प्रतीक है।

* देश, समाज, संगठन के द्वारा कोई अनुचित या अन्यायपूर्ण किये गये कर्मों में उस देश या संगठन के लोगों के द्वारा खुशी प्रगट करना, सहमति देना भी सामूहिक कर्म हो जाता है और उसका सामूहिक फल सबको अवश्य ही भोगना पड़ता है।

* इस जगत में कर्म का अटल सिद्धान्त लागू है, जो स्वत: प्रभावित है, जिसके अनुसार हर आत्मा को अपने कर्म का फल स्वत: मिलता है। परमात्मा कर्म की गुह्य गति का पूर्ण ज्ञाता है। परमात्मा ही आकर कर्म की गुह्य गति का ज्ञान आत्माओं को देता है और श्रेष्ठ कर्मों का रास्ता बताता है, जिस पर चलकर आत्मा सुख-शान्ति पाती है। परमात्मा का फल को देने में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। फल तो विश्व-नाटक के विधि-विधान अनुसार स्वत: मिलता ही है।

* किसी के द्वारा किये गये पाप कर्म को अच्छा समझकर स्वीकार करने वाले या ऐसे कर्म के कर्ता की महिमा करने वाले पर भी उस पाप कर्म का प्रभाव पड़ता है और उसको भी उसका फल मिलता है।

* दुखी, अशान्त होना भी एक विकर्म है क्योंकि इससे देहाभिमान और दुख के वायब्रेशन प्रवाहित होते हैं, जो उस अनुरूप वातावरण का निर्माण करते हैं, जो अन्य आत्माओं को भी उस अनुरूप प्रभावित करता है अर्थात् दुख-अशान्ति की अनुभूति कराता हैं अर्थात् दुखी-अशान्त बनाता है। इसलिए उस आत्मा की दुख-अशान्ति और बढ़ती जाती है। इसलिए बाबा हमको सदा श्रीमत देते हैं - बच्चे, सदा खुश रहो तो तुमको देखकर और भी खुश होंगे, उनकी दुआयें भी तुमको मिलेंगी।

"श्रेष्ठ संकल्प से वायुमण्डल शुद्ध होता है, तो व्यर्थ से दूषित होता है, जिसका बोझा आत्मा पर चढ़ जाता है।" अ.बापदादा 5.7.74

* ये सृष्टि-चक्र भूत-वर्तमान-भविष्य के घटनाचक्र पर सतत गतिशील है। हर आत्मा का वर्तमान, भूतकाल के कर्म का फल और भविष्य का बीज या आधार-शिला है। वर्तमान ही हमारे हाथों में है। इसीलिए गायन है - बीती को चितवो नहीं, आगे की धरो न आश ... अर्थात् वर्तमान ही हमारे हाथों में है, जब हम श्रेष्ठ कर्म करके अपने सुखमय भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। भूतकाल के चिन्तन और भविष्य की चिन्ता से आत्मिक शक्ति का ह्रास होता है।
* आत्माभिमानी स्थिति में किये गये कर्म अकर्म (सूक्ष्म ह्रास), देहाभिमानी स्थिति में किये गये कर्म विकर्म (आत्मिक शक्ति का तीव्रता से ह्रास) और आत्माभिमानी-परमात्माभिमानी स्थिति में रहकर किये गये कर्म ही सुकर्म (आत्मिक शक्ति का विकास) होते हैं, जो आत्मा की चढ़ती कला एकमात्र आधार हैं। ये ज्ञान ज्ञान-सागर परमात्मा पुरुषोत्तम संगमयुग में ही देते हैं, तब ही आत्मा की और तत्वों सहित समस्त विश्व की चढ़ती कला होती है।
* जो जैसा कर्म करता है, वह उसका वैसा फल अवश्य ही पाता है। भगवानोवाच्य - दुख देंगे तो दुख पायेंगे, सुख देंगे तो सुख पायेंगे।
* हर कर्म कर्ता के संकल्प और भावना से प्रेरित होता है और उसके आधार पर ही उस कर्म का फल निर्धारित होता है। भक्ति में एक का एक गुणा, ज्ञान में एक का सौगुणा अर्थात् ज्ञान से कर्म का फल कई गुणा बढ़ जाता है। कर्म का ये सिद्धान्त सुकर्म और विकर्म दोनों में लागू होता है। इसलिए बाबा कहते हैं - धर्मराज की ट्रिबुनल ब्राह्मणों के लिए ही बैठती है क्योंकि परमात्मा ने उनको ज्ञान दिया फिर भी उन्होंने विकर्म किये।

"गरीब का भावना से दिया गया एक पैसे का फल भी साहूकार के एक हजार रुपये के बराबर हो सकता है ... कोई तो दो पैसा भी देते हैं, बाबा हमारी एक ईट लगा दो, कोई हजार भेज देते हैं। भावना तो दोनों की एक है ना, तो दोनों को बराबर मिल जाता है।"

सा.बाबा 30.11.69 रिवा.

"इस समय ऐसे नहीं कि तुमको धन से साहूकार बनना है। नहीं, बाबा ने समझाया है गरीब की एक पाई, साहूकार का एक रुपया समान है। दोनों को वर्सा समान ही मिलता है।... तुम माँ-बाप को पूरा फॉलो करो। जैसे मम्मा-बाबा पुरुषार्थ कर ऊंच पद पाते हैं, वैसे तुमको भी पाना है।"

सा.बाबा 14.12.06 रिवा.

* बिना कारण के कोई कार्य नहीं हो सकता। इसलिए बिना जाने मन्सा-वाचा किसी के सम्बन्ध में कोई गलत निर्णय करने से भी आत्मा का पाप का खाता बढ़ता है। इसलिए ड्रामा की अटल भावी और "जीवात्मा अपना आपेही मित्र है और आपेही अपना शत्रु है" के अटल सत्य सिद्धान्त को जानकर साक्षी होकर हर आत्मा के कर्म को देखो और सर्व के प्रति कल्याण की

भावना रखकर अपना पुण्य का खाता जमा करो। दूसरे के कर्मों का चिन्तन कर, उसके कर्मों के विषय में निर्णय कर अपना समय और शक्ति व्यर्थ न गँवाओ।

* किन्ही व्यक्तियों के मध्य निर्णय में निमित्त आत्मा अंशमात्र भी स्वार्थपरता के वशीभूत निर्णय करता है, जिससे वे दोनो पक्ष प्रभावित होते हैं, उसका हिसाब किताब उसके साथ बनता है और उसका फल उसे अवश्य ही भोगना पड़ता है अर्थात् उनके साथ हिसाब-किताब चुकाना पड़ता है - ये कर्म और फल का अटल सिद्धान्त है।

* समर्थ होकर पाप कर्म का प्रतिरोध न करना भी पाप कर्म है। पाप कर्म या पापी की सराहना करना भी पाप कर्म है। असमर्थ होते भी समय पर या यथा स्थान सत्य को प्रगट न करना भी पाप कर्म है। भक्ति मार्ग में भी इस विषय पर महाभारत में द्रोपदी के चीर हरण के समय का वृतान्त, भीष्म पितामह के सर-शैया के विषय के वृतान्त इस विधि-विधान की सत्यता को स्पष्ट करते हैं, जिससे ये स्पष्ट होता कि दुनिया में भी मनुष्यों की ऐसी भावना और मान्यता है।

* बिना सोचे-विचारे कोई कर्म कर लेना, जिससे किसी आत्मा को दुख हो तो वह भी पाप है और उसका भी दण्ड पश्चाताप के रूप में आत्मा को भोगना ही पड़ता है। भक्ति मार्ग में रामायण के मुख्य पात्र राजा दशरथ और श्रवण कुमार का वृतान्त इसका उदाहरण है, जिससे अनुभव होता कि दुनिया वालों में भी इस तरह की मान्यतायें हैं।

* पाप कर्म से अर्जित धन-सम्पत्ति या साधन का उपभोग भी पाप कर्म है, उससे भी आत्मा का पाप का खाता बढ़ता है और पुण्य का खाता क्षीण होता है।

* यदि हम कोई अच्छा या बुरा कर्म करते हैं और उसे देखकर या सुनकर दूसरे भी करते हैं तो उनके द्वारा किये गये कर्म के फल में भी हम भागीदार बनते हैं।

* कल्प का संगमयुग ही सुकर्म करने का युग है, जो सारे कल्प के भाग्य का आधार है। अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर परमात्मा पिता की याद में किये गये कर्म ही सुकर्म हैं और आत्मा की चढ़ती कला का आधार हैं।

* इस विश्व-नाटक में कर्म के अनादि-अविनाशी, अटल सिद्धान्त के अनुसार हर आत्मा को अपने अच्छे-बुरे कर्म का फल अवश्य मिलता है, इसलिए कभी यह नहीं सोचना है कि जो आज पाप-कर्म कर रहे हैं, वे सुखी हैं और जो अच्छे कर्म कर रहे हैं, वे दुखी है। ये अभिधारणा अल्पज्ञ मनुष्यों की है, परमात्मा ने हमको कर्म और विश्व-नाटक के सारे विधि-विधानों का ज्ञान दिया है, इसलिए हमारी ऐसी अभिधारणा नहीं हो सकती।

* हम दूसरे के लिए अशुभ या बुरा सोचते हैं, हीन भावना रखते तो ये भी पाप-कर्म है और उसका असर हमारे ऊपर भी अवश्य होगा अर्थात् उसके फलस्वरूप दूसरे भी हमारे प्रति बुरा सोचेंगे,

जिससे हमको दुख-अशान्ति की अनुभूति करनी होगी। इस सम्बन्ध में बाबा ने कहा है - गुम्बज में जो आवाज करते हैं, वही प्रतिध्वनित होकर हमारे पास आती है।

"बाप को फॉलो करो। जब विशेष आत्मा समझकर किसको भी देखेंगे, सम्बन्ध-सम्पर्क में आयेंगे तो बाप को सामने रखने से आत्मा में स्वत: ही आत्मिक प्यार इमर्ज हो जाता है ... आत्मिक स्नेह से सदा सभी द्वारा सद्भावना, सहयोग की भावना स्वत: ही आपके प्रति दुआओं के रूप में प्राप्त होगी।" अ.बापदादा 7.3.90

"जैसे आपके दिल में उनके प्रति श्रेष्ठ भावना होती है, वैसे ही आपकी शुभ भावना का रिटर्न दूसरे द्वारा भी प्राप्त होता है। जैसे बाप के प्रति अटूट, अखण्ड, अटल प्यार है, श्रेष्ठ भावना है, निश्चय है, ऐसे ब्राह्मण आत्मायें नम्बरवार होते हुए भी उनके प्रति आत्मिक प्यार अटूट-अखण्ड है?" अ.बापदादा 7.3.90

* विश्व-नाटक में किसी आत्मा को उतना ही उपभोग करने का अधिकार है, जिससे उसकी कार्य क्षमता बढ़ती है, कार्यक्षमता की रक्षा होती है या उसके लिए अति आवश्यक है, उससे अधिक उपभोग पाप के खाते में या व्यर्थ के खाते में ही जमा होता है या उसके संचित खाते को कम करता है, जिसका पश्चाताप रोग-शोक के रूप में मनुष्य को करना ही पड़ता है। दूसरे के संसाधनों का उपयोग-उपभोग भी कर्मों का हिसाब-किताब बनाता है और कर्म-बन्धन का कारण बनता है। बुद्धिमान ज्ञानी पुरुष इस सत्य को जानकर जीवन में इसका अवश्य ध्यान रखते हुए ही हर कर्म करते हैं अर्थात् आवश्यकतानुसार ही साधनों का उपभोग करते हैं।

* कारण के बिना कोई कार्य नहीं होता है परन्तु कारण का चिन्तन न कर एकाग्रता से कार्य में बुद्धि लगाने वाले के कार्य अवश्य ही सफल होते हैं।

* कर्मातीत बनने के बाद कोई भी आत्मा इस कर्मक्षेत्र पर रह नहीं सकती है। कर्मातीत आत्माओं का निवास स्थान परमधाम है।

* परमात्मा पिता से प्रतिज्ञा करके तोड़ना भी परमात्मा और ज्ञान का अपमान करना है, ये भी विकर्म है, जिसका दण्ड पश्चाताप के रूप में आत्मा को भोगना ही पड़ता है।

* तन-मन-धन परमात्मा बाप को समर्पित करके वापस लेना या लेने का संकल्प करना भी विकर्म है, उसका भी दण्ड पश्चाताप के रूप में आत्मा को भोगना पड़ता है। इसके विषय में भक्ति मार्ग के शास्त्रों में अनेक वृतान्त हैं, जिनमें यह स्पष्ट किया गया है कि दान देकर वापस लेना पाप है और आत्मा को उसका दण्ड भोगना पड़ता है।

* सर्वशक्तिवान, दाता-विधाता, सर्वज्ञ परमात्मा का बनकर अल्पज्ञ यथाशक्ति सम्पन्न मनुष्यात्माओं से किसी प्रकार की अपेक्षा रखना, मांगना भी परमात्मा की निन्दा कराना है, उसका दण्ड भी

आत्मा को पश्चाताप के रूप में भोगना पड़ता है क्योंकि ये भी परमात्मा और ज्ञान की निन्दा कराना है। सेवा के लिए प्रेरणा देना अलग बात है परन्तु उसमें भी स्वार्थ भावना रखी तो उसका दण्ड भोगना ही पड़ेगा।

"बेहद के बाप का बनकर फिर पाप किया तो एक का सौगुणा दण्ड हो जायेगा। शिवबाबा कहते हैं - मैं धर्मराज से बहुत कड़ी सजायें दिलवाता हूँ। ... इसमें बड़े कायदे हैं। जज का बच्चा पाप करे तो जज कुछ कर थोड़ेही सकेगा। उसकी सजा भोगनी ही पड़े।"

सा.बाबा 18.10.06 रिवा.

* दूसरों को शिक्षा देना और स्वयं न करना भी एक प्रकार का पाप-कर्म ही है, उसका भी दण्ड पश्चाताप के रूप में आत्मा को भोगना पड़ता है क्योंकि इससे स्वत: सिद्ध होता है कि वह उस कर्म की गति और उसके शुभाशुभ परिणाम को जानता है परन्तु करता नहीं है। इस प्रकार वह अपने को स्वयं ही धोखा देता है। फिर भी किसके कल्याण की भावना से जो शिक्षा देता है, उसका कुछ अच्छा फल भी मिलता है।

"बुरा काम हुआ तो फौरन बताओ, तो आधा माफ हो जायेगा। ऐसे नहीं कि मैं कृपा करूँगा। क्षमा वा कृपा पाई की भी नहीं होगी। सबको अपने आपको सुधारना है। बाप की याद से विकर्म विनाश होंगे और पास्ट का भी योगबल से कटता जायेगा।"

सा.बाबा 5.5.05 रिवा.

* जानकर या अलबेलेपन से यज्ञ की साधन-सम्पत्ति का नुकसान करना भी विकर्म है, उसका भी दण्ड आत्मा को भोगना पड़ता है क्योंकि यज्ञ में जो देते हैं, उनको उसका फल देना पड़ता है तो वह कौन और कहाँ से दिया जायेगा, जब वह सम्पत्ति नुकसान हो गयी और देने वाले ने जिस भावना से दिया, उस अनुसार उसका उपयोग भी नहीं हुआ। तो ये सब फल नुकसान करने वाले के खाते में ही जाता है।

* यज्ञ के Behalf पर किसी व्यक्ति से व्यक्तिगत लाभ उठाना भी यज्ञ की चोरी है और उसका भी दण्ड पश्चाताप के रूप में आत्मा को भोगना ही पड़ता है।

* बाबा के महावाक्यों के अनुसार हम जो पुरुषार्थ कर सकते हैं और वह नहीं करते तो यह भी एक प्रकार से अलबेलेपन से किया गया विकर्म है और विकर्म के खाते में जमा होता है और उसका दण्ड भी आत्मा को पश्चाताप के रूप में भोगना पड़ता है।

* निश्चय हो कि हम अपने कर्म के लिए स्वयं ही उत्तरदायी हैं। हमारा ही कर्म हमारे लिए सुख और दुख का मूल कारण है और सभी तो निमित्त कारण हैं तब कर्मों पर ध्यान रहेगा और उनमें अवश्य ही सुधार होगा। दुनिया में प्रचलित गीता में भी इस विषय में स्पष्ट लिखा है -

जीवात्मा अपना आप ही मित्र है और आप ही अपना शत्रु है। इसलिए अपने कर्म के दूसरे को दोषी ठहराना विकर्म है और उससे हमारा जमा का खाता कम होता है।

* ये पुरुषोत्तम संगम युग ही सुकर्म करने का युग है, जिससे चढ़ती कला होती है। और तो सभी युगों में देहाभिमान वश विकर्म ही होते हैं, जिससे उतरती कला होती है। भले सतयुग-त्रेता में विकर्म नहीं कहा जाता है क्योंकि देहाभिमान, आत्माभिमान से दबा रहता है परन्तु वहाँ के कर्मों को भी सुकर्म नहीं कहा जा सकता है। वहाँ भी आत्मा की उतरती कला ही होती है।

* विश्व-नाटक के विधि-विधान के अनुसार सर्व जीवात्मायें पृथ्वी-पुत्र हैं और प्रकृति उनकी पालना करती है। कोई भी मनुष्य किसी निरीह प्राणी को दुख देता है, उनको मारता है, उनको मारकर खाता है तो उनको प्रकृति से उस कर्म के फलस्वरूप दुख अवश्य भोगना पड़ता है। जैसे राजा समर्थ होता है, प्रजा की रक्षा करना राजा का धर्म है, ऐसे ही प्रकृति उन प्राणियों को पालती है। जो ऐसे निरीह प्राणियों को दुख देते हैं, उसके बदले उनको अर्थात मारने वालों को प्रकृति दण्ड अवश्य देती है।

* ड्रमा अनुसार कोई भी कर्म फल के बिना नहीं होता अर्थात् हर कर्म का फल अवश्य होता है और कोई भी फल कर्म के बिना नहीं मिलता अर्थात् किसी भी आत्मा को कोई भी अच्छा या बुरा फल मिल रहा है, वह उसके पूर्व कर्मों का परिणाम है। इसलिए किसी की प्राप्तियों से न ईर्ष्या हो, न घृणा हो और न आलोचना हो। ये भी एक प्रकार से विकर्म हो जाता है। इस सत्य को जानकर श्रेष्ठ कर्म करने का पुरुषार्थ ही श्रेष्ठ फल की आधार शिला है। ईर्ष्या-द्वेष से, फल की इच्छा करने से फल नहीं मिलेगा, कर्म करने से ही फल मिलेगा। इसलिए बुद्धिमान, ज्ञानवान आत्मायें सदा अपने को देखते हैं और अपने कर्मों पर ध्यान रखते हैं।

* ड्रामा की अनादि-अविनाशी नूँध और कर्म का विधान इस विश्व-नाटक रूपी गाड़ी के दो पहिये हैं, जो साथ-साथ चलते हैं। हर कर्म से आत्मा के आत्माओं के साथ के हिसाब-किताब पूरे भी होते हैं तो नये बनते भी हैं। कल्पान्त में जन्म-जन्मान्तर के हिसाब-किताब चुक्ता करके आत्मायें घर जाती हैं। इसलिए अभी सभी आत्माओं को अपने सर्व विकर्मों के हिसाब-किताब पूरे करने हैं और श्रेष्ठ कर्म करके सतयुग के लिए सुखदायी हिसाब-किताब बनाने हैं। कर्म के विधि-विधान को जानने वाली ज्ञानी आत्मा को कब किसके पार्ट, हिसाब-किताब, सुख-दुख को देखकर आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए और किसी घटना को देखकर अपने संकल्प को व्यर्थ नहीं करना चाहिए। किसके कर्म को देखकर किसके प्रति घृणा-राग-द्वेष की भावना भी नहीं होना चाहिए क्योंकि भावना से भी आत्मा का आत्माओं के साथ हिसाब-किताब बन जाता है।

* अबोध व्यक्ति के द्वारा किये गये कर्म से जानकार व्यक्ति के द्वारा किये गये कर्म का फल

कई गुणा अधिक होता है। ज्ञानी आत्मा को साधारण मनुष्य की अपेक्षा अच्छे कर्म का सौगुणा फल भी मिलता है तो विकर्म का सौगुणा दण्ड भी मिलता है।

* ईर्ष्या-द्वेष एक मानसिक विकर्म है, जिसका फल आत्मा को मानसिक दुख-अशान्ति के रूप में भोगना ही पड़ता है। यदि कोई ईर्ष्या-द्वेष की भावना से यज्ञ का हित समझकर भी किसी आत्मा के साथ व्यवहार करता है तो भी उसको अपनी ईर्ष्या-द्वेष का फल मानसिक दुख-अशान्ति के रूप में भोगना ही पड़ता है, भले उसने यज्ञ के हित के लिए जो कार्य किया, उसका अच्छा फल भी उसको मिलेगा।

इस विश्व-नाटक और कर्म की गहन गति को समझना मनुष्य की शक्ति से परे है परन्तु ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण, कल्याणकारी है और कर्म का विधान अटल और न्यायपूर्ण है। जो आत्मा अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर इस विश्व-नाटक को देखता और पार्ट बजाता है, उसका मन-बुद्धि श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त रहती, इसलिए वह इसके परम सुख को अनुभव करता है।

ये तो नाम-मात्र या अंश-मात्र ही कर्म के विधि-विधान की बातें हैं, कर्म का विधि-विधान तो अति गुह्य है, जो परमात्मा ही जानता है।

"जो विकर्म किये हैं, उनकी सजा कर्मभोग के रूप में भोगनी ही पड़ती है। कर्मभोग अन्त तक भोगना ही है, उसमें माफी नहीं मिल सकती है। ड्रामा अनुसार सब होता है। क्षमा आदि होती ही नहीं। सब हिसाब-किताब चुक्तू करना ही है।" सा.बाबा 25.6.05 रिवा.

"यह निश्चित है कि यह कार्य हुआ ही पड़ा है। सिर्फ कर्म और फल के, पुरुषार्थ और प्रालब्ध के, निमित्त और निर्माण के, कर्म फिलॉसाफी के, अनुसार निमित्त बन कार्य कर रहे हैं। भावी अटल है लेकिन सिर्फ आप श्रेष्ठ भावना द्वारा, भावना का फल अविनाशी प्राप्त करने के निमित्त बने हुए हैं।" अ.बापदादा 20.1.86

"निमित्त बनने वाले का एक सेकेण्ड में एक का पद्मगुणा बनना भी है, प्राप्ति का चान्स है और अगर निमित्त बने हुए कोई ऐसा कर्म करते हैं, जिसको देख और सभी विचलित हों, तो उसका पद्मगुणा उल्टी प्राप्ति भी होती है।" अ.बापदादा 16.1.77

"यह सब ड्रामा में नूँध है, फिकर की कोई बात नहीं है। नहीं तो स्थापना कैसे होगी। दूसरी बात यह भी है कि जो करेगा, वह पायेगा।... किसको दान नहीं करेंगे तो फल भी कैसे मिलेगा।... किसी न किसी को सन्देश सुनाकर फिर भोजन खाना चाहिए।"

सा.बाबा 18.5.05 रिवा.

"पाप और पुण्य की गहन गति को जानो। ... संकल्प द्वारा भी पाप होता है। संकल्प के पाप

का भी प्रत्यक्षफल प्राप्त होता है। संकल्प में स्वयं की कमजोरी, किसी भी विकार का, पाप के खाते में जमा होती है।" अ.बापदादा 3.12.78

"अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाना है क्योंकि यह कर्म-क्षेत्र है, कर्म-भूमि है, इसमें जो बोयेंगे सो पायेंगे। यह भी इसका नियम है। बाप कहते हैं - इस लॉ को तो मैं भी ब्रेक नहीं कर सकता हूँ भल मैं वर्ल्ड ऑलमाइटी अथॉरिटी हूँ।" मातेश्वरी 24.6.65

"बाप रास्ता बताते हैं। अपने ऊपर आपही कृपा, रहम करना है। टीचर तो पढ़ाते हैं, आशीर्वाद तो नहीं करेंगे। आशीर्वाद, कृपा, रहम आदि माँगने से मरना भला। कोई से पैसा भी नहीं माँगना चाहिए। बच्चों को सख्त मना है। कोई से पैसा मांगना, यह भी पाप है। बाप कहते हैं ड्रामा अनुसार, जिन्होंने कल्प पहले बीज बोया है, वर्सा पाया है, वे आप ही करेंगे। कोई भी काम के लिए मांगो नहीं। न करेगा तो न पायेगा। ... जिसको करना होगा, वह आप ही करेगा। तुमको माँगना नहीं है। कल्प पहले जितना जिन्होंने किया है, ड्रामा उनसे करायेगा। मांगने की क्या दरकार है। कई बुद्धू बच्चियाँ हैं, जो मांगती हैं। बाबा तो हुण्डी भरते रहते हैं सर्विस के लिए।" सा.बाबा 29.10.69 रिवा.

"बाप को याद करने से थक जाते हैं तो विकर्म विनाश भी नहीं होंगे। विकर्म रह जायेंगे तो फिर सजा खानी पड़ेगी, पद भी कम हो जायेगा। दिन प्रतिदिन इनका भी बहुतों को साक्षात्कार होता रहेगा। बाप को किसी भी बात का ख्याल नहीं रहता है। जानते हैं यह तो ड्रामा है।" सा.बाबा 26.11.69 रिवा.

"जब कुछ ऐसी बात हो जाती है तो मनुष्य पिछाड़ी में कह देते हैं जो ईश्वर की इच्छा। अब तुम थोड़ेही ऐसे कहेंगे। तुम कहेंगे - भावी ड्रामा की। तुम ईश्वर की भावी नहीं कहेंगे। ईश्वर का भी ड्रामा में पार्ट है। यह सृष्टि चक्र कैसे फिरता है - यह बाप ही समझा सकते हैं। नॉलेजफुल भी बाप है। मनुष्य समझते हैं कि वह सभी के दिलों को जानते होंगे। परन्तु हम जो पाप कर्म करते हैं, उसका दण्ड तो जरूर हमको ही मिलेगा ना। बाप थोड़ेही बैठ दण्ड देगा। यह तो ऑटोमेटिक ड्रामा बना हुआ है, जो चलता ही रहता है।" सा.बाबा 19.2.69 रिवा.

"कोई पाई-पाई जमा करते हैं तो लाख हो जाता है। तो पाई की चोरी भी लाखों की हो जाती है। सभी कायदे बाप समझा देते हैं। ईश्वर का राइट हेण्ड है धर्मराज। यह हिसाब-किताब ऑटोमेटिकली चलता रहता है। जो जैसा कर्म करते हैं, वह भोगते हैं। ड्रामा में नूँध है।" सा.बाबा 14.12.69 रिवा.

"63 जन्मों के हिसाब-किताब यहाँ ही चुक्तू होने हैं। अपने पिछले संस्कार, स्वभाव बाहर

इमर्ज हो सदा के लिए समाप्त हो रहे हैं - इस कर्मों की गुह्य गति को न जान घबरा जाते हैं। ... याद रखो - सच्चे बाप को अपने जीवन की नैया दे दी तो सत्य के साथ की नाँव हिलेगी लेकिन डूब नहीं सकती।" अ.बापदादा 3.5.77

"हिम्मते बच्चे मदद दे खुदा" - इस राज़ को भूल जाते हैं। यह एक ड्रामा की गुह्य कर्मों की गति है। अगर यह विधि और विधान नहीं होता तो सभी विश्व के पहले राजा बन जाते। ... नम्बरवार बनने का विधान इस विधि के कारण ही बनता है। ... निमित्त मात्र यह विधान ड्रामा में नूँधा हुआ है।" अ.बापदादा 22.11.87

"अगर किसी की कोई बुराई चित्त पर है तो उसका चित्त सदा प्रसन्नचित्त नहीं रह सकता और चित्त पर धारण की हुई बातें वाणी में जरूर आयेंगी। ... लेकिन कर्मों की गति का गुह्य रहस्य सदा सामने रखो। ... कर्मों का यह पक्का नियम है अथवा कर्मों की फिलॉसाफी है कि आज आपने किसकी ग्लानि की तो आपकी कल कोई दुगुनी ग्लानि करेगा। ... तो कर्मों की गति क्या हुई ? बुराई लौटकर कहाँ आई ?" अ.बापदादा 21.11.92

"फौरन फल नहीं निकलता है तो अधीर्य नहीं होना है कि फल तो निकलता ही नहीं। सभी फल फौरन नहीं मिलते हैं। कोई-कोई बीज फल तब देता है जब नेचुरल वर्षा होती है। पानी देने से भी नहीं निकलता है। यह भी ड्रामा की नूँध है। ... कोई नेचुरल केलेमिटीज होंगी, जब ड्रामा का सीन बदलने वाला होगा तो वह नेचुरल वायुमण्डल, वातावरण उस बीज का फल निकालेगी।" अ.बापदादा 11.7.71

"देवताओं को वहाँ पता थोड़ेही रहता है कि हमने यह राज्य कैसे पाया ? ... ये बड़ी समझने की गुह्य बातें हैं। समझदार ही समझें। बाकी जो बूढ़ी मातायें हैं, उनमें इतनी बुद्धि तो है नहीं। यह भी ड्रामा प्लेन अनुसार हर एक का अपना पार्ट है। ऐसे तो नहीं कहेंगे - हे ईश्वर बुद्धि दो। हम सबको एक जैसी बुद्धि दें तो सब नारायण बन जायें।" सा.बाबा 18.9.04 रिवा.

"दुनिया में रिकार्ड रखने के कई साधन हैं। बाप के पास साइन्स के साधनों से भी रिफाइन साधन हैं, जो स्वत: ही कार्य करते रहते हैं। ... अव्यक्त वतन के साधन प्रकृति से परे हैं, इसलिए वे परिवर्तन में नहीं आते हैं। ... बापदादा याद और सेवा दोनों का ही रिकार्ड देखते हैं।" अ.बापदादा 20.2.88

"बाप आकर समझाते हैं कि यह ड्रामा बना-बनाया है परन्तुकिस नियम से बना हुआ है, वह समझने की बात है। ... हमको अपना आधार अपने कर्म के ऊपर रखना है। ... इसमें बाप को भी आकर कर्म करना पड़ता है। बाप भी कहते हैं - मैं भी इसमें बांधा हुआ हूँ, मुझे भी नई दुनिया रचने के लिए काम करना पड़ता है। ... इसी तरह हम भी अपने कर्म करने में बंधे हुए

हैं। इसलिए किसी बात में मूंझने के बजाये, अपने कर्मों को स्वच्छ बनाना है।"

मातेश्वरी 23.4.65

"बाकी यह तो जानते हैं कि यह ड्रामा है, यह खेल है, आदि से अन्त तक कैसे चलता है, उसकी जो नॉलेज है, उसको समझना है। ... गीता में भी है - जीवात्मा अपना आपही मित्र है, आपही अपना शत्रु है। इसलिए हमको पुरुषार्थ तो करना ही है। पहले पुरुषार्थ पीछे प्रालब्ध। जो करेंगे सो पायेंगे।"

मातेश्वरी 23.4.65

"भल कहेंगे ड्रामा अनुसार ही हम गिरे और ड्रामा अनुसार ही हम चढ़ेगे परन्तु ड्रामा में भी कोई नियम है, तो उन नियमों को भी समझना है। ... जब हमने अपने कर्म उल्टे बनाये तभी हम गिरे, अब हम ऊंचा उठेंगे भी कर्म से। ... अगर नहीं करेंगे तो समझा जायेगा कि इनका ड्रामा में पार्ट नहीं है।"

मातेश्वरी 23.4.65

"समझो हम पूरा अटेन्शन से मोटर चलाते हैं, परन्तु उसके आगे अचानक कोई बच्चा आ गया और वह कट गया तो इसको क्या कहेंगे ? जरूर उसका कोई अगले जन्मका हिसाब रहा हुआ होगा। ... हमने कभी किसको दुख दिया है तो फिर हमको दूसरे जन्म में उससे लेना है। यह है कर्मों के लेन-देन का हिसाब।"

मातेश्वरी 23.4.65

"एक होता है जान-बूझ कर किसका खून करना, एक होता है अन्जाने में हो जाना। ... अचानक हमारी मोटर से कोई बच्चा मर गया, इसको क्या कहेंगे ? ड्रामा में पिछले कर्मों का कोई हिसाब-किताब था। अब उसके लिए जितना हम अच्छा कर सकते हैं या जितना हमारे से बन सके, सो हम करें।"

मातेश्वरी 23.4.65

"अपने कर्मों पर खबरदारी रखना है। कोई भी पाप कर्म न करना है।... अगर अपने घाटे और फायदे का पोतामेल न रखेंगे तो फेल हो जायेंगे। माया ऐसी है जो बहुतों को फेल कर देगी। युद्ध है ना। ... जो कर्म दिल को खाता हो, उसे छोड़ते जाओ।"

सा.बाबा 3.8.68

"दान भी पात्र को देना चाहिए। पापात्मा को देने से फिर देने वाले पर भी असर हो जाता है। वह भी पापात्मा बन जाता है। ऐसे को कब नहीं देना चाहिए, जो जाकर उस पैसे से कोई पाप करे।"

सा.बाबा 14.8.69 रिवा.

* जीवात्मा अपना आप ही मित्र है और आप ही अपना शत्रु है अर्थात् हर आत्मा को अपने ही कर्म का फल सुख या दुख के रूप में मिलता है। श्रेष्ठ कर्म से मित्र बनती है और पाप कर्म से शत्रु बनती है। सुख और दुख दोनों में ही दूसरे तो केवल निमित्त कारण होते हैं, मूल कारण तो अपने ही पूर्व कर्म होते हैं।

* अज्ञानवश किये गये कर्म के फल और जानकर किये गये कर्म के फल में महान अन्तर होता है।

"अगर बाप (परमात्मा) का बनकर कोई पाप कर्म किया तो सौगुणा दण्ड पड़ जायेगा।"

सा.बाबा 3.10.97 रिवा.

"बुरा कर्म करने से सौगुणा दण्ड हो जाता है। ज्ञान नहीं तो एक पाप का एक दण्ड। ज्ञान में आने के बाद फिर ऐसे कोई विकर्म करते हैं तो सौगुणा पाप लगता है।"

सा.बाबा 24.11.69 रिवा.

इस सम्बन्ध में कर्म के विधि-विधान के ज्ञाता परमात्मा के महावाक्य हैं - ट्रिबुनल ब्राह्मण बच्चों के लिए बैठेगी, अज्ञानी आत्माओं के लिए नहीं।

"अन्य आत्माओं के प्रति संकल्प में भी किसी विकार के वशीभूत वृत्ति है तो यह भी महापाप है। किसी अन्य आत्माओं के प्रति व्यर्थ बोल भी पाप के खाते में जमा होता है।"

अ.बापदादा

"जो विकर्म किये हैं, उनकी सजा कर्मभोग के रूप में भोगनी ही पड़ती है। कर्मभोग अन्त तक भोगना ही है, उसमें माफी नहीं मिल सकती है। ड्रामा अनुसार सब होता है। क्षमा आदि होती ही नहीं। सब हिसाब-किताब चुक्तू करना ही है।" सा.बाबा 25.6.05 रिवा.

"कर्म और कर्म के फल के बन्धन में फंसने के कारण कर्म-बन्धनी आत्मा अपनी ऊंची स्टेज को पा नहीं सकती है। ...ज्ञानस्वरुप होने के बाद वा मास्टर नॉलेजफुल, मास्टर सर्वशक्तिवान होने के बाद अगर कोई ऐसा कर्म जो योगयुक्त नहीं है वह कर लेते हो, तो इस कर्म का बन्धन अज्ञान काल के कर्मबन्धन से पदमागुणा ज्यादा है। ... इसलिए इसमें भी अन्जान नहीं रहना है कि यह छोटी-छोटी गल्तियां हैं। यह तो होंगी ही।" अ.बापदादा 20.5.72

कर्म पर निश्चय माना - हमको जो सुख या दुख मिल रहा है, वह हमारे ही पूर्व कर्मों का परिणाम है, दूसरा कोई व्यक्ति कारण नहीं है और भविष्य में जो मिलेगा वह भी हमारे ही संचित या वर्तमान में किये गये कर्मों का परिणाम होगा, इसलिए किसी व्यक्ति को दोष देने के बजाये अपने कर्म का सुधार करना ही हमारे लिए कृत्य है और हितकर है।

* अपने मूल स्वरूप में स्थित आत्मा में कृत्य का संकल्प स्वत: उत्पन्न होता है, उसकी शुभ कर्म में अभिरुचि और अशुभ में अरुचि स्वभाविक होती है इसलिए कोई चिन्ता न करके वर्तमान में अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित हो परमात्म-स्मृति में रहना ही आत्मा का परम कर्तव्य है।

* संकल्प भी एक कर्म है और उससे भी आत्मा प्रभावित होती है, उसका भी फल आत्मा को

भोगना होता है। संकल्पों का प्रभाव एक दिशाई भी होता है और चहुँ दिशाई भी होता है, जिसको बाबा ने सर्च लाइट और लाइट हाउस से तुलना की है।

* जो जिसका चिन्तन करता है, वह वैसा बन जाता है। निराकार बाप को याद करने से निराकारी और अव्यक्त फरिश्ता रूप को याद करने से अव्यक्त फरिश्ता बन जाते हैं।

* कर्मातीत बनने के बाद कोई आत्मा इस कर्मक्षेत्र पर रह नहीं सकती है।

* लक्ष्य, भावना और कर्म के आधार पर जीवन की दिशा निश्चित होती है और उस अनुसार ही आत्मा को सुख-दुख का अनुभव होता है।

* आत्म-स्थिति में स्थित आत्मा को परमात्मा की याद सहज रहती है और उसको कर्म में थकावट नहीं होती है क्योंकि उसके संकल्प सीमित और समर्थ रहते हैं। देहाभिमानी आत्मा के संकल्प व्यर्थ और अधिक होते, जिससे आत्मिक शक्ति अधिक क्षीण होती है, जिससे थकावट अधिक होती है।

* कृत्य-अकृत्य, पुण्य-पाप के निर्णय की आवाज़ अन्तर-आत्मा स्वयं ही करती है, उस आवाज़ को सुनकर आत्मिक शक्ति सम्पन्न आत्मा कर्म श्रेष्ठ करती हैं और जिसमें आत्मिक शक्ति की कमी होती है, वह अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ सुनते हुए भी उसको करने में समर्थ नहीं होती है, जिससे उसके कर्म खराब होते हैं। आत्मा की ये आवाज़ और उस आवाज़ के आधार पर किये गये कर्मों का प्रभाव स्थूल प्रकृति तथा अन्य आत्माओं पर भी होता है और उसके आधार पर उस आत्मा को प्रकृति द्वारा फल प्राप्त होता है।

मनुष्य के द्वारा किये गये अच्छे-बुरे कर्म से किसी भी योनि की आत्मा को जो सुख या दुख मिलता है, उसके परिणाम स्वरूप उन आत्माओं में जो संकल्प उत्पन्न होते हैं, वे उस आत्मा के ऊपर दुआ या श्राप का काम करते हैं अर्थात उन प्राणियों की वे भावनायें उस मनुष्य को अवश्य प्रभावित करती हैं।

हमारे श्रेष्ठ कर्मों को देखकर दूसरों की हमारे प्रति जो शुभाशुभ भावनायें उठती हैं, वे भावनायें हमारे लिए दुआ या श्राप बन जाती हैं अर्थात् वे हमारे सुख-दुख का आधार बनती हैं।

* कोई भी आत्मा, जिसने विकर्म नहीं किया है, उसको दुख-अशान्ति हो नहीं सकती और विकर्म का फल दुख-अशान्ति के रूप में हर आत्मा को भोगना ही पड़ेगा।

* जब मनुष्य की भावना कल्याण की होती है तो उसके द्वारा किये गये कर्म स्वत: ही श्रेष्ठ होते हैं।

"बिरला के पास कितनी ढेर मिल्कियत है। मन्दिर बनाते हैं, उससे कुछ भी नहीं मिलता है।

गरीबों को थोड़ेही कुछ देते हैं। मन्दिर बनाया, जहाँ मनुष्य आकर माथा टेकेंगे। हाँ, गरीब को दान में देते हैं तो उसका रिटर्न में मिल सकता है। धर्मशाला बनाते हैं तो बहुत मनुष्य जाकर वहाँ विश्राम पाते हैं तो दूसरे जन्म में अल्पकाल के लिए सुख मिल जाता है।... संगमयुग पर बाप सारे ड्रामा के आदि-मध्य-अन्त का राज़ समझाते हैं।" सा.बाबा 6.5.04 रिवा.

"अभी है पुरुषोत्तम संगमयुग, जब बाप आकर राजयोग सिखलाते हैं। बाप ही कर्म-अकर्म-विकर्म की नॉलेज सुनाते हैं। आत्मा ही शरीर लेकर कर्म करने यहाँ आती है।... सतयुग में विकर्म होता ही नहीं, इसलिए वहाँ दुख होता ही नहीं।" सा.बाबा 23.7.04 रिवा.

"अगर कोई अकर्तव्य कार्य देखता भी है तो देखने का असर हो जाता है। उसका भी हिसाब बन जाता है। ... अशुद्ध संकल्प बुद्धि में भी अगर टच होते हैं तो भी सम्पूर्ण वैष्णव वा सम्पूर्ण प्योरिटी नहीं कहेंगे।" अ.बापदादा 22.6.71

"कोई ने हॉस्पिटल बनाई तो दूसरे जन्म में रोग कम होगा। ऐसे नहीं कि पढ़ाई जास्ती मिलेगी, धन भी जास्ती मिलेगा। उसके लिए तो सब कुछ करो। कोई धर्मशाला बनाते हैं तो दूसरे जन्म में महल मिलेगा, ऐसे नही कि तन्दुरुस्त भी रहेंगे। बाप सब बातें समझाते हैं।"

सा.बाबा 5.5.05 रिवा.

"मुख्य फरमान कौनसा है? निरन्तर याद में रहो और मन-वाणी-कर्म में प्योरिटी हो। ... संकल्प में भी अपवित्रता वा अशुद्धता न हो। ... अगर कोई अकर्तव्य कार्य होते देखता भी है तो देखने का असर हो जाता है। उसका भी हिसाब बन जाता है।"

अ.बापदादा 22.6.71

"इसलिए कर्मों की गति को जानने वाले बनो। नॉलेजफुल बन तीव्रगति से आगे बढ़ो। ... अगर पुराने संस्कार रह गये तो इस बहुत काल की गिनती धर्मराजपुरी के खाते में जमा हो जायेगी।... अभी कर्मों की गति को अच्छी तरह से समझ समय का लाभ लो।"

अ.बापदादा 20.1.86

"यह तो बच्चे जानते हैं - जो अच्छा कर्म करता है, उनको फिर शरीर भी अच्छा मिलता है। ऐसा नहीं कि अच्छा कर्म किया तो ऊपर चले जायेंगे। नहीं, ऊपर तो कोई जा नहीं सकते। जन्म अच्छा मिलेगा फिर भी नीचे तो उतरना ही है। तुम जानते हो - हम चढ़ते कैसे हैं।"

सा.बाबा 28.8.04 रिवा.

"यह छोटे-छोट सूक्ष्म पाप श्रेष्ठ सम्पूर्ण स्थिति में विघ्नरूप बनते हैं ... ये अति सूक्ष्म व्यर्थ कर्म बुद्धि को, मन को ऊंचा अनुभव करने नहीं देते। ... अल्पकाल के मनमौजी नहीं बनो, सदाकाल की रुहानी मौज में रहो। ... कर्मों की गुह्य गति के ज्ञाता बनो।"

अ.बापदादा 21.11.92

"अभी कर्मों की गुह्य गति का ज्ञान मर्ज हो गया है, इसलिए अलबेलापन है... आप लोगों की अपनी स्थिति तो न्यारी और प्यारी है लेकिन दूसरों की बातों में समय तो देना पड़ता है। ... यही समय लाइट-हाउस माइट-हाउस बन वायब्रेशन्स फैलाने में जाये तो क्या हो जायेगा ?"

अ.बापदादा 21.11.92 दादियों से

"कर्मों की गहन गति क्या हुई ? ... कई कहते हैं - हमने किसको कहा नहीं लेकिन वे कह रहे थे तो मैंने भी हाँ में हाँ कर दिया। ... हाँ में हाँ मिलाना, यह भी कर्मों की गति के प्रमाण पाप में भागी बनना है।"

अ.बापदादा 21.11.92

सृष्टि-चक्र में आत्मा के उत्थान और पतन का कार्य क्रिया और प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के आधार पर आदि से अन्त तक चलता है। उत्थान भी क्रिया और प्रतिक्रिया के आधार पर ही संगमयुग पर होता है और पतन भी सतयुग के प्रथम जन्म से ही इस सिद्धान्त के आधार पर ही होता है। सम्बन्धों में मधुरता और कटुता भी इस सिद्धान्त के आधार पर होती है। विश्व की अनेक घटनाओं को देखें और उन पर विचार करें तो समझ में आता है कि ये सम्बन्धों की कटुता या मधुरता एकाएक नहीं हो सकती है।

क्रिया-प्रतिक्रिया के इस सिद्धान्त में मन्सा-वाचा-कर्मणा सभी प्रकार से कर्मों का प्रभाव होता है। स्वांस लेना, खाना-पीना, व्यवहारिक कर्म आदि सभी के प्रकार के कर्म इसमें अपनी भूमिका निभाते हैं, जिसके आधार पर ही सतयुग की 16 कला सम्पूर्ण स्थिति कलियुग के अन्त में कलाहीन हो जाती है। यह सिद्धान्त हर आत्मा पर प्रभावित होता है।

* दुनिया में भी अनेक समय अबोध बच्चों से भी ऐसे कुकृत्य-पापकर्म होते हैं, जिनका दण्ड तो बड़ा होता है परन्तु अबोध समझ सोचते हैं कि इनको दण्ड नहीं मिलना चाहिए परन्तु उनकी इस अबोध जीवन और कर्मों का सम्बन्ध उनके पूर्व युवा-वृद्ध जीवन से है, इसलिए परमपिता परमात्मा और प्रकृति या कहें कि धर्मराज से वे भी अपने कुकृत्य के परिणाम से बच नहीं सकते। उनको उसकी भोगना अवश्य भोगनी होगी।

* हर एक योनि की आत्मा कर्म करती है और उसके कर्मों का सम्बन्ध उसी योनि की आत्माओं से या उसके समकक्ष योनियों की आत्माओं या प्रजातियों से होता है और उसके आधार पर ही उनके कर्मों के फल का निर्णय होता है।

* किसी भी कर्म से किसी आत्मा को कोई दुख होता है तो कर्ता का उस आत्मा के साथ हिसाब-किताब बनता है और समय पर कर्ता आत्मा को उस फल दुख के रूप में भोगना ही पड़ता है। यथा - अलबेलेपन से, टोण्ट, हंसी-मज़ाक आदि।

## कर्म का विधि-विधान और विभिन्न धर्म-शास्त्र

हर धर्म के शास्त्रों में कर्म सम्बन्धी कुछ न कुछ विधि-विधानों का ज्ञान अवश्य है परन्तु कर्म का यथार्थ ज्ञान नहीं है और कर्म करने की शक्ति कैसे अर्जित करें, उसका विधि-विधान नहीं है, इसलिए उनको पढ़ने से कोई श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ नहीं होता है। महाभारत शास्त्र को देखें तो देखेंगे उसमें राजनीति, धर्मनीति, आध्यात्मिक ज्ञान, कर्म-सिद्धान्त के अनेक महत्वपूर्ण उदाहरण हैं, जो इस बात को सिद्ध करते हैं कि भक्तों में यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान न होते हुए भी वे धर्म-सम्पन्न राजनीति, आध्यातमिक ज्ञान के अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों के विषय में और कर्म और फल के विधि-विधान के विषय में महत्वपूर्ण ज्ञान रखते थे। जैसे महाभारत में एक उपाख्यान में लिखा है कि जब पाण्डव अपना राजभाग जुआ में हारने के बाद वनवास में थे तो कोई ऋषि उनसे मिलने गये तो अर्नुन और भीम अपने बाहुबल को देखते हुए कौरवों से लड़ने की इच्छा प्रगट की तो ऋषि ने उनसे कहा - शत्रु निर्बल हो तो भी बलवान को समय की प्रतीक्षा अवश्य करनी चाहिए। पाण्डव वनवास के लिए वचनबद्ध थे। उसके पहले वे लड़ते तो संसार उनकी धर्मपरायणता पर उंगली उठाता। ऐसे ही कर्म-सिद्धान्त के सम्बन्ध में द्रोपदी के चीर हरण के समय भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य समर्थ होते हुए भी उन्होंने उस कृत्य के विरोध में आवाज नहीं उठाई तो उसका पाप उनके ऊपर चढ़ गया और उनको कौरव सम्प्रदाय की तरफ से लड़ना पड़ा अर्थात् वे हारने वाले पक्ष के योद्धा कहलाये परन्तु कमजोर होते हुए भी धृतराष्ट्र के दासी-पुत्र विकर्ण ने उसके विरोध में आवाज उठाई, भले ही उसकी वह आवाज सुनी नहीं गई, फिर भी युद्ध के समय वह पाण्डव पक्ष में आ गया और विजयी पक्ष का योद्धा कहलाया। शब्दों में विषय में द्रोपदी ने दुर्योधन को "अन्धे की औलाद अंधे" कटु शब्द कहे, जिसका फल द्रोपदी को भी भोगना पड़ा। जो सिद्ध करता है अच्छा व्यक्ति भी गलत शब्द बोलता है तो उसको भी उसका फल भोगना ही पड़ता है।

## ३. कर्म और कर्म का स्वरूप एवं कर्म के प्रकार

कर्म आत्मा का स्वभाविक स्वभाव है। सतयुग से लेकर कलियुग तक आत्मा कर्म करती है और उसका फल भोगती है। कर्म के आधार पर ही आत्माओं के अन्य आत्माओं और प्रकृति के साथ अनेक सम्बन्ध बनते और बिगड़ते हैं। आत्माओं के कर्म अनेक प्रकार के होते हैं और उनका फल उनके कर्ता की भावना और कर्म के स्वरूप के आधार पर निश्चित होता है। श्रेष्ठ फल के लिए श्रेष्ठ कर्म करने और भ्रष्ट कर्मों से बचने के लिए कर्म के स्वरूप

को भी जानना अति आवश्यक है।

कर्मों के स्वरूप और प्रकार का विभाजन अनेक प्रकार से किया जाता है, जिनमें से कुछ के ऊपर यहाँ विचार कर रहे हैं।

कर्म के चार स्वरूप हैं -

एक है स्वभाविक कर्म, जैस स्वांस लेना, देखना, सुनना आदि आदि। ऐसे कर्मो का भी मानव जीवन पर प्रभाव होता है क्योंकि कोई भी कर्म प्रभाव रहित नहीं होता है लेकिन ऐसे कर्मों का पाप-पुण्य के खाते पर बहुत कम प्रभाव होता है।

दूसरे होते हैं दैनिक कर्म, जैसे खाना-पीना, सोना आदि आदि। ऐसे कर्मों का भी मानव जीवन पर प्रभाव तो होता है परन्तु उनका पाप-पुण्य के खाते पर बहुत कम प्रभाव होता है लेकिन स्वभाविक कर्मों से अधिक पड़ता है। नियम-संयम से रहने वाले का जीवन सुखमय होता है, असंयमी व्यक्ति का जीवन रोगी-दुखी होता है। खाने-पीने, उठने-बैठने में हम जो प्रकृति के तत्वों के सम्बन्ध-सम्पर्क में आते हैं, जिससे उनके साथ भी हमारा हिसाब बनता है।

तीसरे होते हैं व्यवहारिक कर्म, जैसे नौकरी, धन्धा आदि इनका पाप-पुण्य से अधिक सम्बन्ध होता है क्योंकि इनके कारण आत्मायें अन्य आत्माओं के सम्बन्ध-सम्पर्क में अधिक आते हैं। मनुष्य को ऐसे कर्मों में विशेष ध्यान रखना चाहिए, जिससे उसका भविष्य अच्छा रहे।

चौथे होते हैं परमार्थिक कर्म, जिनमें ज्ञान-योग, धारणा, सेवा है। मुक्ति-जीवनमुक्ति ही मानव जीवन की परम-प्राप्ति है। आध्यात्मिक पथ के पथिक को अपने ऐसे कर्मों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। भक्ति मार्ग में भी भक्ति करने वाले, योगीजन (हठयोगी) अपने कर्मों पर बहुत खबरदारी रखते हैं। जो व्यक्ति अपने परमार्थिक कर्मों पर विशेष ध्यान रखता है, उसके और सभी कर्म स्वत: श्रेष्ठ होते जाते हैं और उसका जीवन श्रेष्ठ और सुखमय हो जाता है।

कर्मों की अच्छाई-बुराई को ध्यान में रखकर कर्मों का जो विभाजन किया है और ज्ञान सागर बाबा ने भी हमको जो ज्ञान दिया है, उसके अनुसार कर्मों को तीन रूपों से जाना जाता है अर्थात अकर्म, विकर्म, सुकर्म।

* आत्माभिमानी स्थिति में किये गये कर्म अकर्म अर्थात् उनसे आत्मिक शक्ति का सूक्ष्म ह्रास होता है। देहाभिमानी स्थिति में किये गये कर्म विकर्म होते क्योंकि उनके द्वारा आत्मिक शक्ति का तीव्रता से ह्रास होता है और तीसरे हैं सुकर्म, जिनसे आत्मिक शक्ति का विकास होता है।

वास्तव में संगमयुग पर जब हमको ईश्वरीय ज्ञान मिलता है, जिससे हम देहाभिमानी से आत्माभिमानी और परमात्माभिमानी बनते हैं तो उस यथार्थ आत्माभिमानी और रमात्माभिमानी स्थिति में रहकर किये गये कर्म ही सुकर्म होते हैं अर्थात् उनके द्वारा ही आत्मिक शक्ति का विकास होता हैं, जो ही आत्मा की चढ़ती कला का एकमात्र आधार हैं। कर्मों का ये ज्ञान, ज्ञान-सागर परमात्मा संगम युग में ही देते हैं।

* ये विश्व एक कर्मक्षेत्र है, जहाँ कोई भी आत्मा बिना कर्म के बिना नहीं रह सकती है और हर कर्म का फल उसके कर्ता को मिलता ही है, इसलिए हर आत्मा का ये पावन कर्तव्य है कि वह कर्म के स्वरूप और विधि-विधान को जानकर सदा श्रेष्ठ कर्म का ही संकल्प रखे, अपनी मन-बुद्धि को श्रेष्ठ कर्मों में ही प्रवृत रखे।

"बाबा हमेशा कहते मांगो मत। ... दाता के बच्चे हो ... और किससे लेंगे तो उनकी याद आती रहेगी। ... औरों से मांगो मत। नहीं तो देने वाले को भी नुकसान पड़ जाता है क्योंकि वह शिव बाबा के भण्डारे में नहीं दिया। देना चाहिए शिव बाबा के भण्डारे में।"

सा.बाबा 25.1.72 रिवा.

"चार प्रकार की सेवा - एक है स्व की सेवा, दूसरा है विश्व की सेवा, तीसरी है मन्सा सेवा और चाथी है यज्ञ-सेवा।... यज्ञ-सेवा अर्थात् यज्ञ की कर्मणा द्वारा कुछ न कुछ सेवा जरूर करनी चाहिए। बापदादा के पास तीनों प्रकार की सेवा के खाते जमा होते हैं।... सिर्फ स्थूल सेवा को कर्मणा सेवा नहीं कहते लेकिन कर्मणा अर्थात् संगठन में सम्बन्ध-सम्पर्क में आना। यह भी कर्म के खाते में जमा हो जाता है।"

अ.बापदादा 25.3.90

## अकर्म

"वह कर्म जिसमें किसके हित-अहित की कामना न हो और जिसका प्रकृति पर भी अच्छा-बुरा प्रभाव न हो, वह कर्म अकर्म कहा जायेगा।"

वास्तव में आत्माओं के द्वारा किया गया कोई भी कर्म, अकर्म नहीं होता है। हर आत्मा को अपने कर्म का अच्छा या बुरा फल अवश्य मिलता है। निराकार परमात्मा ही एक ऐसी सत्ता है, जिनके द्वारा किये गये कर्म, अकर्म होते हैं क्योंकि वह जन्म-मरण के चक्र से न्यारा सदा निराकार है, इसलिए कोई भी कर्म उसको प्रभावित नहीं करता है। वास्तव में परमात्मा के कर्मों को अकर्म न कहकर सुकर्म ही कहा जायेगा क्योंकि परमात्मा विश्व-कल्याणार्थ अवतरित होते हैं और कर्म करते हैं परन्तु वे उसका फल नहीं भोगते हैं और न उसके फल की इच्छा रखते हैं। इसलिए उनके कर्मों को अकर्म कह सकते हैं। परमात्मा के

द्वारा किये गये कर्मों के अकर्म होने का कारण है क्योंकि परमात्मा निराकार है, ज्ञान के सागर हैं जिसके कारण वे निष्कामी हैं, अभोक्ता हैं। किसी भी आत्मा को अभोक्ता नहीं कहा जा सकता है और कोई भी आत्मा निष्कामी नहीं हो सकती है। हर आत्मा को जाने-अन्जाने अपने कर्म का फल अवश्य मिलता है और देखा जाये तो जो भी देहधारी हैं, उनमें सूक्ष्म रूप से कामना नीहित रहती ही है। भले ही वे भौतिक जगत की कोई कामना नहीं रखते लेकिन परमार्थ की कामना तो रखते ही हैं।

वास्तविकता को देखा जाये तो सत्य ये है कि परमात्मा ज्ञान सागर है और आकर आत्माओं को सारा ज्ञान देते हैं परन्तु विश्व-कल्याण के लिए आत्माओं को ही निमित्त बनाते हैं। इसलिए बाबा ने अनेक बार कहा है कि तुम बच्चों को ही राज करना है, मुझे तो राज करना नहीं है इसलिए विश्व-कल्याण का कर्तव्य भी तुमको ही करना है। जिन आत्माओं को परमात्मा से ज्ञान मिलता है, उनकी पालना मिलती है, वे आत्मायें ही द्वापर-कलियुग में परमात्मा की इतनी महिमा करती हैं, उनके मन्दिर बनाते हैं, यह भी उनके कर्मों का फल ही है, भले परमात्मा को वह महिमा प्रभावित नहीं करती है क्योंकि वह निराकार है।

सतयुग-त्रेता में आत्माओं में आत्मा का यथार्थ ज्ञान तो नहीं होता है, परन्तु आत्मिक शक्ति होती है और नाममात्र आत्मा का ज्ञान होता है, इसलिए वहाँ देहाभिमान नहीं होता है परन्तु देह-भान तो होता ही है, जिसके कारण आत्मा का देह पर शासन होता है। देह-भान होने के आधार पर ही वे अपने-पराये का, स्त्री-पुरुष का निर्णय करते हैं और उस अनुसार व्यवहार में आते हैं। सतयुग-त्रेता में साधन-सम्पत्ति अधिक होती है और उपभोक्ता कम होते हैं, इसलिए किसी साधन-सम्पत्ति में आसक्ति नहीं होती है और न ही किसी व्यक्ति पर आश्रित होता है, इसलिए किसको किसी में मोह-ममता भी नहीं होती है। इसलिए वहाँ किसी में किसके अहित की भावना भी नहीं होती है , जिसके कारण वहाँ कोई कर्म विकर्म नहीं होता है। साथ ही आत्माओं में किसी के कल्याण की भावना भी नहीं होती है क्योंकि वहाँ कोई गरीब-भिखारी, दुखी-अशान्त भी नहीं होता है और आत्माओं की चढ़ती कला भी नहीं होती है, इसलिए वहाँ किसी का कर्म सुकर्म भी नहीं होता है। इस प्रकार वहाँ न विकर्म होते हैं और न ही सुकर्म होते हैं, इसलिए वहाँ के कर्मों को बाबा ने अकर्म कहा है। यदि अन्तर्दृष्टि से देखें तो वहाँ देवताओं की प्रालब्ध धीरे2 कम होती जाती है, आत्मा की कलायें भी कम होती जाती हैं, इसलिए वहाँ भी कर्म या साधन-सम्पत्ति के उपभोग का प्रभाव तो होता ही है लेकिन बहुत सूक्ष्म। वहाँ आत्मायें संगमयुग पर परमात्मा से मिले वर्से और परमात्मा की श्रीमत पर किये गये सुकर्मों के फल का उपभोग करती हैं, इसलिए उनके कर्मों को अकर्म कहा जाता है।

सतयुग में जो कर्म करते, खाते-पीते, उसका फल तो होता है परन्तु उसे विकर्म या पाप नहीं कह सकते क्योंकि उससे किसी को दुख नहीं देते और किसी को सुख देने का संकल्प भी नहीं होता, इसलिए उनके कर्मों को सुकर्म भी नहीं कहा जा सकता। हर एक अपनी जमा कमाई खाते रहते और खाकर खत्म कर देते। वहाँ आत्मायें कोई ऐसा कर्म नहीं करतीं, जिससे अपनी या किसी अन्य आत्मा की चढ़ती कला हो, इसलिए वहाँ के कर्मों को सुकर्म भी नहीं कहा जा सकता। इसलिए बाबा ने वहाँ के कर्मों को अकर्म की संज्ञा दी है। बाकी इस कर्मक्षेत्र पर हर कर्म का फल अवश्य होता है।

सतयुग त्रेता के कर्मों को अकर्म क्यों कहते क्योंकि वहाँ आत्मायें संगमयुग पर किये गये अपने श्रेष्ठ कर्मों का संचित फल खाते हैं, उसका उपभोग करते हैं। वहाँ न कोई पुण्य कर्म करते और न ही कोई पाप कर्म करते हैं, इसलिए वहाँ के कर्मों को अकर्म कहा जाता है।

संक्षेप में अकर्म की परिभाषा में यही कहेंगे - वह कर्म जिसके द्वारा किसी आत्मा को दुख भी न हो अर्थात् जो विकर्म भी न हो और सुकर्म भी न हो अर्थात् जिससे किसी आत्मा की चढ़ती कला भी न हो, उसे अकर्म कहा जायेगा।

* सतयुग में कर्म अकर्म होते क्योंकि देही-अभिमानी होने के कारण कोई दुख नहीं होता इसलिए कोई कामना नहीं होती, इसलिए वहाँ के कर्मो को अकर्म कहा जाता है। अकर्म अर्थात् जिससे न पाप होता है और न ही पुण्य होता है परन्तु उससे आत्मा का जमा का खाता कम अवश्य होता है।

## विकर्म

"जिन कर्मों के द्वारा व्यक्ति का स्वयं का, अन्य आत्माओं का अहित हो या प्रकृति दूषित हो, जिससे अन्य आत्माओं को दुख-अशान्ति की अनुभूति हो, आत्मा की शक्ति का अनियमित ह्रास हो, वे कर्म विकर्म कहे जाते हैं। जो कर्म देहाभिमान अर्थात् 5 विकारों के वशीभूत होते हैं, वे कर्म विकर्म कहे जाते हैं।"

द्वापर से दूसरे धर्म आने आरम्भ हो जाते हैं, धन-सम्पत्ति भी कम होती जाती है, आत्माओं में आत्मिक शक्ति का ह्रास होने के कारण देहाभिमान शक्तिशाली हो जाता है है, जिसके कारण आत्मा में 5 विकारों की प्रवेशिता होती है। इन्द्रियों के वशीभूत आत्माओं की इच्छायें-आकांक्षायें अधिक बढ़ती जाती हैं, इसलिए उनकी आपूर्ति के लिए आत्मायें जो भी कर्म करती हैं, वे प्राय: विकर्म होते हैं, जिनसे आत्मिक शक्ति का अनियमित और तीव्रता से ह्रास होता है। विकर्मों के फलस्वरूप आत्माओं को दुख-अशान्ति होती है, जिससे मुक्त होने

के लिए आत्मायें भक्ति भावना से अनेक प्रकार के कर्म-काण्ड आदि आरम्भ करते हैं।

"जितना याद करेंगे, उतना विकर्म विनाश होंगे। विकर्म तो सबसे होते रहते हैं। ऐसे कोई मत समझे कि हम से कोई विकर्म नहीं होता है। इतना अहंकार कोई मत रखे। विकर्म तो बहुत ही गुप्त भी बनते हैं, उनसे बड़ी सम्भाल रखनी है।"

सा.बाबा 12.09.03 रिवा.

"तुम बाप को याद करते रहो तो तुम भाषण आदि करने वालों से ऊंच पद पा सकते हो। भाषण करने वाले हैं, कोई समय तूफान में गिर पड़ते हैं। वो गिरे नहीं बाप को याद करते रहे तो जास्ती पद पा सकते हैं। सबसे जास्ती चोट लगती है जब विकार में गिरते हैं। पांच मंजिल से गिरने से हड्डी गुड्डी टूट जाती है। पांचवी मंजिल है देह-अभिमान और चौथी मंजिल है काम।"

सा.बाबा 19.9.69 रिवा.

"वारिस बनने वालों के कर्म भी ऐसे ऊंच होने चाहिए। कोई विकर्म न हो। ... बाप को छोड़कर दूसरे किसको याद करना - यह भी विकर्म है।"

सा.बाबा 16.4.04 रात्रि क्लास रिवा.

"राज्य अधिकारी बाप बनेगा या आप बनेंगे ? ... इसलिए बाप को आप सभी को कर्मातीत बनाना ही है। ... बाप को बनाना है और आप सबको बनना है। ऐसे नहीं कि मित्र-सम्बन्धियों को याद करने से कोई विकर्म बनेंगे। नहीं, विकर्म तब बनेंगे जब कोई ऐसा राँग कर्म करेंगे।... बाकी हाँ टाइम वेस्ट जरूर होगा। एक बाप को याद करने से ही विकर्म विनाश होते हैं।"

सा.बाबा 6.9.06 रिवा.

"क्वेश्चन मार्क हुआ और व्यर्थ का खाता आरम्भ हुआ और जब व्यर्थ का खाता आरम्भ हो जाता है तो समर्थी समाप्त हो जाती है और जहाँ समर्थी समाप्त हुई, वहाँ माया किसी न किसी रूप में अवश्य आयेगी। ... फिर योगी से योद्धे बन जाते हैं।"

अ.बापदादा 18.1.97

"अभी तुम बेहद के बाप से बेहद का वर्सा ले रहे हो, तो उनकी श्रीमत पर चलना है। ... बाप की श्रीमत पर न चलने से भूलें होती रहेंगी। श्रीमत पर चलने से खुशी का पारा चढ़ेगा। ... अन्दर की खुशी चेहरे से भी दिखाई पड़ती है।"

सा.बाबा 30.10.06 रिवा.

"भारत में विक्रम सम्वत जो कहते हैं, हो सकता है जब से देवतायें वाम मार्ग में जाते हैं और अपने को हिन्दू कहलाना शुरू करते हों, तब से विक्रम सम्वत भी कहते हों। सम्वत कहा जाता है जब धर्म स्थापन होता है। (जब देवतायें वाम मार्ग में जाते हैं, तब से विक्रम अर्थात् पुरुषार्थ

और फल का समय आरम्भ होता है क्योंकि सतयुग-त्रेता है बाप का वर्सा, जो संगमयुग पर बाप से मिलता है, वहाँ पुरुषार्थ और प्रालब्ध की बात नहीं।)"

सा.बाबा 2.11.06 रिवा.

"ड्रामानुसार बाप को आना ही संगमयुग पर है। ... यह कोई नहीं लिखते कि बरोबर परमात्मा ब्रह्मा तन द्वारा भारत को फिर से श्रेष्ठाचारी, सतयुगी दुनिया बना रहे हैं। यथार्थ रीति कोई समझते नहीं हैं। ... बाप कहते हैं - मामेकम् याद करो तो तुम्हारे विकर्म विनाश हो जायें, और कोई नया विकर्म नहीं करो।" सा.बाबा 16.10.06 रिवा.

## विकर्म और विकर्म विनाश की प्रक्रिया

परमात्मा पतित-पावन है, आत्मा का अनादि स्वरूप पवित्र है। निराकार परमात्मा की याद से ही विकर्म विनाश होते हैं और आत्मा अपने मूल स्वरूप निराकार स्थिति को धारण करती है। अज्ञानता के वशीभूत देहाभिमान के कारण विकर्मों का बोझा आत्मा पर चढ़ता जाता है। फिर कल्पान्त में परमात्मा आकर आत्माओं को विकर्मों से मुक्त होने का रास्ता बताते हैं, जिसके द्वारा ही आत्मा विकर्मों से मुक्त होती है और पुन: पावन होती है। आत्मा पर जो देहाभिमान का लेपक्षेप चढ़ा है, जंक चढ़ी है, वह परमात्मा की याद से खत्म होती है क्योंकि परमात्मा की याद में एक तो आत्मा सुकर्म करती, जिससे विकर्मों का बोझा कम हो जाता है और पश्चाताप से भोग पूरा होता है तथा परमात्मा की याद से देहाभिमान रूपी अज्ञानता समाप्त होती है। परमात्मा की याद के बिना देहाभिमान में आकर जो भी कर्म करते हैं, वे विकर्म ही होते हैं और उनका फल कर्मभोग के रूप में आत्मा को भोगना ही पड़ता है।

परमात्मा से जब आत्माओं को यथार्थ ज्ञान मिलता है, जब आत्मा अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होने का पुरुषार्थ करती है, परमात्मा को याद करती है, जिससे आत्मा पर विस्मृति के कारण देहाभिमान की कट चढ़ जाती है, वह ज्ञान के चिन्तन करने से, आत्मिक स्वरूप का चिन्तन करने से, परमात्मा के गुणों का चिन्तन करने से देहाभिमान मिटता है और आत्मा अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होने में समर्थ होती है, जिससे वह विकर्मों से विमुक्त हो जाती है और आत्मिक स्वरूप में स्थित होने के कारण विकर्मों का भोग भी कम हो जाता है अर्थात् उसकी महसूसता कम हो जाती है।

अपनी गलती को परमात्मा को बता देने से, लिखकर दे देने से जो विकर्मों का बोझ आत्मा पर चढ़ा हुआ है, वह हल्का हो जाता है। विश्व-नाटक अनादि-अविनाशी होते हुए भी आत्माओं को अपने विकर्मों का फल भोगना ही पड़ता है क्योंकि ये विश्व-नाटक कर्म और

कर्मफल पर ही चलता है।

"बाप कहते हैं - तुम मेरी याद के बिना पवित्र बन ही नहीं सकते हो। भले तुम कोई देवता को याद करो। किसके भी योग से तुम पवित्र नहीं बनोंगे। पापों को दग्ध करने का बल मेरे पास ही है।" मातेश्वरी 24.6.65

"बेहद का बाप कहते हैं - बच्चे, मुझे याद करो तो तुम्हारे विकर्म विनाश होंगे। तुम्हें इस दादा वा मम्मा को भी याद नहीं करना है।... गायन है - सतगुरु मिला दलाल। सतगुरु कोई दलाल नहीं है। सतगुरु तो निराकार है।... वर्सा तो बाप से ही मिलना है।"

सा.बाबा 9.2.05 रिवा.

"एक होता है डायरेक्ट विकर्म विनाश की स्टेज में स्थित हो फुल फोर्स से विकर्मों का नाश करना, दूसरा तरीका है जितना-जितना शुद्ध संकल्प वा मनन की शक्ति से अपनी बुद्धि को बिजी रखते हो, ... बुद्धि में यह भरने से वह पहले वाला स्वयं ही निकल जायेगा।"

अ.बापदादा 4.7.71

"विकर्म विनाश और शक्ति भरने की दो विधियां हैं। एक होता है पहले सारा निकाल कर फिर भरना, दूसरा होता है भरने से निकालना। अगर खाली करने की हिम्मत न है तो दूसरा भरते जाने से पहला आप ही खत्म हो जायेगा।" अ.बापदादा 4.7.71

"कई समझते हम अपने को आत्मा समझ शान्त में बैठते हैं। परन्तु इससे भी कोई पाप भस्म नहीं होगा। बाप कहते हैं - अपने को आत्मा निश्चय कर फिर मुझे याद करो। ... जितना प्यार से बाबा को याद करेंगे तो विकर्म विनाश होंगे और फिर वर्सा भी मिलेगा।"

सा.बाबा 20.6.72 रिवा.

"श्रीकृष्ण को याद करने से विकर्म विनाश नहीं होंगे। वह तो प्रिन्स था, उसने प्रालब्ध भोगी, उनकी महिमा की दरकार नहीं है। देवताओं की क्या महिमा करेंगे। ... बाकी उन्होंने क्या किया, सीढ़ी तो उतरते ही आते हैं।" सा.बाबा 23.9.06 रिवा.

"तुम बहुत देहाभिमानी बन पड़े हो, बहुत विकर्म बन जाते हैं ... एक मुख्य विकर्म यह करते हो कि बाप फरमान करते हैं कि अपन को आत्मा समझो, वह मानते नहीं हो तो जरूर विकर्म न होगा तब क्या होगा।" सा.बाबा 10.3.69 रिवा.

"बाप समझाते हैं कि बाप सबको तो नहीं पढ़ायेंगे परन्तु सबको साथ जरूर ले जायेंगे। ड्रामा प्लैन अनुसार मैं बांधा हुआ हूँ सबको साथ ले जाने के लिए। ... हाँ, इतना सब बच्चे समझेंगे कि बाप कहते हैं - मामेकम् याद करो तो तुम्हारे विकर्म विनाश होंगे।"

सा.बाबा 21.10.06 रिवा.

# सुकर्म

"जो कर्म स्व के या सर्व के कल्याणार्थ किया जाता है और जिससे आत्मायें एवं प्रकृति पावन बनती है, उस कर्म को सुकर्म कहा जाता है।"

ये सुकर्म की प्रक्रिया संगम पर ही चलती है, जब ज्ञान सागर परमात्मा इस धरा पर आते हैं और आत्माओं को अकर्म-विकर्म-सुकर्म की गहन गति का ज्ञान देते हैं और कर्मयोग की शिक्षा देते हैं। इस योग की प्रक्रिया से आत्मयें और प्रकृति दोनों पावन होते हैं। आत्माओं में आत्मिक भावना जाग्रत होती है, जिससे आत्मायें विश्व-कल्याण की भावना से कर्म करते हैं। संगमयुग पर ही आत्मायें आत्माभिमानी स्थिति में स्थित होकर परमात्मा की याद में अर्थात् आत्माभिमानी और परमात्माभिमानी स्थिति में स्थित होकर कर्म करते हैं, वे कर्म ही सुकर्म होते हैं क्योंकि उनसे ही आत्मा की चढ़ती कला होती है।

आत्म-स्थिति और आत्मिक दृष्टि रहे तो और सारे कार्य स्वत: ही श्रेष्ठ होते हैं। परमात्मा की याद भी स्वत: रहेगी और परमात्मा की याद रहेगी तो आत्मिक स्थिति और आत्मिक दृष्टि स्वत: रहेगी।

* श्रेष्ठ कर्म के लिए श्रेष्ठ संस्कार चाहिए। अपने को यथार्थ रूप में आत्मा समझने और दूसरे को भी यथार्थ आत्मिक स्वरूप में देखना सबसे श्रेष्ठ संस्कार है, इस संस्कार को धारण करने से सदा ही श्रेष्ठ कर्म होंगे। आत्मा की ये स्थिति संगमयुग पर ही होती है। सतयुग में भी आत्मिक शक्ति होती है और नाममात्र आत्मा का ज्ञान होता है परन्तु यथार्थ ज्ञान नहीं होता, इसलिए वहाँ भी सुकर्म नहीं होते हैं, इसलिए आत्माओं की आत्मिक शक्ति की कलायें उतरती ही जाती हैं।

* जिसको कर्म का ज्ञान अर्थात् कर्म के कारण, कर्म के विधि-विधान, कर्म के फल का ज्ञान हो जायेगा, निश्चय हो जायेगा, उससे कब कोई अकर्तव्य हो नहीं सकता।

शिव भगवानोवाच्य - "त्रिकालदर्शी होकर कर्म करो तो कब कोई विकर्म नहीं होगा।

* जीवात्मा अपना आपही मित्र है और आपही अपना शत्रु है अर्थात् हर आत्मा को अपने ही कर्म का फल मिलता है। श्रेष्ठ कर्म से मित्र और पाप कर्म से शत्रु बनती है। सुख और दुख दोनों में ही दूसरे तो केवल निमित्त कारण होते हैं, मूल कारण तो हर आत्मा के अपने ही कर्म होते हैं। इसलिए कर्म और फल के विधि-विधान को समझकर दूसरों को दोष न देकर अपने कर्म को चेक करने वालों से सदा ही शुभ कर्म होते हैं और उनका भविष्य सदा ही उज्ज्वल होता है। दूसरों को दोष देने वाले और ही अपना विकर्मों का खाता बढ़ाकर अपने लिए दुख

का खाता संचित करते हैं।

* स्व-स्थिति और एक परमात्मा की याद में स्थित होकर अपने कर्म और जीवन को चेक करो और तुम्हारी चेतना जिसे स्वीकार करे, उस कर्म को निर्भय होकर करो। न व्यर्थ चिन्तन करो और न श्रेष्ठ कर्मों से पीछे हटो, सफलता तुम्हारे चरण चूमेगी। मनुष्य की सदा परमपिता परमात्मा से प्रीत और श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्ति होनी चाहिए और जब आत्मा की आन्तरिक पुकार अनुसार कर्म कर लिया, फिर उसमें कब संशय या भय-चिन्ता नहीं होनी चाहिए बल्कि उसके शुभ परिणाम की धैर्य से प्रतीक्षा करनी चाहिए। ऐसी धारणा वाले ही सदा सुकर्म करने में समर्थ होते हैं।

"यहाँ कर्म, विकर्म बनते हैं, वहां कर्म, अकर्म बनते हैं।... तुम्हारा यह संगम का एक जन्म दुर्लभ है, जब तुम बेहद बाप से स्वर्ग का वर्सा पाते हो। तुम बहुत रॉयल बाप के बच्चे हो तो तुम्हारी चलन कितनी रॉयल होनी चाहिए।" सा.बाबा 23.11.06 रिवा.

"चलन बड़ी अच्छी चाहिए। कोई पर भी घृणा न रहे। बाप कहते हैं मुझे थोड़ेही किसके लिए घृणा आती है। जानते हैं तुम पतित हो। यह ड्रामा बना हुआ है। जानता हूँ उनकी चलन ही ऐसी बन्दरों मिसल है।" सा.बाबा 30.6.72 रिवा.

"हर कर्म त्रिकालदर्शी बनकर करने से कभी भी कोई कर्म, विकर्म नहीं हो सकता। सदा सुकर्म होगा। ... ऐसे ही साक्षी-दृष्टा बनकर कर्म करने से कोई भी कर्म के बन्धन में कर्म-बन्धनी आत्मा नहीं बनेंगे।" अ.बापदादा 30.1.79

"फॉलो फादर कहा जाता है। जैसे बाप (ब्रह्मा बाबा) याद करते हैं, ऐसे याद करो। यह (शिवबाबा) तो पुरुषार्थ करते नहीं हैं। ये करते हैं, इसलिए इनको फॉलो करने वाले ही ऊंच पद पाते हैं।" सा.बाबा 4.12.68

हमारे कर्म विकर्म न हो, सुकर्म हों, इसके लिए कुछ विचारणीय सत्य -

* विचार करो - जिस कर्म, घटना, दृश्य के प्रति परमात्मा और निमित्त समर्थ आत्मायें तटस्त हैं, उनके लिए तुम व्यर्थ चिन्तन कर अपने ऊपर व्यर्थ बोझा रखकर अपने पुरुषार्थ को बाधित कर अपने भविष्य को अन्धकारमय क्यों बना रहे हो! अपने अधिकार में रहकर कर्तव्य करना ही जीवन की सफलता का प्रशस्त पथ है।

* किसी बात के विषय में निर्णय करने और विचार व्यक्त करने से पहले इस सत्य को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि बिना कारण के कार्य नहीं हो सकता और बिना अपराध के पुरुष या प्रकृति से किसी आत्मा को दुख नहीं मिल सकता। भले ही कर्म फल का कुछ

प्रतिशत आगे के लिए भी संचित होता है, जिससे ड्रामा का आगे का दृश्य घटित होता है और ये विश्व-नाटक सतत चलता है।

* कर्मों का ज्ञान श्रेष्ठ कर्म की प्रेरणा देता है और श्रेष्ठ कर्म ही श्रेष्ठ फल का आधार हैं और श्रेष्ठ कर्म ही आत्मा की चढ़ती कला के निमित्त बनते हैं। अज्ञानतापूर्ण अशुभ कर्मों के द्वारा ही आत्मा पर ग्रहचारी आती है, जो आत्मा को दुख देती है और ज्ञानयुक्त श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा ही आत्मा की ग्रहचारी दूर होती है और आत्मा सुख का अनुभव करती है।

"परमात्मा, आत्मा की जो ओरिजिनल स्टेज थी, उसे पकड़ने का ज्ञान भी दे रहे हैं, बल भी दे रहे हैं। कहते हैं - तुम मुझे याद करो तो श्रेष्ठ कर्म करने का बल आयेगा। नहीं तो तुम्हारे से श्रेष्ठ कर्म नहीं होंगे। ... श्रेष्ठ कर्म करते रहो तो तुम्हारी पॉवर सतोप्रधानता की बनती जायेगी और उसी आधार से तुम उस स्थिति को प्राप्त करेंगे, जो तुम्हारी असुल स्थिति है।"

मातेश्वरी 21.06.64

"कार्य करते फरिश्ता बनकर कर्म करो। फरिश्ता अर्थात् डबल लाइट। कार्य का बोझ नहीं हो। कार्य का बोझ अव्यक्त फरिश्ता बनने नहीं देगा। ... बीच-बीच में निराकारी और फरिश्ता स्वरूप की मन की एक्सरसाइज करो तो थकावट नहीं होगी। जैसे ब्रह्मा बाप को साकार रूप में देखा - डबल लाइट। सेवा का भी बोझ नहीं, अव्यक्त फरिश्ता रूप। तो सहज बाप समान बन जायेंगे।"

अ.बापदादा 14.11.02

"आत्मा में ही सब संस्कार हैं। पास्ट के सुकर्म वा विकर्म के संस्कार आत्मा ले आती है। ... जहाँ कर्म अकर्म हो जाते हैं, उसको सतयुग कहा जाता है। फिर जहाँ कर्म विकर्म होते हैं, उसको कलियुग कहा जाता है। तुम अभी हो संगमयुग पर। अभी बाबा दोनों तरफ की बात समझाते हैं।" (इसलिए सुकर्म करने का समय अभी ही है)

सा.बाबा 26.1.06 रिवा.

* इस विश्व-नाटक के नियमानुसार हर आत्मा को अपने कर्म एवं पुरुषार्थ अनुसार फल मिलता है। श्रेष्ठ जीवन बनाने में आत्म-विश्वास बहुत आवश्यक है। यदि हमारा कोई कर्म गलत हो गया तो कर्म के अटल सिद्धान्त को जान उसको स्वीकार कर उसका पश्चाताप कर लेना या उसके परिणाम को सहर्ष भोगने के लिए निश्चिन्त रहने में ही कल्याण है और यदि गलत नहीं किया तो निर्भयता और सभ्यता से उसका प्रतिकार कर अपने कर्तव्य-पथ पर दृढ़ता से चलते रहना ही जीवन की सफलता का मार्ग है। उसमें ही आत्मा की महानता है।

"कोई भी कर्म करते हो तो पहले त्रिकालदर्शी बनकर फिर कोई कर्म करो। ... पहले परिणाम को सोचो फिर कर्म करो तो सदा श्रेष्ठ परिणाम निकलेगा। ... त्रिकालदर्शी स्थिति में

स्थित होकर कर्म करने से कब कोई व्यर्थ कर्म नहीं होगा, साधारण नहीं होगा।"

अ.बापदादा 22.1.90 पार्टी

"महारथियों के संकल्प भी ऐसे ही होते हैं, जो संकल्प प्रैक्टिकल में सम्भव हो सकते हैं। करें न करें ... सोचने की भी उनको आवश्यकता नहीं है। ... इसमें पहले कन्ट्रोलिंग पॉवर विशेष चाहिए। अगर कन्ट्रोलिंग पॉवन नहीं है तो व्यर्थ मिक्स होने के कारण सिद्धि प्राप्त नहीं होती। जब व्यर्थ संस्कारों को कन्ट्रोल करें, तब उसके बदली में समर्थ संस्कार अपने में जमा कर सकें।"

अ.बापदादा 30.7.70

## निष्काम कर्म

चौथे होते हैं निष्काम कर्म, जो कर्म एक परमपिता परमात्मा के ही होते हैं क्योंकि वह है निराकार। कोई भी साकार मनुष्य के कर्म निष्काम कर्म हो नहीं सकते क्योंकि हर आत्मा को उसके कर्मों का कर्मानुसार अच्छा या बुरा फल अवश्य मिलता है और देखा जाये तो हर मनुष्य को स्थूल या सूक्ष्म कामना रहती ही है, भले ही वह कामना मुक्ति की ही क्यों न हो।

निष्काम कर्म का बहुत महत्व है, इसलिए निष्काम कर्मयोग का भी गायन है परन्तु प्रश्न है - क्या कोई कर्म निष्काम होता है ? यदि होता है तो कब और कैसे ? इसका राज़ अभी परमात्मा ने बताया है कि किसी भी आत्मा का कोई कर्म निष्काम हो नहीं सकता। कर्म करते समय कोई न कोई सूक्ष्म कामना मन में रहती ही है। भले ही वह कामना स्थूल हो या सूक्ष्म। एक परमात्मा ही निष्काम कर्म करते हैं क्योंकि उनको अपनी देह है ही नहीं, इसलिए वे फल भोग ही नहीं सकते और देह नहीं है तो कामना किस बात की, साथ ही परमात्मा ज्ञान के सागर है। इसलिए एक परमात्मा के कर्म ही निष्काम होते हैं।

"राइट हेण्ड सेवाधारी अर्थात् सदा निष्काम सेवाधारी। ... गुप्त सेवाधारी अर्थात् निष्काम सेवाधारी। तो एक हैं निष्काम सेवाधारी, दूसरे हैं नामधारी सेवाधारी। ... जो निष्काम सेवाधारी हैं, वे अविनाशी नाम कमाने वाले सेवाधारी हैं, उनके दिल का आवाज़ दिल तक पहुँचता है।"

अ.बापदादा 22.2.86

निष्काम सेवाधारी कहने का बाबा का आशय है कि कोई स्थूल चीज या मान-शान की कामना रखकर सेवा नहीं करनी है। कर्म करना हमारा कर्तव्य है, फल परमात्मा या प्रकृति के द्वारा मिलेगा ही। हमको फल की इच्छा नहीं रखनी है क्योंकि इच्छा अच्छा बनने नहीं देगी, श्रेष्ठ कर्म करने नहीं देगी।

"स्नेह और शक्ति दोनों की आवश्यकता है। शक्ति रूप से विजयी बनते हो और स्नेह रूप से

सम्बन्ध में आते हो। ... बाप को भी सर्वशक्तिवान और प्यार का सागर भी कहते हैं। ... अपने को सदा सफलता का सितारा समझना है। प्रत्यक्षफल की भी कामना नहीं रखने वाले सफलता को पाते हैं।" अ.बापदादा 5.4.70

"सभी आत्माओं का बाप एक है, वह अभी आया हुआ है परन्तु सब तो मिल भी नहीं सकेंगे। इम्पॉसिबुल है।... याद फिर भी पतित-पावन को ही करते हैं।... एक बाप ही है जो तुम बच्चों को पढ़ाकर विश्व का मालिक बनाते हैं, खुद नहीं बनते हैं। इसलिए उनको कहा जाता है - निष्काम सेवाधारी। मनुष्य कहते हैं - हम फल की आश नहीं रखते, निष्काम सेवा करते हैं परन्तु ऐसे होता नहीं है।... कर्म का फल अवश्य मिलता है।" सा.बाबा 21.5.05 रिवा.

परमात्मा अपने कर्म के अनुसार उसके फल से प्रभावित नहीं होता है परन्तु सृष्टि के विधि-विधान अनुसार जिन आत्माओं को उसके द्वारा सुख मिलता, प्यार मिलता है, सहयोग मिलता है, वे आत्मायें उस अनुसार भक्ति मार्ग में उसकी महिमा, पूजा आदि अवश्य करते हैं, मन्दिर आदि बनाते हैं।

## स्थिति के आधार पर कर्म प्रकार

स्थिति के आधार पर भी कर्मों का विभाजन कर सकते हैं अर्थात् मन्सा कर्म, वाचा कर्म, कर्मणा अर्थात प्रत्यक्ष कर्म। मन्सा में संकल्प उत्पन्न होना भी एक कर्म है और वह भी आत्मा के पुण्य-पाप के खाते को प्रभावित करता है अर्थात् उसका भी फल होता है, जो आत्मा को सुख या दुख के रूप में भोगना होता है। ऐसे ही हम जो शब्द बोलते हैं, वे भी अन्य आत्माओं को प्रभावित करते हैं, उसका भी हमारे पुण्य-पाप के खाते से सम्बन्ध है और वे भी आत्मा के सुख-दुख का कारण बनते हैं। स्थूल कर्मेन्दियों से जो कर्म करते हैं, उसका भी आत्मा के पुण्य-पाप के खाते पर प्रभाव पड़ता है, जिससे आत्मायें सुख या दुख पाती हैं। इन मन्सा-वाचा-कर्मणा किये गये कर्मों का प्रभाव चेतन प्रकृति अर्थात् आत्माओं के साथ-साथ जड़-जंगम प्रकृति पर भी पड़ता है और वह भी उन आत्माओं के सुख-दुख में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। स्थिति के आधार पर होने वाले कर्मों में विशेषतया निम्न दो प्रकार से किये गये कर्मों को ले सकते हैं।

मन्सा-वाचा-कर्मणा किये गये कर्म

दृष्टि-वृत्ति-स्मृति से किये गये कर्म

इस सम्बन्ध में भौतिक जगत के वैज्ञानिकों और मनोवैज्ञानिकों ने भी अनेक प्रकार के अनुभव किये हैं, जिनका उन्होंने विभिन्न प्रकार से वर्णन किया है।

"ऐसा संकल्प इमर्ज होना चाहिए कि अब सर्व-आत्माओं का कल्याण हो। सर्व तड़पती हुई, दुखी और अशान्त आत्मायें वरदाता बाप और बच्चों द्वारा वरदान प्राप्त कर सदा शान्त और सुखी बन जाएं और अब घर चलें। यह स्मृति समय की समीपता प्रमाण तेज़ होनी चाहिए क्योंकि इस संकल्प और इस स्मृति से ही विनाश ज्वाला भड़क उठेगी और सर्व का कल्याण होगा।"

अ.बापदादा 3.2.74

## भोगना के आधार पर कर्म के प्रकार अर्थात् भेद

आत्माओं को उनके कर्मों की भोगना उनके कर्म के स्वरूप के आधार पर मिलती है। कुछ कर्मों का हिसाब प्रकृति और तन के साथ होता है, वह उसके द्वारा भोगना पड़ता है। किन्हीं कर्मो का हिसाब-किताब अन्य आत्माओं के साथ होता है, वह उनके साथ चुक्ता करना पड़ता है। बाबा कहते तुम अपने कर्मों को बाबा को लिखकर दे दो तो आधा माफ हो जायेगा परन्तु बाबा किस प्रकार के कर्मों का हिसाब माफ करेगा और किस प्रकार के कर्मों का हिसाब-किताब आत्मा को चुक्ता करना ही होगा, यह भी एक गुह्य पहेली है क्योंकि हमारे जिन कर्मों से अन्य आत्मायें प्रभावित हुई हैं, उनको दुख मिला है, उसका प्रतिफल उनको कैसे मिलेगा अर्थात् वह कैसे चुक्तू होगा ? यह भी विचार की बात है। जैसे हमने किसी आत्मा का कोई धन हड़प किया है तो उस कर्म को परमात्मा को लिखकर देने से परमात्मा माफ करेगा या नहीं - यह विचारणीय है क्योंकि यदि माफ करता है तो जिसका धन हड़प किया है, उसके साथ अन्याय हो जायेगा।

"धर्मराज पुरी में भी सजाओं का पार्ट अन्त में नूँधा हुआ है लेकिन वे सजायें सिर्फ आत्मा अपने आप भोगती है और हिसाब-किताब चुक्तू करती है। लेकिन कर्मों के अनेक प्रकार में भी विशेष तीन प्रकार के हैं। एक हैं आत्मा को अपने आप भोगने वाले हिसाब। जैसे बीमारियाँ, दिमाग़ कमजोर होना। दूसरा हिसाब है - सम्बन्ध-सम्पर्क द्वारा दुख की प्राप्ति और तीसरा है - प्राकृतिक आपदाओं द्वारा हिसाब-किताब चुक्तू होना।"

अ.बापदादा 10.12.84

कर्मों के स्वरूप का विभाजन साधारण, व्यर्थ, विशेष और अति विशेष के रूप में भी कर सकते हैं। उसमें भी जो कर्म एक व्यक्ति के लिए साधारण है, वह दूसरे के लिए व्यर्थ हो सकता है और तीसरे के लिए विशेष हो सकता है। समय के हिसाब से भी जो कर्म एक समय आवश्यक हो सकता है, वही दूसरे समय व्यर्थ हो सकता है। जो एक समय आवश्यक होता है, वह दूसरे समय पर पाप-कर्म हो सकता है। जैसे काम-भोग द्वापर से सन्तानोत्पत्ति के लिए आवश्य था, वह कलियुग के अन्त में व्यर्थ हो गया क्योंकि अभी मनुष्यात्मायें उसे

मनोरंजन के रूप में करने लगे हैं और परमात्मा पिता का बनने के बाद वह पाप-कर्म हो गया है क्योंकि उसकी हमारे लिए कोई आवश्यकता नहीं है, बल्कि वह हमारे आध्यात्मिक पुरुषार्थ में बाधा स्वरूप है। इसलिए सभी आध्यात्मिक पुरुषार्थियों ने आध्यात्मि उन्नति के लिए काम-भोग को निषेध माना है। काम-भोग परमात्मा पिता की आज्ञा के विरुद्ध है, इसलिए काम-भोग करने वाले के ऊपर पाप चढ़ जाता है। दुनिया में जो मनोरंजन के रूप में कामोपभोग करते हैं, उनकी आत्मिक शक्ति तीव्रता से ह्रासित होती है।

## ४. कर्म और धर्मराज कर्म और धर्मराजपुरी

सृष्टि के विधि-विधान को जानकर और ज्ञान सागर बाप द्वारा दिये गये ज्ञान को समझने के बाद प्रश्न उठता है कि क्या धर्मराज का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व है और उनकी अलग से कोई धर्मराजपुरी है ? वास्तव में धर्मराज का न कोई अलग से स्वतन्त्र अस्तित्व है और न ही अलग से कोई धर्मराज पुरी का स्थान है। ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण और कल्याणकारी है। धर्मराज और धर्मराजपुरी इस नाटक के न्यायपूर्ण गुण के प्रतीक मात्र हैं। क्योंकि इस विश्व-नाटक में प्रकृति के द्वारा हर आत्मा को अपने अच्छे-बुरे कर्मों का पूर्ण न्यायपूर्ण रीति से फल मिलता है। आत्मा को उसके बुरे कर्मों के फलस्वरूप देह त्याग के समय और कल्पान्त में जो भोगना भोगनी पड़ती है, उसको ही धर्मराज और धर्मराजपुरी के रूप में सम्बोधित किया गया है। जैसे माया, रावण आदि को सम्बोधित किया गया है। चूँकि परमात्मा ज्ञान का सागर, न्यायकारी है, इसलिए प्रकृति के इस न्यायपूर्ण गुण को परमात्मा ने कहा है कि उनका राइट हेण्ड धर्मराज है। इसका अर्थ ये भी नहीं कि धर्मराज का कोई अलग से अस्तित्व नहीं है तो कोई अपने किये हुए पाप-कर्मों के फल से मुक्त हो जायेगा या बच जायेगा। हर आत्मा को जैसे परमात्मा ने विधि-विधान बताया है, उस अनुसार अपने कर्मों का फल भोगना ही पड़ेगा।

जैसे सूक्ष्मवतन वासी ब्रह्मा, विष्णु, शंकर का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व और कार्य नहीं है। तीनों ही परमात्मा के स्थापना, विनाश और पालना के तीनों कर्तव्यों के प्रतीक हैं और तीनों कर्तव्य विश्व-नाटक में स्वचालित हैं, परमात्मा आकर इस विश्व-नाटक का यथार्थ ज्ञान देता है। वैसे ही इस विश्व-नाटक में परमात्मा और प्रकृति के न्यायकारी कर्तव्य का प्रतीक धर्मराज है क्योंकि इस विश्व-नाटक में हर आत्मा को अपने मन्सा-वाचा-कर्मणा किये गये हर कर्म का यथोचित फल अवश्य मिलता है। परमात्मा इस कर्तव्य का न केवल हिन्दू धर्म में गायन है बल्कि अन्य धर्मों में भी गायन है। जैसे मुसलमानों और क्रिश्चियन्स में भी मान्यता है

कि क्यामत के समय खुदा रूहों को कब्र से जगाकर उनके कर्मों का हिसाब करता है।

इस विश्व-नाटक की ऐसी स्व-चालित मशीनरी है कि हर आत्मा को समय पर अपने कर्मों का फल मिलता ही है और उस समय उसको उन कर्मों की सूक्ष्म स्मृति भी आती है, जिसके कारण वह पश्चाताप करता ही है। जैसे राजा दशरथ का उदाहरण रामायण में है, महाभारत में भी भीष्म पितामह आदि के अनेक के अनेक उदाहरण है।

"यह तो हाईएस्ट अथॉरिटी गॉड फादरली गवर्मेन्ट है, साथ में धर्मराज भी है। ... कांटों के जंगल को बाप आकर गॉर्डन ऑफ फ्लावर्स बनाते हैं। ... गर्भ जेल में ही कर्मों का हिसाब शुरू हो जाता है।" सा.बाबा 3.10.06 रिवा.

"बहुत बच्चे हैं, जो बाप को पहचानते नहीं हैं। बाप के साथ धर्मराज भी है। बाप कहते हैं मेरी आज्ञा नहीं मानी, मेरी इन्सल्ट की तो धर्मराज बहुत सजायें देगा। डायरेक्ट हमारी या हमारे बच्चे की तुम अवज्ञा करते हो।... इनकी इन्सल्ट करते हो तो कितनी सजायें खानी पड़ेंगी।"

सा.बाबा 20.11.06 रिवा.

"यह बेहद का बाप बेहद का धर्मराज भी है। ... उल्टा-सुल्टा काम करेंगे तो सजा जरूर खायेंगे। समझते नहीं कि हम भगवान की अवज्ञा करते हैं।"

सा.बाबा 17.11.06 रिवा.

## धर्मराजपुरी के विधि-विधान

जैसे दुनिया में पाप-कर्म की सजा के लिए विधि-विधान हैं, वैसे इस विश्व में भी विकर्मों की सजाओं के अदृश्य विधि-विधान हैं, जिनके अनुसार हर आत्मा को अपने कर्मों का फल स्वत: ही मिलता है। परमात्मा कोई हिसाब रखता नहीं है लेकिन हर आत्मा का सेकेण्ड बाई सेकेण्ड का कर्म और उसका फल नूँधा हुआ है और नूँध होता रहता है। समय पर परमात्मा, प्रकृति और आत्मायें हर आत्मा के कर्म के गवाह बनते हैं अर्थात् सजा के समय उनका साक्षात्कार होता है।

"चलते-फिरते भी विचार-सागर मन्थन करते रहना है। ... योग नहीं होगा तो एकदम गिर पड़ेंगे। ... कई बच्चे डिस्सर्विस कर अपने को श्रापित करते हैं। ... भूल का पश्चाताप करते हैं। फिर भी पश्चाताप से कोई माफ नहीं हो सकता है।" सा.बाबा 4.7.05 रिवा.

"इस जन्म में कोई पाप कर्म तो नहीं किये हैं? ... इस जन्म के पाप बाप को बता दो तो हल्के हो जायेंगे, नहीं तो दिल अन्दर खाता रहेगा। ... हमारा बच्चा बनकर फिर भूल करने से सौगुणा वृद्धि हो जाती है।" (सौगुणा दण्ड पड़ जाता है)

सा.बाबा 10.11.04 रिवा.

"बहुतों को बहुत खराब ख्यालात आते हैं, फिर इनकी सजा भी बहुत कड़ी है।... अवस्था गिर जाती है। अवस्था का गिरना ही सजा है।" सा.बाबा 7.12.04 रिवा.

"बेकायदे चलन से नुकसान बहुत होता है। हो सकता है फिर कड़ी सजायें भी खानी पड़े। अगर अपने को सम्भालेंगे नहीं तो बाप के साथ-साथ धर्मराज भी है, उनके पास बेहद का हिसाब-किताब रहता है।" सा.बाबा 7.12.04 रिवा.

"अभी थोड़े समय में धर्मराज का रूप प्रत्यक्ष रूप में अनुभव करेंगे। ... फिर अनुभव करेंगे कि एक संकल्प की भूल से एक का सौगुणा दण्ड कैसे मिलता है।"

अ.बापदादा 22.10.70

"जरा भी सम्पूर्ण आहुति की कमी रह गयी तो सम्पूर्ण सफलता नहीं होगी। जितना और उतना का हिसाब है। हिसाब करने में धर्मराज भी है। उनसे कोई भी हिसाब रह नहीं सकता। ... सिर्फ निश्चय और हिम्मत चाहिए। निश्चय वालों की विजय कल्प पहले भी हुई थी और अभी भी हुई पड़ी है।" अ.बापदादा 25.1.70

"मैं निराकार रूप में तो कुछ देख नहीं सकता हूँ। आरगन्स बिगर आत्मा कुछ भी कर न सके। ... यह तो अन्धश्रृद्धा है, जो कहते हैं ईश्वर सब कुछ देखता है। ... अच्छा या बुरा काम हर एक ड्रामा अनुसार करते हैं। मैं थोड़ेही बैठ इतने करोड़ों मनुष्यों का हिसाब रखूँगा। मुझे शरीर है तब सब कुछ करता हूँ। करन-करावनहार भी तब कहते हैं, जब शरीर में आते हैं। नहीं तो कह न सकें। ... पार्ट बिगर कोई कुछ कर न सके। शरीर बिगर आत्मा कुछ कर नहीं सकती।" सा.बाबा 1.2.05 रिवा.

ये विश्व-नाटक कर्म और फल पर आधारित है। हर आत्मा का कर्म और फल का विधि-विधान ड्रामा में नूंधा हुआ है, जिस अनुसार आत्मा कर्म भी करती है और उसका फल भी पाती है। बाबा इस विश्व-नाटक का पूर्ण ज्ञाता और साक्षी-दृष्टा है, वही आकर इसका ज्ञान देता है। कर्म और उसका फल ड्रामा अनुसार चलता है, उसके लिए परमात्मा की आवश्यकता नहीं है। सृष्टि के नियमानुसार समय पर कर्म का अच्छा या बुरा फल मिलना ही धर्मराज का स्वरूप है, जो विधि-विधान कल्प के आदि से अन्त तक चलता रहता है क्योंकि धर्मराज माना सुप्रीम जज अर्थात् मुख्य न्यायाधीश। कल्प के अन्त में सारे कल्प का हिसाब-किताब चुक्ता होता है और अन्त में बुरा दुखदाई हिसाब-किताब अधिक होता है, इसलिए उसको धर्मराज के नाम से जाना जाता है। बाबा ने भी धर्मराज का नाम लिया है क्योंकि उस समय अनेक प्रकार के साक्षात्कार आदि भी होते हैं।

ब्राह्मण जीवन में कर्मों का फल कई गुणा बढ़ जाता है, जो अच्छे का भी होता है तो बुरे कर्मों का भी होता है क्योंकि ब्राह्मण जीवन में परमात्मा से सब प्रकार का ज्ञान मिलता है। ब्राह्मण जीवन परम सुखमय जीवन है, उस जीवन का सच्चा सुख अनुभव न होना भी धर्मराज की सजा ही है। योगानन्द परमानन्द है और योग में बैठते समय या चलते-फिरते योग का आनन्द अनुभव न होना भी धर्मराज की सजायें ही हैं। विशेष रूप से योग में बैठने के समय संकल्प-विकल्प चलना, योग के आनन्द का अनुभव न होना भी धर्मराज की सजायें ही हैं। बाबा ने ये भी कहा है कि धर्मराज की ट्रिबुनल भी ब्राह्मणों के लिए ही बैठेगी क्योंकि उनको बाबा ने सारा ज्ञान दिया फिर भी उन्होंने नहीं माना और विकर्म किये।

"यह सब वायदे बाप के पास चित्रगुप्त के रूप में हिसाब के खाते में नूँधे हुए हैं। ... पत्र जो लिखकर दिया वह पत्र वा संकल्प सूक्ष्मवतन में बापदादा पास सदा के लिए रिकार्ड में रह गया।" अ.बापदादा 31.3.86

"चोरी की, उसका सौगुणा दण्ड हो ही जाता है। बाप जानकर क्या करेंगे। ... ईश्वर का बच्चा बनकर फिर चोरी करता, शिवबाबा जिनसे इतना वर्सा मिलता है, उनके भण्डारे की चोरी करता है, यह तो बहुत बड़ा पाप है।" सा.बाबा 7.5.05 रिवा.

"लगाव वाले को धर्मराज को सलाम भरना ही पड़ेगा। लगाव वाले सम्पूर्ण फर्स्ट जन्म का राज्यभाग्य पा न सकें। इसी प्रकार पुराने स्वभाव वाले नये जीवन, नये युग का सम्पूर्ण और सदा काल के सुख का अनुभव नहीं कर पाते। ... अब सभी प्रकार के लगाव और स्वभाव को समाप्त करो।" अ.बापदादा 15.7.73

"अभी फिर भी कोई व्यर्थ अथवा अशुद्ध संकल्प चलने की प्रत्यक्ष रुप में कोई सजा नहीं मिल रही है, लेकिन थोड़ा आगे चलेंगे तो कर्म की तो बात ही छोड़ो लेकिन अशुद्ध वा व्यर्थ जो संकल्प हुआ, किया उसकी सजा का भी अनुभव करेंगे।" अ.बापदादा 3.5.72

"सूक्ष्म सजायें सूक्ष्म में मिलती रहती हैं और दिन प्रतिदिन ज्यादा मिलती जायेंगी लेकिन ईश्वरीय मर्यादाओं के प्रमाण कोई भी अगर अमर्यादा का कर्तव्य करते हैं, मर्यादा का उल्लंघन करते हैं तो ऐसी अमर्यादा से चलने वाले को स्थूल सजायें भी भोगनी पड़ेंगी।"

अ.बापदादा 3.5.72

"अभी बाबा ने राइट-रांग को जज करने की बुद्धि दी है।... बाबा थोड़ेही सज़ा देंगे। धर्मराज के द्वारा दिलवाते हैं। विनाश भी कराते हैं शंकर के द्वारा।... बाबा कर्म-अकर्म-विकर्म की गति समझाते हैं।" सा.बाबा 6.4.06 रिवा.

"जैसे प्रीत बुद्धि चलते-फिरते बाप, बाप के चरित्र और बाप के कर्तव्य की स्मृति में रहने से

बाप के मिलने का प्रक्टिकल अनुभव करते हैं, वैसे विपरीत बुद्धि वाले विमुख होने से सूक्ष्म सजाओं का अनुभव करेंगे।... उनके सीरत से हरेक अनुभव कर सकेंगे कि इस समय यह आत्मा सजा भोग रही है। कितना भी अपने को छिपाने की कोशिश करेंगे लेकिन छिपा नहीं सकेंगे।" अ.बापदादा 2.2.72

"अगर जरा भी गफलत की तो जैसे कहावत है - एक का सौ गुणा लाभ भी मिलता है और एक का सौ गुण दण्ड भी मिलता है, यह बोल अभी प्रैक्टिकल में अनुभव होने वाले हैं। इसलिए सदा बाप के सम्मुख, सदा प्रीत बुद्धि बनकर रहो।" अ.बापदादा 2.2.72

"विशेष भारत में सिविल वार और प्राकृतिक आपदायें ये ही हर कल्प परिवर्तन के निमित्त बनते हैं। विदेश की रूप रेखा अलग प्रकार की है लेकिन भारत में यही दोनों बातें विशेष निमित्त बनती हैं। ... धर्मराजपुरी में सम्बन्ध और सम्पर्क द्वारा हिसाब वा प्राकृतिक आपदाओं द्वारा हिसाब-किताब चुक्तू नहीं होगा।" अ.बापदादा 10.12.84

## कर्म और धर्मराज की सजायें और सजाओं से मुक्ति

बाबा ने ये भी ज्ञान दिया है कि धर्मराजपुरी की सजायें क्या हैं और कैसे धर्मराज की सजाओं से बच सकते हैं, उसके लिए क्या पुरुषार्थ करना चाहिए। अन्त समय आत्मा को अपने जीवन के सभी पाप कर्मों का साक्षात्कार होता है और आत्मा उस समय पश्चाताप करती है, वह पश्चाताप और दुख की महसूसता ही धर्मराज की सजायें हैं। आत्मा को कोई सुख-दुख भोगने के लिए स्थूल या सूक्ष्म शरीर अवश्य चाहिए। सूक्ष्म शरीर के साथ भी आत्मा अपने कर्मानुसार सुख दुख भोगती है। जैसे भूत-प्रेत आदि कर्मों के अनुसार ही उस योनि में जाते हैं और उसका फल भोगते हैं। ऐसे ही अन्त समय भी सजाओं की भोगना होती है और विकर्मों की भोगना के बाद ही आत्मा फरिश्ता बनती है।

"यहाँ कोई भी गन्दी दृष्टि होनी न चाहिए। भाई-बहन समझ, फिर गन्दा नाता रखना, वह तो पता नहीं कितना सजायें खायेंगे! बड़ी कड़ी सजायें खाते हैं। गर्भ जेल में सजायें खानी पड़ती हैं ना! बीमारियाँ आदि होती हैं, वह अलग हैं। सजायें अलग हैं। गर्भ जेल में सजा बहुत मिलती हैं। ... तुम श्रीमत पर न चले और नाम बदनाम कराया तो तुम्हारे जितना दुख दुनिया में कोई नहीं देखता।" सा.बाबा 14.12.73 रिवा.

परमात्मा के इन सब महावाक्यों को सुनने-समझने के बाद इस सत्य को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए कि जो आगे बढ़ रहा है, वह अपने ही कर्म के फल स्वरूप आगे बढ़

रहा है और जो कुछ दुख भी भोग रहा है, वह भी अपने कर्म से ही भोग रहा है। हमको दोनों प्रकार की बातों को देखते हुए राग-द्वेष, ईर्ष्या-घृणा दोनों से मुक्त हो साक्षी होकर देखना है और अपना कर्म ऐसा करना है, जिसका फल अपने लिए भी हितकर हो और अन्य के लिए भी हितकर हो।

"पुरुषार्थ सजाओं से बचने का करना है। नहीं तो बाप के आगे सजा खानी पड़ेगी। ... बाप के साथ धर्मराज भी तो है ना। वह तो जन्मपत्री जानते हैं। ... बाप का बनने के बाद यह विचार हर बच्चे को आना चाहिए कि हम बाप का बने हैं तो स्वर्ग में चलेंगे ही परन्तु हम स्वर्ग में क्या बनेंगे।" सा.बाबा 1.3.05 रिवा.

"स्वयं ही स्वयं का जज बनो। धर्मराजपुरी में जाने से पहले जो स्वयं, स्वयं का जज बनता है, वह धर्मराजपुरी की सजा से बच जाता है। ... सोच-समझ कर कर्म करो। ... कर्म से पहले संकल्प उत्पन्न होता है। यह संकल्प बीज है। ... यह संकल्प जीवन का श्रेष्ठ खजाना है।"

अ.बापदादा 27.9.75

"शरीर तो जड़ है, उसमें जब चेतन्य आत्मा प्रवेश करती है, उसके बाद गर्भ में सजा खाने लगती है। आत्मा सजा खाती है। सजायें भी कैसे खाती है? भिन्न-भिन्न शरीर धारण कर जिन-जिन को जिस रूप से दुख दिया है, वह साक्षात्कार करते जाते हैं और दण्ड मिलता जाता है। त्राहि-त्राहि करते हैं, इसलिए गर्भ जेल कहते हैं। ड्रामा कैसा अच्छा बना हुआ है।"

सा.बाबा 19.5.72 रिवा.

"जन्म-जन्मान्तर का बोझा सिर पर है। साक्षात्कार कराते सजा देते जायेंगे। बहुत सजायें हैं, जिनका पारावार नहीं। एक-एक जन्म के पापों का साक्षात्कार कराकर सजा देते हैं। वह तो जैसे जन्म-जन्मान्तर की सजायें हो गई। होता बिजली मुआफिक है परन्तु उसकी भासना ऐसी होती है जैसे कि सेकण्ड में हजारों वर्ष की सजा खाते हैं।"

सा.बाबा 5.12.73 रिवा.

"बाप को जान पहचान उनकी मत पर चलने से तुम श्रेष्ठ बन सकेंगे। नहीं तो बहुत सजायें खायेंगे। जैसे ईश्वर की महिमा अपरम अपार है वैसे सजा खाने की दुर्दशा भी अपरम अपार है। क़यामत का समय है। बाबा कहते हैं मैं सबका हिसाब-किताब चुक्तू कराता हूँ। ... कोई भी किसको दुख देते हैं तो दुखी होकर मरेंगे। जो काम कटारी चलाते हैं, वे दुखी होकर मरने वाले हैं - यह पक्का समझ लो।" सा.बाबा 17.4.73 रिवा.

"अगर अभी बाप को भूले तो धर्मराज के रूप में ही बाप मिलेगा। बाप का सुख कभी पा नहीं सकेंगे। इसलिए छिपाओ नहीं, चलाओ नहीं, दूसरे को दोषी नहीं बनाओ। ... इस पवित्रता के

फाउण्डेशन में बापदादा धर्मराज के द्वारा 100 गुणा, पदम गुणा दण्ड दिलाता है। ... कहते हैं कौन देखता है, कौन जानता है, लेकिन पाप पर पाप चढ़ता जाता है और यही पाप अन्त समय खाने को आयेंगे।" अ.बापदादा 12.4.84

"बाकी कर्मों का खाता भी चुक्तू करके ही चलना है। कुछ योग बल से, कुछ कर्मभोग से, कुछ किसी न किसी तरीके से चुक्तू अवश्य करना है।... डण्डों से खाते को चुक्तू करना, यह तो बड़ी इन्सल्ट की बात है। डण्डों के बजाये यह भोगना अच्छी है। सजाओं से भोगने में जरा कठिन होता है और इन्सल्ट भी होती है।... योग का भी बल मिलता जायेगा। ज्ञान का भी बल है, योग का भी बल है, धारणाओं का भी बल है। ... मुख से भी किसको ज्ञान धन दान करते हो, सेवा करते हो तो यह भी कमाई है।" मातेश्वरी 27.6.1964

"यहाँ सजा मिलती है प्रत्यक्ष, धर्मराज की सजायें गुप्त भी मिलती हैं। गर्भजेल में भी सजायें भोगते हैं। ... आगे का भी अभी मिलता है, अभी का अभी भी मिल सकता है। फिर गर्भजेल में भी मिलता है। ... परमपिता परमात्मा और धर्मराज बाबा दोनों हाजिर हैं। अभी सभी के कयामत का समय है। हर एक की जजमेन्ट होती है। यह भी ड्रामा में नूँध है।"

सा.बाबा 19.11.06 रिवा.

"बाप जमघटों की फांसी से छुड़ाते हैं, गर्भजेल की सजाओं से छुड़ाते हैं। तुम स्वर्ग में गर्भ महल में रहते हो। यहाँ है गर्भजेल क्योंकि मनुष्य पाप कर्म करते हैं। ... आत्मा यहाँ आई है पार्ट बजाने के लिए तो यहाँ शान्त कैसे रहेंगे।" सा.बाबा 4.11.06 रिवा.

"जितना समय समीप आ रहा है, उतना नई-नई बातें, संस्कार, हिसाब-किताब के काले बादल आयेंगे ... जिन बच्चों को धर्मराजपुरी में क्रास नहीं करना है, उन्हों के संगम के इस अन्तिम समय में स्वभाव-संस्कार के सब हिसाब-किताब यहाँ ही चुक्तू होने हैं। ... अन्त समय ये बातें ही यमदूत हैं।" अ.बापदादा 14.12.97

## कर्म और धर्मराज की ट्रिबुनल

कर्म का फल तो हर आत्मा को मिलता ही है, यह इस विश्व-नाटक का अनादि नियम है परन्तु जो आत्मा जानते हुए, परमात्मा के मना करने पर भी उनकी आज्ञा की उपेक्षा करके कोई गलत कर्म करता है, उसके लिए ट्रिबुनल बैठती है और उसका कई गुणा दण्ड मिलता है। जिसके लिए बाबा ने कई बार कहा है कि ट्रिबुनल उन बच्चों के लिए बैठेगी, जिनको बाबा ने ज्ञान दिया है, सावधान किया है फिर भी वे विकर्म करते हैं, बाप का नाम बदनाम करते हैं। बाबा ने ये भी कहा है कि उस समय धर्मराज ये सब साक्षात्कार करायेगा कि तुमको ब्रह्मा द्वारा

अमुख रूप से, अमुख स्थान पर सावधान किया, फिर भी तुमने पाप कर्म किये, अब उन कर्मों की सजा खानी ही पड़ेगी। विश्व-नाटक में कर्म के विधि-विधान अनुसार विधि-विधान को जानते हुए विकर्म करना, परमात्मा के मना करने पर भी विकर्म करना, उसकी सजा अधिक मिलती है। यह राज़ भी ड्रामा में नूँधा हुआ है कि ऐसे कर्मों का अन्त समय जो साक्षात्कार होता है, उसमें वह वातावरण और व्यक्ति भी इमर्ज होते हैं, जो उस कर्म की गवाही देते हैं, जिससे पश्चाताप की महसूसता और बढ़ जाती है।

"तुम्हारे लिए तो ट्रिब्युनल बैठेगी। खास उन बच्चों के लिए जो सर्विस लायक बनकर फिर ट्रेटर बन जाते हैं। ... दान देकर फिर बहुत खबरदार रहना है। फिर ले लिया तो सौगुणा दण्ड पड़ जाता है।" सा.बाबा 3.11.04 रिवा.

"बाप कहते हैं - एक-दो से सेवा मत लो। कोई अहंकार नहीं आना चाहिए। दूसरे से सेवा लेना, यह भी देह-अहंकार है। बाबा को समझाना तो पड़े ना। नहीं तो जब ट्रिबुनल बैठेगी तब कहेंगे, हमको पता थोड़ेही था कायदे-कानून का। इसलिए बाप समझा देते हैं, फिर साक्षात्कार कराये सज़ा देंगे।" सा.बाबा 5.3.2001 रिवा.

"श्रीमत पर न चलते तो नाम बदनाम करते हैं। भल बच्चे हैं परन्तु बच्चों को ऐसे थोड़ेही छोड़ेंगे। हाँ ट्रिबुनल बैठती है बच्चों को तो और ही कड़ी सजा मिलती है क्योंकि धोखा देते हैं।... बाप तो उस समय मुस्कराते हैं। कहते हैं इनको कुल्हाड़ी से टुकड़ा-टुकड़ा करो। फांसी की सजा देने वाले रोते हैं क्या ? ऐसे थोड़ेही बच्चों पर दया कर देंगे।"

सा.बाबा 22.11.73 रिवा.

"सूक्ष्म वतन में ट्रिबुनल बैठती है, सजायें मिलती हैं। सज़ायें खाकर पवित्र बन ऊपर घर चले जाते हैं। ... पूछते बाबा स्वर्ग में क्या-क्या होगा ? बाबा कहते हैं - बच्चे वह सब आगे चलकर देखना। पहले तुम बाप को जानो और पतित से पावन बनने की धुन में रहो। स्वर्ग में जो होना होगा सो होता रहेगा।" सा.बाबा 8.11.06 रिवा.

Q. क्या धर्मराज सजायें देता है ? उसका कोई अलग स्वरूप है, कोई अलग धर्मराजपुरी है, जहाँ आत्माओं के कर्मों का निर्णय होता है और उनकी सजायें मिलती हैं ?... वास्तविकता क्या है ?

वास्तविकता को देखा जाये तो न धर्मराज का कोई अलग अस्तित्व और न ही अलग कोई धर्मराज पुरी है। ब्रह्मा तन में अवतरित हुए परमात्मा का ही अन्त में धर्मराज का स्वरूप बन जाता है क्योंकि जब परमात्मा सारा ज्ञान दे देता है तो अन्त समय साक्षी होकर धर्मराज के रूप में कर्मों का हिसाब-किताब करता है और आत्मायें अन्त समय स्थूल और सूक्ष्म शरीर से

अपने कर्मों का हिसाब-किताब पूरा करती हैं, उसको भोगती हैं।

मनुष्य समझते हैं कि धर्मराज पुरी का कोई विशेष स्थान है और वहाँ धर्मराज का दरबार लगता है और धर्मराज कर्मों अनुसार अच्छा या बुरा फल देता है। ब्रह्मा तन में अवतरित परमात्मा का स्वरूप ही अभी बाप का है अर्थात् प्यार का है और बाद में वही न्यायकारी रूप अर्थात् धर्मराज का बन जाता है अर्थात् न्याय-प्रधान स्थिति हो जाती है। कल्पान्त में परमधाम जाने के समय आत्माओं को अपना सारा हिसाब-किताब चुक्ता करना होता है। इस साकार शरीर से लेकर सूक्ष्म शरीर और सूक्ष्म वतन तक आत्मा अपने कर्मों का हिसाब-किताब भोग सकती है और अन्त में उसके सारे कर्म उसके सामने आते हैं और उनकी सजायें भोगनी होती हैं - यही धर्मराजपुरी की सजायें हैं।

"ऊंच से ऊंच बाप है, उनके साथ धर्मराज भी है। धर्मराज द्वारा बहुत कड़ी सजा खाते हैं। ... बाबा के पास पूरा हिसाब रहता है। ... धर्मराज पूरा हिसाब लेंगे।"

सा.बाबा 4.7.05 रिवा.

"बाप को याद करते-करते हम पावन बन जायेंगे। नहीं तो सजायें खानी पड़ेंगी। ... वहाँ पर फिर ट्रिबुनल बैठती है, सब साक्षात्कार होते हैं। बिगर साक्षात्कार किसको सजा दे नहीं सकते। बिगर साक्षात्कार कराये सजा दें तो मूँझ पड़े कि यह सज़ा हमको क्यों मिलती है। बाप को मालूम रहता है कि इसने यह पाप किया है, यह भूल की है। सब साक्षात्कार कराते हैं।"

सा.बाबा 14.6.04 रिवा.

"जो बच्चे बाप का बनकर डिस्सर्विस करते हैं, उनके लिए ट्रिब्युनल बैठती है। भक्ति मार्ग में इतनी कड़ी सजा नहीं मिलती है परन्तु बाप का बनकर फिर डिस्सर्विस करते हैं तो बाप का राइटहेण्ड है धर्मराज। ... यह कर्मो के अनुसार ड्रामा बना हुआ है। जो जैसा कर्म करता है, वैसा फल पाता है।"

सा.बाबा 22.9.06 रिवा.

"मन्सा और वाचा इकट्ठी सेवा हो सकती है लेकिन वाचा सहज है और मन्सा में अटेन्शन देने की बात है। ... फिर कोई ऐसा उल्हना न दे कि हमको तो इशारा भी नहीं दिया गया कि यह भी होता है। उस समय बापदादा यह प्वाइन्ट याद करायेगा। ... तीनों प्रकार के खाते (मन्सा-वाचा-कर्मणा, तन-मन-धन) और चारो (स्व-सेवा, विश्व-सेवा, मन्सा-सेवा और यज्ञ-सेवा) प्रकार की सेवा साथ-साथ करो।"

अ.बापदादा 25.3.90

"सवेरे-सवेरे उठकर बाप से बातें करनी चाहिए। अमृतवेले बाप को याद करना अच्छा है। शाम के टाइम एकान्त में जाकर बैठो। ... अन्त में सब याद आयेगा, साक्षात्कार होगा। बिना साक्षात्कार के धर्मराज भी सजा दे न सके। ... बाप की सर्विस में लग जाओ, नहीं तो अन्त में

बहुत पछताना पड़ेगा।" सा.बाबा 24.11.06 रिवा.

Q. ट्रिबुनल में सबके लिए कोई निश्चित आत्मायें ही होंगी या हरेक के लिए ट्रिबुनल में अलग-अलग कोई विशेष आत्मायें होंगी ? अन्त समय अपने विकर्मों का साक्षात्कार उन निमित्त बनी हुई आत्माओं के समक्ष होना ही ट्रिबुनल की सजा है या धर्मराज पुरी में कोई अलग से ट्रिबुनल होगी ?

अन्त समय जब सजाओं का साक्षात्कार होता है तो वह दृश्य प्रत्यक्ष होता है, जिसमें पाप-कर्म किया या बाबा ने या निमित्त बनी हुई आत्माओं ने समझाया परन्तु फिर भी नहीं माना। तो उन आत्माओं का गवाह के रूप में प्रत्यक्ष होना ही ट्रिबुनल का काम करती है। जैसे श्रवणकुमार की मृत्यु के विषय में अन्त समय राजा दशरथ को वह दृश्य का प्रत्यक्ष होना और उसका पश्चाताप करना।

## ५. कर्म और क्यामत अर्थात् विनाश

कर्म और कब्रदाखिल, कब्र से जगाकर कर्मों का हिसाब-किताब चुक्ता करना

कुछ धर्मों में मृत्यु के बाद शव को जलाते हैं और कुछ धर्मों में दफनाते हैं अर्थात् कब्रदाखिल करते हैं। जो कब्रदाखिल करते उनकी मान्यता है कि क्यामत के समय परमात्मा आकर उनको जगाते हैं और उनके कर्मों का हिसाब-किताब करते हैं।

इस सत्य का भी अभी पता पड़ा कि अपने आत्मिक स्वरूप को भूलकर देहाभिमान के वशीभूत होना ही वास्तव में कब्रदाखिल होना है और अभी विनाश के समय परमात्मा आकर यथार्थ ज्ञान देकर आत्माओं को इस देहाभिमान रूपी कब्र से जगाते हैं और अपने कर्मों का पश्चाताप कराकर, उनसे मुक्त करके पावन बनाते हैं। यह सब ज्ञान भी परमात्मा ने अभी दिया है और हम सभी आत्माओं को देहाभिमान रूपी कब्र से जगाया है और हमको अपने कर्मों के हिसाब-किताब चुक्ता करने का रास्ता बताया है और बता रहा है, उसके अनुसार जो अपने हिसाब-किताब को चुक्ता नहीं करेंगे, उनका हिसाब-किताब विनाश के समय धर्मराज के दरबार में पूरा होगा अर्थात् अन्त समय सजायें खाकर पूरा करना होगा।

"अभी है ही कयामत का समय। सबका हिसाब-किताब चुक्तू होता है।... यह बना-बनाया अनादि ड्रामा है, जिसको साक्षी होकर देखते हैं कि कौन अच्छा पुरुषार्थ करते हैं। ... माया का तूफान अथवा कुसंग पीछे हटा देता है, खुशी गुम हो जाती है।"

सा.बाबा 20.1.05 रिवा.

"यह है कयामत का समय, सभी का पुराना हिसाब-किताब चुक्तू होना है और नया जन्म होना

है। चोपड़ा होता है धन का, यहाँ फिर चोपड़ा है कर्मों के खाते का। आधा कल्प का खाता है। मनुष्य जो पाप कर्म करते हैं, वह खाता चलता आया है।"

सा.बाबा 20.8.02 रिवा.

"समझते नहीं कि बाप के साथ में धर्मराज भी है। अगर कुछ ऐसा करते हैं तो हमारे ऊपर बहुत भारी दण्ड पड़ता है। ... जब समय आयेगा तो बाप इन सबसे हिसाब लेंगे। क्यामत के समय सबका हिसाब-किताब चुक्तू होता है ना।"

सा.बाबा 25.4.05 रिवा.

"विकर्म विनाश तो करना ही है। हिसाब-किताब चुक्तू तो होना ही है। फिर नये सिर पार्ट बजाना है। सबका हिसाब-किताब चुक्तू कराये पावन बनाये बाप साथ में ले जाते हैं। ये सब राज़ समझने के हैं। ... भल सब याद करते हैं परन्तु बिगर परिचय। इस प्रकार याद करने से तो कोई पावन नहीं बनेंगे।"

सा.बाबा 1.08.03 रिवा.

"अभी लास्ट समय है और पापों का हिसाब ज्यादा है। इसलिए अब जल्दी-जल्दी जन्म और जल्दी-जल्दी मृत्यु ... दर्दनाक मृत्यु और दुखमय जन्म यह जल्दी हिसाब-किताब चुक्तू करने का साधन है।"

अ.बापदादा 10.12.84

"बच्चों ने पूछा कि एक ही समय इकट्ठा मृत्यु कैसे और क्यों होता है ? इसका कारण है। ... सभी आत्माओं का द्वापर युग वा कलियुग से किये हुए विकर्मों के पापों का खाता जो भी रहा हुआ है, वह अभी पूरा ही समाप्त होना है क्योंकि सभी को अब वापस घर जाना है। द्वापर से किये हुए कर्म वा विकर्म दोनों का फल अगर एक जन्म में समाप्त नहीं होता है तो दूसरे जन्मों में भी चुक्तू का वा प्राप्ति का हिसाब चलता आता है। लेकिन अभी लास्ट समय है और पापों का हिसाब ज्यादा है।... तो वर्तमान समय मृत्यु भी दर्दनाक और जन्म भी मैजारिटी का बहुत दुख से हो रहा है।"

अ.बापदादा 10.12.84

"दिखाते हैं - शंकर की आँख खुलने से विनाश हो जाता है। यह भी एक कलंक लगाया है। विनाश तो होना ही है।... यह सुख-दुख का ड्रामा बना हुआ है। क्यों बना, यह प्रश्न नहीं उठ सकता। यह अनादि-अविनाशी बना-बनाया ड्रामा है।"

सा.बाबा 23.10.06 रिवा.

"तुम्हारे में भी बहुतों को विनाश की भावी का निश्चय नहीं है। अगर होता तो योग में बहुत अच्छी तरह रहते। यह वही महाभारत लड़ाई है। सब आत्मायें हिसाब-किताब चुक्तू कर परमधाम जायेंगी। इसको क़यामत का समय कहा जाता है। यह नेचुरल केलेमिटीज़ भी होनी हैं, यह भी ड्रामा में नूँध हैं।"

सा.बाबा 21.10.06 रिवा.

"अभी तुम बच्चों को 21 जन्मों के लिए खाता जमा करना है, उसके लिए मुख्य है याद की

यात्रा। ... जो योगबल से पावन नहीं बनेंगे, वे सजायें खायेंगे और पद भी कम हो जायेगा।"

सा.बाबा 14.12.06 रिवा.

Q. धर्मराज का स्वरूप क्या है और वह कैसे सजायें देगा ?

Q. धर्मराज की सजायें क्या हैं और कब और कैसे मिलेंगी ?

Q. क्या कर्मों का हिसाब-किताब धर्मराज के पास है और वह कर्म का फल देता है ? यदि है और देता है तो कैसे, यदि नहीं तो हर आत्मा को कर्म का फल कैसे मिलता है ? क्या कोई अपने कर्मों के फल से छूट सकता है ?

Q. क्या धर्मराज की सजायें कल्पान्त में विनाश के समय ही मिलेंगी या अभी भी जीवात्मा को जो कर्मभोग आदि के रूप में दण्ड मिलता है, वह भी धर्मराज के विधि-विधान के अनुसार ही मिलता है अर्थात् वे भी धर्मराज की सजायें ही हैं ?

Q. क्या धर्मराज सजायें देता है ? धर्मराज का कोई अलग स्वरूप है, कोई अलग धर्मराज पुरी है, जहाँ आत्माओं के कर्मों का निर्णय होता है और सजायें मिलती हैं ? ... वास्तविकता क्या है ?

Q. किसी आत्मा के दुख का दोषी अर्थात् उत्तरदायी कौन ?

इस जगत में यह एक बड़ी पहेली है कि किसी के दुख का दोषी कौन क्योंकि सब एक-दूसरे पर दोषारोपण करते हैं और अपने को निर्दोष सिद्ध करते हैं। इस विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान, कर्मों के यथार्थ ज्ञान पर विचार करके इस पहेली का हल सोचते हैं तो देखते हैं कि मनुष्य किसी दुर्घटना या घटना से पीड़ित व्यक्ति की उस समय की परिस्थिति को ही देखते हैं और अनुभव करते हैं कि विरोधी पक्ष ही दोषी है। परन्तु इस विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान, कर्म-सिद्धान्त अर्थात् कर्म के विधि-विधान और आत्माओं के अनेक जन्मों के हिसाब-किताब को विचार करते हैं तो यही परिणाम निकलता है कि पीड़ित आत्मा स्वयं ही अपने दुख का दोषी है।

## 6. कर्म और श्रीमत

ज्ञान सागर परमात्मा ही कर्म की गहन गति का ज्ञाता है और वे ही कल्पान्त में आकर कर्म का विधि-विधान बताकर श्रेष्ठ कर्म करने की श्रीमत देते हैं, जिससे आत्माओं और समस्त विश्व की चढ़ती कला होती है। जिनको परमात्मा पर और उनके द्वारा दी गई श्रीमत पर निश्चय होता है, वे ही उस पर चलकर अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाकर जीवन को श्रेष्ठ बना सकते हैं। ये अटल सत्य है कि बाबा की श्रीमत पर चलने से कब किसका कोई विकर्म हो नहीं सकता, किसका कोई अहित नहीं हो सकता।

दुनिया में प्राय: तीन प्रकार की मतें हैं। एक है श्रीमत अर्थात् ईश्वरीय मत, दूसरी है दैवी मत और तीसरी है आसुरी मत अर्थात् मनुष्य मत। श्रीमत से ही आत्मा पावन बनती है। दैवी मत और आसुरी मत दोंनो ही आत्मा की उतरती कला की मतें हैं परन्तु दैवी मत से पाप नहीं होता है, आसुरी मत से पाप-कर्म होते हैं और आत्मा को पाप कर्मों के फलस्वरूप दुख भोगना होता है। दैवी मत वालों को दुख की महसूसता हो नहीं सकती। अभी संगमयुग पर देवी-देवतायें तो हैं नहीं, इसलिए दैवी मत मिल नहीं सकती। अभी है ईश्वरीय मत और आसुरी मत। ईश्वरीय मत से चढ़ती कला और आसुरी मत से गिरती कला होती है।

शिवबाबा ही आकर आत्माओं को श्रीमत देकर श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान और श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति देते हैं। अभी बाबा ने हमको जीवन के हर क्षेत्र और हर प्रकार कर्मों अर्थात् हमारे दैनिक कर्मों, व्यवहारिक कर्मों और परमार्थिक कर्मों के लिए श्रीमत दी है, जिससे हमारे सदा ही श्रेष्ठ कर्म हों। बाबा ने हमको मन्सा-वाचा-कर्मणा, दृष्टि-वृत्ति-स्मृति से भी होने वाले कर्मों के लिए श्रीमत दी है अर्थात् इन सबसे हमारे जो कर्म होते हैं, वे कैसे हों, वह भी बताया है। इसके लिए हमारा खाना-पीना, सोना, उठना-बैठना, धन्धा-नौकरी आदि करना, चिन्तन, स्वाध्याय, स्व-चेकिंग, मन्सा-वाचा-कर्मणा सेव, रहन-सहन, प्रवृत्ति में रहते ट्रस्टी जीवन, कुमार-कुमारी जीवन, वानप्रस्त जीवन, समर्पित जीवन, टीचर्स जीवन आदि के साथ-साथ मृत्यु अर्थात् अन्त घड़ी के लिए भी बाबा ने श्रीमत दी है। जो जितना उस पर निश्चय करके उसका पालन करता, उसके अनुसार कर्म करता है, वह उतना ही श्रेष्ठ बनता है।

"सर्व शास्त्र शिरोमणी श्रीमद्भगवत गीता है ईश्वरीय मत की। ईश्वरीय मत, दैवी मत और आसुरी मत का राज़ एक ईश्वर ही बताते हैं, राजयोग की नॉलेज देते हैं। ... सतयुग-त्रेता है ज्ञान का फल, ऐसे नहीं कि वहाँ ज्ञान मिलता है। बाप आकर भक्ति का फल ज्ञान देते हैं। अब एक बाप को याद करो तो सतोप्रधान बन जायेंगे, रचना के आदि-मध्य-अन्त को याद करो तो चक्रवर्ती राजा बन जायेंगे।" सा.बाबा 23.8.04 रिवा.

"गीता में भी है मन्मनाभव। परन्तु बाप कोई संस्कृत में नहीं बतलाते हैं। बाप मन्मनाभव का अर्थ बताते हैं। देह सहित देह के सर्व धर्म छोड़ अपने को आत्मा निश्चय करो और मुझ बाप को याद करो।" सा.बाबा 17.10.04 रिवा.

"अभी तुम बच्चों को श्रीमत मिल रही है, श्रेष्ठ बनने के लिए। मनुष्य मत क्या कहती है, ईश्वरीय मत क्या कहती है तो जरूर ईश्वरीय मत पर चलना पड़े।... तुम आसुरी मत पर थे, अभी तुमको ईश्वरीय मत मिलती है।" सा.बाबा 18.10.04 रिवा.

"गाया जाता है - मनुष्य मत, ईश्वरीय मत, दैवी मत। अब तुम्हें मिलती है ईश्वरीय मत, जिससे

तुम मनुष्य से देवता बनते हो। ... अभी यह पुरुषोत्तम संगमयुग है, जब तुमको श्रीमत मिलती है।"

सा.बाबा 25.11.04 रिवा.

"श्रेष्ठ कर्म से श्रेष्ठ जीवन स्वत: ही बनती है, इसलिए हर कार्य के पहले अपनी चेकिंग करनी है कि वह कर्म श्रीमत के अनुसार है?"

अ.बापदादा 24.1.70

"एक बार अपनी कमियों को बाप के आगे रखने के बाद अगर दुबारा कर लिया तो क्षमा के सागर के साथ 100 गुणा सजा भी ड्रामा प्रमाण स्वत: ही मिल जाती है। ... हर कार्य और संकल्प को अव्यक्त बल से अव्यक्त रूप द्वारा वेरीफाय कराओ। जैसे साकार में वेरीफाइ कराते थे।"

अ.बापदादा 23.10.70

"इनकी एक्टिविटी का मैं ही रेस्पान्सिबुल हूँ। ... कदम-कदम ईश्वरीय डायरेक्शन समझकर चलेंगे तो कभी घाटा नहीं होगा। निश्चय में ही विजय है।"

सा.बाबा 17.1.05 रिवा.

"अभी तुम ने अनेक मतों और ईश्वरीय मत को भी समझा है। कितना फर्क है। ... कोई भी दैवी मत वा मनुष्य मत से वापस नहीं जा सकते। दैवी मत से भी तुम उतरते ही हो क्योंकि कलायें कम होती जाती हैं। आसुरी मत से भी उतरते हो। परन्तु दैवी मत में सुख है और आसुरी मत में दुख है। ... श्रीमत ही श्रेष्ठ बनाती है।"

सा.बाबा 23.12.04 रिवा.

"पूछते हैं - बच्चे की शादी करायें ... पूछते हैं तो इससे ही समझा जाता है कि हिम्मत नहीं है, तो बाबा कह देते हैं भल कराओ... मोह भी तो है ना।... यह तो समझने की बात है कि हमको फल बनना है तो पवित्र के हाथ का खाना है। उसके लिए अपना प्रबन्ध करना है। इसमें पूछना थोड़ेही होता है।"

सा.बाबा 22.6.05 रिवा.

"अब श्रीमत मिलती है ड्रामा अनुसार। जो कुछ कहा सो ड्रामा अनुसार। उसमें जरूर कल्याण ही होगा। नुकसान होता है, उसमें भी कल्याण ही है। हर बात में कल्याण है। शिवबाबा है ही कल्याणकारी। उनकी मत अच्छी है, अगर उस पर कोई चलता रहे तो।"

सा.बाबा 24.10.73 रिवा.

"भोजन भी शुद्ध लेना है। अगर लाचारी है, नहीं मिलता है तो राय पूछो। ... तुम जितना श्रीमत पर चलेंगे, उतना श्रेष्ठ बनेंगे। ... बाप तुमको ऐसे कर्म सिखलाते हैं, जो कोई भी विकर्म न बनें। किसी को दुख न दो, पतित का अन्न मत खाओ, विकार में मत जाओ।"

सा.बाबा 3.8.05 रिवा.

गाया हुआ है - निश्चयबुद्धि विजयन्ति और संशयबुद्धि विनश्यन्ति अर्थात् निश्चय में

सदा विजय समाई है। जो आत्मा परमात्मा के महावाक्यों पर, उनकी श्रीमत पर निश्चय करके चलता है, उसके जीवन में असफलता हो नहीं सकती।

"अगर एक बाप से सर्व प्राप्ति का सम्बन्ध, सर्व सम्बन्धों का अनुभव और सदा सहारे-दाता का अटल विश्वास और निश्चय है तो बापदादा निराकार-आकार होते भी स्नेह के बन्धन में बाँधे हुए हैं।... भक्ति मार्ग में भी मीरा को साक्षात्कार नहीं लेकिन साक्षात् आनुभव हुआ तो क्या ज्ञान सागर के डायरेक्ट ज्ञान स्वरूप बच्चों को साकार रूप में सर्व प्राप्ति के आधार मूर्त, सदा सहारे दाता बाप का अनुभव नहीं हो सकता। फिर सर्वशक्तिवान को छोड़कर यथा-शक्ति आत्माओं को सहारा क्यों बनाते हो। यह भी एक गुह्य कर्मों का हिसाब बुद्धि में रखो। कर्मों का हिसाब कितना गुह्य है, इसको जानो।" अव्यक्त बापदादा 8.4.82

यदि परमात्मा का बनकर भी यथाशक्ति आत्माओं का सहारा लेते हैं तो ये भी परमात्मा का नाम बदनाम करना है और उस विकर्म का भी फल उस आत्मा को मिलेगा और परमात्मा का सहारा भी छूट जायेगा क्योंकि परमात्मा की मदद उसको ही मिलती है, जो उस पर श्रृद्धा और विश्वास रखते हैं।

"यह जो लक्ष्य रखते हो कि कहाँ-कहाँ सर्विस के कारण झुकना पड़ेगा। यह लक्ष्य ही राँग है। इस लक्ष्य में ही कमजोरी भरी हुई है। जब बीज ही कमजोर है तो फल क्या निकलेगा। कोई भी नई स्थापना करने वाला यह नहीं सोचता है कि कुछ झुककर के करना है।"

अ.बापदादा 18.4.71

"अगर निश्चय हो कि भगवान बाप हमको पढ़ाते हैं तो अपार खुशी रहनी चाहिए। ... अपन को आत्मा समझ मुझ बाप को याद करो तो मैं गारन्टी करता हूँ कि तुम 21 जन्म कभी रोगी नहीं बनेंगे। ... इस याद से पाप भस्म होते जायेंगे।"

सा.बाबा 7.5.05 रिवा.

"पढ़कर ऊंच बनना चाहिए। दिलशिकस्त क्यों होते हो कि सभी थोड़ेही राजायें बनेंगे! यह ख्याल आया, फेल हुआ। स्कूल में बैरिस्टरी, इन्जीनियरिंग आदि पढ़ते हैं तो ऐसे कहेंगे क्या कि सब थोड़ेही बैरिस्टर बनेंगे।" सा.बाबा 9.5.05 रिवा.

"किसी भी प्रकार की परिस्थिति या प्रकृति या कोई व्यक्ति निश्चय के आसन को कितना भी हिलाने का प्रयत्न करे, लेकिन वह हिला न सके - ऐसा अचल-अडोल आसन है? निश्चय के आसन में सदा अचल रहने वाला निश्चय-बुद्धि विजयन्ति गाया हुआ है। तो अचल रहने की निशानी है - हर संकल्प, बोल और कर्म में सदा विजयी। ऐसे विजयी रत्न स्वयं को अनुभव करते हो?" अ.बापदादा 8.2.75

"विनाश काले प्रीत बुद्धि और विप्रीत बुद्धि - यह याद के लिए कहा जाता है। ... प्रीत भी अव्यभिचारी चाहिए। ... बाबा से प्रीत रखते-रखते जब कर्मातीत अवस्था होगी तब यह शरीर छूटेगा और लड़ाई लगेगी।... जब सबकी प्रीत बुद्धि हो जाती है, उस समय फिर विनाश होता है।" सा.बाबा 12.5.05 रिवा.

"पूरा निश्चयबुद्धि बनना है। बाप हमारा साथी है, बाबा सदा मददगार है। निश्चयबुद्धि विजयन्ति। ... यह सदा स्मृति में रख कदम उठाओ तो फिर सदा सिद्धि-स्वरूप हो जायेंगे। अगर विधि यथार्थ है तो कोई संकल्प, बोल वा कर्म में सिद्धि न हो, यह हो ही नहीं सकता।"

अ.बापदादा 6.8.72

"जब विजय निश्चित है तो निश्चिन्त रहेगा ना। कोई भी बात में चिन्ता की रेखा दिखाई नहीं देगी। ऐसे निश्चयबुद्धि विजयी, निश्चित और सदा निश्चिन्त रहने वाले हो ? ...बाप में निश्चयबुद्धि के साथ-साथ अपने आप में भी निश्चयबुद्धि होने चाहिए और साथ-साथ जो भी ड्रामा के हर सेकेण्ड की एक्ट रिपीट हो रही है, उसमें भी 100 प्रतिशत निश्चयबुद्धि चाहिए - इसको कहा जाता है निश्चयबुद्धि।" अ.बापदादा 27.2.72

"जब माया से हार खाते हो तो क्या प्रीत बुद्धि हो ? प्रीत बुद्धि अर्थात् विजयी।...प्रीत बुद्धि बाला कब श्रीमत के विपरीत एक संकल्प भी नहीं उठा सकता।...प्रीत बुद्धि अर्थात् बुद्धि की लगन वा प्रीत एक प्रीतम के साथ सदा लगी हुई हो। जब एक के साथ सदा प्रीत है तो अन्य किसी भी व्यक्ति वा वैभवों के साथ प्रीत जुट नहीं सकती, क्योंकि प्रीत बुद्धि अर्थात् सदा बापदादा सम्मुख अनुभव करेंगे।" अ.बापदादा 2.2.72

"सपूत तो हो ही। ... सपूत बच्चे हैं तब तो श्रीमत पर चल रहे हैं। बाकी रही सबूत दिखाने की बात, वह तो यथा शक्ति दिखा रहे हैं और दिखाते रहेंगे। जितना बाप बच्चों में निश्चयबुद्धि हैं, बच्चे अपने में निश्चयबुद्धि कम हैं। इसलिए हर कार्य में विजय हो, वह रिजल्ट कब-कब दिखाई देती है।" अ.बापदादा 22.6.71

"कमजोर संकल्प करना अर्थात् स्वयं में संशय का संकल्प... कमजोरियों के रूप में एक भूत के साथ और माया के भूतों का आह्वान करते हो अथवा बुद्धि में स्थान देते हो।... भय के भूत को भी जब तक बुद्धि से नहीं निकाला तब तक इस भूत के साथ बाप की याद बुद्धि में कैसे रह सकती है ? ... निश्चयबुद्धि विजयन्ति।" अ.बापदादा 4.7.74

"श्रीमत को कभी भूलना नहीं है। इसमें बड़ी सावधानी चाहिए। जो कुछ करो, बाप से पूछो - बाबा हम इसमें मूँझते हैं, इसे करने में हमारे ऊपर कोई पाप तो नहीं लगेगा।"

सा.बाबा 19.10.03 रिवा.

"ऐसी निमित्त बनी हुई आत्माओं के प्रति कभी भी कोई व्यर्थ संकल्प नहीं उठाना चाहिए।... कर्मों की लीला बड़ी विचित्र है। जिनको बाप ने निमित्त बनाया, उनका भी जिम्मेवार बाप है।... ऐसे ही निमित्त नहीं बनाया है, सोच-समझकर ड्रामा के लॉ-मुजिब निमित्त बनाया गया है।"

अ.बापदादा 10.1.90

"कर्मों की लीला बड़ी विचित्र है। ... इन गुह्य बातों को बाप जाने और जो समझदार बच्चे हैं, वे जानें। निमित्त बनी हुई आत्माओं के लिए कुछ भी कहना अर्थात् बाप के लिए कहना क्योंकि निमित्त बाप ने बनाया है ना।"

अ.बापदादा 10.1.90

"आप कहेंगे - "वाह श्रेष्ठ कर्म"... सदा श्रेष्ठ कर्म हों, साधारण नहीं। कर्मों का कूटना तो खत्म हो गया लेकिन श्रेष्ठ कर्म ही सदा हों - इसमें अण्डरलाइन करना।"

अ.बापदादा 10.1.90

"बापदादा ने श्रीमत दी है कि भोजन करने के पहले भोग लगाओ, पीछे खाओ। इससे अन्न का मन पर प्रभाव पड़ेगा, दूसरा बाप की श्रीमत मानने से आज्ञा पालन का भी फल मिलेगा।"

अ.बापदादा 22.1.90 पार्टी

"ललकार न होने का कारण क्या है? ... कई बातों को अंगीकार कर लेते हैं चाहे स्थूल में चाहे सूक्ष्म में। ... मैंपन निकलकर बाबा-बाबा शब्द आयेगा तब ललकार होगी। परमात्मा में ही परम बल होता है।... साकार रूप में कब कहा कि मैं यह चला रहा हूँ, मैंने मुरली अच्छी चलाई।"

अ.बापदादा 2.4.70

"समझाने की भी ताक़त चाहिए। अगर नहीं समझा सकते तो गोया ताक़त नहीं है, योग नहीं है। बाबा भी मदद उनको करते हैं जो योगयुक्त बच्चे हैं। ड्रामा में जो है, वह रिपीट होता है। ... हम श्रीमत से एक्ट में आते हैं।"

सा.बाबा 29.11.06 रिवा.

"यहाँ काशी कलवट खाने की बात नहीं है। यह है जीते जी मरना और बाप की श्रीमत चलना। ... अब बाप चेतन्य में आकर कहते हैं - बच्चे मेरा बनो। मैं आया हूँ तुमको घर ले चलने। पवित्र बने बिगर तो चल नहीं सकते।"

सा.बाबा 18.10.06 रिवा.

"बापदादा ने श्रीमत दी है कि भोजन करने के पहले भोग लगाओ, पीछे खाओ। इससे अन्न का मन पर प्रभाव पड़ेगा, दूसरा बाप की श्रीमत मानने से आज्ञा पालन का भी फल मिलेगा।"

अ.बापदादा 22.1.90 पार्टी

"जो करेगा, वह पायेगा और कितना पायेंगे - एक का पद्मगुणा।... इसलिए श्रीमत को प्रैक्टिकल में लाने में पहले मैं। तब ही सफलता को हर कदम में अनुभव करेंगे।"

अ.बापदादा 13.12.90

## ७. कर्म और विभिन्न योनियों की आत्मायें

यह सृष्टि कर्म क्षेत्र है, यहाँ पर आत्मायें कर्म करने और उसका फल भोगने का पार्ट बजाने ही आती हैं। दुनिया में और विशेष भारत में यह मान्यता है कि मनुष्य आत्मा अपने बुरे कर्मों का फल भोगने के लिए विभिन्न योनियों में भटकती है परन्तु अभी ज्ञान सागर बाबा ने हमको यथार्थ ज्ञान दिया है, जिससे हमारी समझ में आया है कि ऐसा नहीं है। हर योनि की आत्मा अपनी योनि के अनुसार कर्म करती है और उस योनि के अनुसार उसके कर्मों का फल मिलता है। ये मनुष्यों की भूल है या भ्रम है कि मनुष्यात्मा अपने बुरे कर्मों का फल भोगने के लिए विभिन्न निम्न कोटि की योनियों में जन्म लेता है। हर योनि की आत्मा को अपनी ही योनि में अपने कर्मों का अच्छा या बुरा फल मिलता है।

"इसको कयामत का समय कहा जाता है। सभी का हिसाब-किताब चुक्तू होना है। जानवरों का भी हिसाब-किताब चुक्तू होता है ना। कोई कोई राजाओं के पास रहते हैं, कितनी उनकी सम्भाल होती है।... यह भी ड्रामा में नूँध है।" सा.बाबा 11.3.69 रिवा.

"ऐसे हमारे जन्म तो बहुत हैं लेकिन सबसे महत्व इस जन्म का है।... समझते हैं कि मनुष्य जन्म अति दुर्लभ है। 84 लाख योनियों के बाद ही एक सुख का जन्म मिलता है। परन्तु ऐसा होता तो सभी मनुष्य सुखी होने चाहिए।... यह जन्म सबसे उत्तम है।"

मातेश्वरी 24.6.65

## ८. कर्म और साक्षी स्थिति

साक्षी स्थिति जीवन की सर्वश्रेष्ठ स्थिति है परन्तु उस स्थिति को पाने के लिए, उस स्थिति में स्थित होने के लिए कर्म करना अति आवश्यक है, उसके लिए बाबा ने जो ज्ञान दिया है, उसको मनन-चिन्तन करके समझना और धारण करना अति आवश्यक है।

ज्ञान को समझकर जो आत्मा इस विश्व की हर घटना को साक्षी होकर देखेगा, उसमें ईर्ष्या-द्वेष, घृणा, क्रोध आदि नहीं होगा, जिससे उससे कोई विकर्म नहीं होगा। साक्षी होकर इस विश्व-नाटक को देखने वाले को ये विश्व-नाटक परमानन्द मय अनुभव होगा, उसको हर आत्मा निर्दोष अनुभव होगी।

साक्षी होकर इस विश्व-नाटक को देखना भी एक कर्म है।

* विश्व-नाटक और कर्म के विधि-विधान को जानने वाली आत्मा का कर्तव्य है कि वह हर घटना को साक्षी होकर देखे, उसके प्रभाव में न आये।

**साक्षी - कर्मातीत - मुक्त-जीवनमुक्त स्थिति**

विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान की धारणा से आत्मा साक्षी होकर इस विश्व-नाटक में पार्ट बजाते हुए अर्थात् कर्म करते हुए, अपने और दूसरों के पार्ट को देखते हुए जीवनमुक्ति के परम सुख का अनुभव करती है। साक्षी स्थिति ही इस विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान की धारणा का दर्पण है। साक्षी स्थिति में स्थित आत्मा कर्मातीत और मुक्ति के लिए यथार्थ पुरुषार्थ अर्थात् कर्म सहज कर सकती है।

"कर्मयोगी के आगे कोई कैसा भी आ जाये लेकिन वह स्वयं सदा न्यारा और प्यारा रहेगा। नॉलेज द्वारा जानेगा कि इसका यह पार्ट चल रहा है। घृणा वाले से स्वयं भी घृणा कर ले, यह हुआ कर्म का बन्धन। ऐसा कर्म के बन्धन में आने वाला एकरस नहीं रह सकता। ... इसलिए अच्छे को अच्छा समझकर साक्षी होकर देखो और बुरे को रहमदिल बन रहम की निगाह से परिवर्तन करने की शुभ भावना से साक्षी होकर देखो।" अ. बापदादा 18.4.82

"भक्ति की भी ड्रामा में नूँध है। मैं भी ड्रामा की नूँध अनुसार तुम बच्चों को आकर समझाता हूँ। ... कोई गायन भी करते हैं तो कोई विघ्न भी डालते हैं। जो कुछ होता है, वह सब ड्रामा में नूँश है। ... कुछ न कुछ लैस आ जाती है। कर्मों का हिसाब-किताब है ना। जब तक कर्मातीत अवस्था नहीं बनी है, तब तक कुछ न कुछ होता रहता है। हिसाब-किताब चुक्तू हुआ और शरीर छोड़ देंगे और लड़ाई शुरू हो जायेगी।"

सा.बाबा 6.11.06 रिवा.

"जिनको मरना होगा, वे तो मरेंगे, जाकर दूसरा पार्ट बजायेंगे। इसमें चिन्ता की कोई बात ही नहीं। बाबा कहते हैं खबरदार रहना। रोया तो खेल खलास।... देहाभिमान के कारण ही रोते रहते हैं। ... जो कुछ होता है, वह साक्षी होकर देखना है। बाप साक्षी होकर देखते भी हैं तो पार्ट भी बजाते हैं। बच्चों को श्रीमत देते हैं कि हर एक के कर्मों का हिसाब-किताब अलग-अलग है।" सा.बाबा 1.12.06 रिवा.

## ९. कर्म और पुनर्जन्म

जैसे नाटक में वस्त्र धारण करना और उतारना स्वभाविक होता है, ऐसे ही जन्म और पुनर्जन्म इस विश्व-नाटक की एक स्वभाविक किया है। जन्म का आधार आत्मा के कर्म हैं। एक बच्चा राजा के घर में जन्म लेता, दूसरा भिखारी के घर में जन्म लेता, जिससे जन्मते ही एक राजकुमार कहलाता और दूसरा भिखारी कहलाता है, इसका आधार उस आत्मा के पूर्व जीवन के कर्म ही हैं। कर्म ही किसी आत्मा के पुनर्जन्म की दिशा और दशा निर्धारित करते हैं

अर्थात् कहाँ जन्म होगा, कौन माता-पिता बनेगा, ये सब उस आत्मा के किये गये कर्मों के हिसाब-किताब पर आधारित होता है।

* ये सृष्टि चक्र भूत-वर्तमान-भविष्य के घटनाचक्र पर सतत गतिशील है। हर आत्मा का वर्तमान जीवन, भूतकाल के कर्मों का फल और वर्तमान जीवन के कर्म भविष्य जीवन का बीज या आधारशिला है। भूतकाल के चिन्तन और भविष्य की चिन्ता से कब भविष्य जीवन श्रेष्ठ नहीं बनता है। इसीलिए ही गायन है - बीती को चितवो नहीं, आगे की धरो न आश ...। वर्तमान ही हमारे हाथों में है, जब हम श्रेष्ठ कर्म करके भविष्य जीवन को श्रेष्ठ बना सकते हैं।

## A. कर्म और भविष्य जन्म

यह विश्व-नाटक जन्म और पुनर्जन्म का एक खेल है, जिसका आधार कर्म है। हर आत्मा के अपने कर्म ही उसके भविष्य जन्म की दिशा और दशा निर्धारित करते हैं। अपने कर्म के आधार पर ही किसी का जन्म राजा के घर में होता है तो वह राजकुमार कहलाता है और किसी का जन्म भिखारी के घर में होता है तो जन्म से ही भिखारी कहलाता है। किसी को जन्म से ही दैविक, दैहिक, भौतिक सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं तो किसी को जन्म से ही दुख-अशान्ति मय जीवन प्राप्त होता है। हर आत्मा के भविष्य जन्म का आधार वर्तमान जीवन में किये गये कर्म और भूतकाल के जन्मों में किये गये कर्मों का संचित खाता है।

हर मनुष्य का वर्तमान जन्म भूतकाल का फल और भविष्य जन्म का बीज है। वर्तमान ही मनुष्य के हाथों में होता है, इसलिए हर आत्मा को अपने भविष्य जन्म को अच्छा बनाने के लिए अपने वर्तमान जीवन के कर्मों पर बहुत ध्यान रखना चाहिए और उनको श्रेष्ठ बनाना चाहिए। श्रेष्ठ कर्म ही श्रेष्ठ प्रालब्ध या सुखमय भविष्य का आधार है।

* भविष्य क्या होगा, कैसा होगा, इसकी चिन्ता नहीं करो परन्तु भविष्य वह होगा, जो अभी तुमकर रहे हो। इसलिए सर्व चिन्ताओं को छोड़कर वर्तमान में श्रेष्ठ कर्म करो तो भविष्य स्वत: ही अच्छा होगा। परमपिता परमात्मा की मधुर याद और सर्व आत्माओं को ये रास्ता बताना सबसे श्रेष्ठ कर्म है, जो इसे करता है, उसका भविष्य अन्धकारमय हो नहीं सकता - इस सत्य का ज्ञान और निश्चय करके वर्तमान जीवन को सफल करो तो भविष्य निश्चित ही श्रेष्ठ होगा। परमात्मा का हाथ तुम्हारे सिर पर है और वह तुमको अपने सुन्दर-सुखमय भविष्य का मार्ग प्रदर्शित कर रहा है, उसका अनुभव और निश्चय कर अपना भविष्य अच्छा बनाओ।

* मनुष्य अपने उज्ज्वल भविष्य के लिए इस जीवन में साधन-सम्पत्ति का संचय करता है, विभिन्न सम्बन्धों की रचना करता है परन्तु सत्यता तो ये है कि उज्ज्वल भविष्य के लिए श्रेष्ठ कर्म-फल कर संचय सबसे श्रेष्ठ संचय है परमात्मा का सम्बन्ध ही सबसे श्रेष्ठ सम्बन्ध है, जो

आत्मा को सदा सहयोगी है और काम आता है। स्थूल सुख-साधनों का संचय तो यहीं पड़ा रहता है परन्तु वह संचय हमने कैसे किया, उसका फल भविष्य जीवन में साथ जाता है। इसलिए इस सत्य को ध्यान में रखकर संचय और उपभोग करो। सम्बन्ध भी सब इस देह के साथ ही छूट जाते हैं और नये जन्म में कर्मानुसार नये सम्बन्ध बनते हैं।

## B. कर्म और पूर्वजन्म

पूर्व जन्म में किये गये कर्म ही मनुष्य के वर्तमान जन्म का आधार हैं। जैसा पूर्वजन्म में कर्म किया है, जैसे संस्कार बनाये हैं, उस अनुसार ही वर्तमान जन्म मिला है। प्राय: अज्ञानता के वशीभूत दुख-अशान्ति के समय मनुष्य अपने कर्मों को ही कूटते हैं परन्तु पूर्व जन्म के कर्मों को कूटने से कोई लाभ नहीं है, वर्तमान ही हमारे हाथों में है और उसको सुधारना ही हमारा कर्तव्य है। इसीलिए गाया हुआ - बीती को चितवो नहीं, आगे की धरो न आश अर्थात् पूर्वजन्म के आधार पर जो प्राप्त हुआ है, उसे सहर्ष स्वीकार करके वर्तमान को सुधारना ही ज्ञानी आत्मा का कर्तव्य है।

"कोई शरीर छोड़ते हैं तो जाकर दूसरा पार्ट बजायेंगे, इसमें रोने से क्या होगा। ... यह समझ में आता है कि जैसा-जैसा आज्ञाकारी बच्चा होगा, उस अनुसार जरूर अच्छे घर में जन्म लिया होगा। ... जो जैसा कर्म करते हैं, ऐसे घर में जाकर जन्म लेते हैं। ... इसमें बड़ी विशाल बुद्धि से विचार सागर मन्थन करना होता है।"

सा.बाबा 17.11.06 रिवा.

## C. कर्म और वर्तमान जन्म

जब जीवात्मा को इस सत्य का ज्ञान हो जाता है कि हमारे वर्तमान के दुख-अशान्ति, कर्मभोग, कटु-सम्बन्धों का कारण हमारे ही पूर्वजन्म के किये गये कर्म और व्यवहार हैं तो हमारे अन्दर उनको सहन करने की शक्ति आ जाती है और सहज ही हम उनको भोग या योग द्वारा पूरा कर लेते हैं। वर्तमान समय अज्ञानता के वशीभूत मनुष्य अपने पूर्वजन्म के कर्मों को न देखकर, अपनी दुख-अशान्ति के लिए सदा दूसरों को ही दोष देते रहते हैं, जिससे पूर्वजन्म के कर्मों के आधार पर वर्तमान तो खराब है ही, साथ ही व्यर्थ चिन्तन के कारण और ही उसकी भोगना बढ़ जाती है तथा वर्तमान में और भी नये विकर्म करके भविष्य को भी अन्धकारमय बना देते हैं।

इस सत्य को हमको सदा याद रखना चाहिए कि वर्तमान ही हमारे हाथ में है, जिसको अच्छा बनाना हमारा परम कर्तव्य है। वर्तमान भूतकाल के कर्मों का फल और भविष्य की आधार-शिला है। अच्छे भविष्य रूपी भवन का निर्माण करने के लिए वर्तमान के कर्मों को श्रेष्ठ बनाना

परमावश्यक है, जिसके लिए ही बाबा हमको श्रीमत दे रहा है और सुन्दर सुखमय भविष्य का निर्माण करने की प्रेरणा दे रहा है। पालन करना हमारा कर्तव्य है। वर्तमान को अच्छा बनाने से भविष्य स्वत: ही अच्छा बन जाता है। जो करेगा सो पायेगा, जो बोयेगा वह काटेगा। विश्व-नाटक की यथार्थता को समझकर जिसको भूतकाल का चिन्तन और भविष्य की चिन्ता नहीं होगी, वही अपना वर्तमान और भविष्य अच्छा बना सकता है अर्थात् उसके लिए यथोचित कर्म कर सकता है।

"सारे विश्व की सर्व आत्माओं में से सिर्फ थोड़ी सी आत्माओं को यह विशेष पार्ट मिला हुआ है। कितनी थोड़ी आत्मायें हैं, जिन्होंको बीज के साथ सम्बन्ध द्वारा श्रेष्ठ प्राप्ति का पार्ट मिला हुआ है।" अ.बापदादा 16.1.85

"भाग्य अपने कर्मों के हिसाब से सभी को मिलता है। द्वापर से अब तक आप आत्माओं को भी कर्म और भाग्य के हिसाब-किताब में आना पड़ता है लेकिन वर्तमान भाग्यवान युग में भगवान भाग्य देता है। भाग्य की श्रेष्ठ लकीर खींचने की विधि है "श्रेष्ठ कर्म रूपी कलम", जो बाप आप बच्चों को दे देते हैं, जिससे जितनी श्रेष्ठ, स्पष्ट जन्म-जन्मान्तर के भाग्य की लकीर खींचने चाहो, उतनी खींच सकते हो। और कोई समय को यह वरदान नहीं है। इसी समय को यह वरदान है।" अ.बापदादा 16.1.85

"बाप स्वर्ग का वर्सा देते हैं... द्वापर से वाम मार्ग शुरू होता है फिर हर एक के कर्मों पर मदार है। कर्मों अनुसार आत्मा एक शरीर छोड़कर दूसरा लेती है। ... सतयुग में यह ज्ञान नहीं रहता कि यह राजाई का वर्सा बेहद के बाप का दिया हुआ है।"

सा.बाबा 18.9.06 रिवा.

## १०. कर्म और विश्व-नाटक

ये अनादि-अविनाशी विश्व-नाटक कर्म-फल-कर्म पर आधारित एक घटना-चक्र है, जो हर 5000 वर्ष के बाद हू-ब-हू पुनरावृत्त होता है। ये विश्व-नाटक क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त पर 5000 वर्ष तक सतत चलता रहता है और अपनी सतत परिवर्तनशीलता के कारण नित्य नया प्रतीत होता है। जो इसको साक्षी होकर देखता, उसके लिए ये परम-सुखदायी, परमानन्दमय है।

ये अनादि-अविनाशी विश्व-नाटक है, जो हू-ब-हू पुनरावृत्त होता है परन्तु हमको आगे का ज्ञान नहीं है इसलिए पुरुषार्थ करना हर आत्मा का कर्तव्य है और आत्मायें करती भी हैं क्योंकि कर्म और कर्मफल, पुरुषार्थ और प्रालब्ध इस विश्व नाटक का विधि-विधान है, जिसके

अनुसार ये नाटक सफलतापूर्वक सतत गतिशील है। कर्म के बिना प्रालब्ध मिल नहीं सकती और कोई भी आत्मा इस कर्मक्षेत्र पर रह नहीं सकती। ड्रामा के पार्ट और कर्म का संकल्प का इस विश्व-नाटक में अद्वितीय सन्तुलन है।

ये विश्व-नाटक बड़ा अद्भुत नाटक है, जिसमें हर आत्मा में उसके 5000 वर्ष के कर्म अर्थात् पार्ट की भी अनादि-अविनाशी नूँध है तो उसके फल की भी अनादि नूँध है परन्तु इसके गुह्य रहस्य को न जानने के कारण पुरुषार्थ करना और उसका फल भोगना, जीवन की स्वभाविक क्रिया है।

"पुरुषार्थ अनुसार प्रारब्ध बनती है। पुरुषार्थ ड्रामा अनुसार चलता है परन्तु ड्रामा समझ बैठ नहीं जाना है। .. (खांसी का मिसाल) बिना दवाई खाये ठीक नहीं होगी।" सा.बाबा 19.7.68

* इस विश्व-नाटक में सब पूर्व निश्चित है, जो समय पर पुनरावृत्त होता है परन्तु पुरुषार्थ और प्रालब्ध, कर्म और फल के विधान का पूर्ण सन्तुलन है। कहाँ भी किसी नियम-सिद्धान्त और न्याय की मर्यादा का उलंघन नहीं है।

* यथार्थ ज्ञानी के लिए इस विश्व-नाटक में न कोई बड़ा है और न कोई छोटा है। सर्वात्माओं का अनादि-अविनाशी पार्ट है, जो समयानुसार बदलता रहता है। जो आज महान है, वही कल छोटा भी हो सकता है और जो आज छोटा है, वह कल महान भी बनता है। इसलिए इस विश्व-नाटक के गुह्य रहस्य को जानने वाले की कब किसके पार्ट से ईष्या-घृणा नहीं होगी, न उसमें अहंकार-हीनता की भावना होगी, जो जीवात्मा के विकर्मों का मूल कारण हैं। इसलिए विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञाता के कर्मों में अवश्य ही श्रेष्ठता होगी।

* ये विश्व-नाटक का सारा खेल ही सारे कल्प में आत्माओं के साथ आत्माओं के लेन-देन, हिसाब-किताब के आधार पर चलता है। परमात्मा संगमयुग पर आकर इसका राज़ बतलाता है और कर्मों की गुह्य गति का राज़ समझाता है, जिससे आत्मायें श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ होती हैं और आत्माओं के सुखदाई हिसाब-किताब स्थापित होते हैं, जिससे नये कल्प का आरम्भ होता है।

* ये विश्व-नाटक का सारा खेल ही सम्बन्धों के आधार पर बना हुआ है, जो कल्प के आदि से अन्त तक चलता रहता है। माता-पिता, भाई-बहन ... शत्रु-मित्र आदि से अन्त तक चलते हैं। श्रेष्ठ कर्मों से सुखदायी सम्बन्धों का निर्माण होता है, जिनको कर्म-सम्बन्ध कहा जाता है और अशुभ कर्मों से दुखदायी सम्बन्धों का निर्माण होता है, जिनको कर्म-बन्धन कहा जाता है।

* ये अनादि-अविनाशी ड्रामा है। किसी भी आत्मा के कल्प2 के पार्ट में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता है परन्तु ये ड्रामा हर क्षण परिवर्तनशील है और हर आत्मा का पार्ट और इस नाटक का

दृश्य हर क्षण परिवर्तन होता है परन्तु ड्रामा में कर्म प्रधान है। इसमें ड्रामा का पार्ट, कर्म और कर्मफल का अद्वितीय सन्तुलन है। इसलिए पुरुषार्थ अर्थात् श्रेष्ठ कर्म करना हर आत्मा का परम कर्तव्य है।

* इस ड्रामा में ड्रामा की भावी और पुरुषार्थ का बड़ा सुन्दर समन्वय है। पुरुषार्थ अर्थात् प्रयत्न अर्थात् कर्म ड्रामा अनुसार चलता है और पुरुषार्थ अनुसार ही आत्मा को फल मिलता है। इस प्रकार ये विश्व-नाटक ड्रामा की भावी, पुरुषार्थ और प्रालब्ध के आधार पर निरन्तर सफलता पूर्वक गतिशील है। बिना पुरुषार्थ अर्थात् प्रयत्न के कोई कर्म नहीं हो सकता और कर्म ही नहीं तो कर्म-फल भी नहीं और ड्रामा का पार्ट भी नहीं चल सकता है। इसलिए ड्रामा अनुसार समय पर आत्मा को कर्म करना ही होता है।

कर्म और कर्म-फल के आधार पर ये विश्व-नाटक चार भागों में विभाजित है, जिनको युग कहा जाता है। इन युगों में सतयुग-त्रेता दो युगों को स्वर्ग अर्थात् दिन और द्वापर-कलियुग को नर्क अर्थात् रात कहा जाता है। पांचवा है छोटा सा पुरुषोत्तम संगमयुग।

"तुमको कितना नशा होना चाहिए। बाप आये ही हैं अविनाशी ज्ञान रतनों का दान देने। यह है अच्छे ते अच्छा दान। ... यह है वण्डरफुल ज्ञान। रचना के आदि-मध्य-अन्त का ज्ञान कोई दे न सके।... अब इन गुह्य राज़ों को तुम ही जानते हो।"

सा.बाबा 22.12.06 रिवा.

## A. कर्म और सतयुग-त्रेता

सतयुग में आत्मा की सतोप्रधान अवस्था होती है, देही-अभिमानी स्थिति होती है। वहाँ देह-भान तो होता है परन्तु देहाभिमान नहीं होता है, जिससे आत्मा का देह पर शासन होता है, जिससे जीवात्मा में विकारों की उत्पत्ति नहीं होती है। विकार न होने के कारण विकर्म नहीं होते हैं, जिसके कारण आत्मा को कोई दुख-अशान्ति नहीं होती परन्तु सतयुग के कर्मों को भी सुकर्म भी नहीं कहा जा सकता है क्योंकि उन कर्मों के द्वारा आत्मा की चढ़ती कला नहीं होती है बल्कि वहाँ भी गिरती कला ही होती है भल आत्मिक शक्ति के ह्रास की गति मन्द होती है, इसलिए सतयुग-त्रेतायुग के कर्मों को बाबा ने अकर्म की संज्ञा दी है परन्तु कोई भी कर्म अकर्म नहीं होता है क्योंकि हर कर्म का अच्छा या बुरा फल अवश्य होता है। एक निराकार परमात्मा ही ऐसी सत्ता है, जिनके द्वारा किये गये कर्म अकर्म कहे जा सकते हैं क्योंकि उनके कर्मों का उन पर कोई प्रभाव नहीं होता है।

## B. कर्म और द्वापर-कलियुग

द्वापर युग आरम्भ होते-होते आत्मा की चार कलायें कम हो जाती हैं, जिससे

आत्मिक शक्ति क्षीण हो जाती है और आत्मा पर देहाभिमान प्रभावी हो जाता है। देहाभिमान के प्रभावशाली होने के कारण आत्मा में 5 विकारों की प्रवेशिता हो जाती है और परिणाम स्वरूप विकर्मों की प्रक्रिया चालू हो जाती है। विकर्मों के फलस्वरूप आत्माओं को दुख-अशान्ति की अनुभूति होना आरम्भ होता है। विकारों और विकर्मों के कारण आत्मिक शक्ति के ह्रास में तीव्रता आ जाती है और आत्मा की कलायें तीव्रता से गिरती जाती है। सतयुग-त्रेता अर्थात् दो युगों अर्थात् 2500 वर्षों में आत्मा की चार कलायें गिरती हैं, वहीं द्वापर-कलियुग दो युगों में आत्मा की 12 कलायें गिर जाती हैं और कलियुग के अन्त में आत्मा कलाहीन अर्थात् आत्मा में बहुत कम आत्मिक शक्ति रह जाती है।

द्वापर युग से आत्माओं को जब दुख-अशान्ति की अनुभूति होती है तो आत्मा उससे छूटने के लिए परमात्मा को याद करना आरम्भ करती अर्थात् भक्ति मार्ग का आरम्भ होता है। भक्ति के अनेक क्रिया-कलापों, कर्म-काण्डों का श्रीगणेश होता है। परमात्मा का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण अन्धश्रृद्धा के वशीभूत समयान्तर में आत्मायें अनेक प्रकार के अशुद्ध क्रिया-कलापों में भी प्रवृत्त हो जाती हैं, जिससे दिनोंदिन दुख-अशान्ति बढ़ती ही जाती है।

## C. कर्म और पुरुषोत्तम संगमयुग

सारे कल्प में संगमयुग ही सुकर्म करने का युग है, जो सारे कल्प के भाग्य का आधार है अर्थात् सारे कल्प के लिए बीज बोने का समय है। अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर सर्वशक्तिवान परमपिता परमात्मा की याद में किये गये कर्म ही सुकर्म होते हैं अर्थात् श्रेष्ठ फल देने वाले होते हैं अर्थात् आत्मा की चढ़ती कला के आधार होते हैं। संगम युग में ज्ञान सागर परमपिता परमात्मा आकर आत्मा, परमात्मा, सृष्टि-चक्र, कर्म की गुह्य गति आदि का सारा ज्ञान देते हैं और आत्मिक शक्ति के विकास का साधन योग सिखलाते हैं, जिससे आत्मा का बुद्धियोग परमात्मा के साथ जुटता है और आत्माभिमानी बनकर परमात्मा की याद में स्थित होकर आत्मा सुकर्म करती है, जिससे आत्मिक शक्ति का खाता जमा होता है अर्थात् आत्मा की चढ़ती कला होती है। परमात्मा की याद से ही आत्मा का पुराने पाप-कर्मों का खाता खत्म होता है। विकर्मों का खाता खत्म होने, आत्मा के पावन बनने और सुकर्मों का खाता जमा होने से आत्मा पुन: सतयुग के योग्य बनती है और नये कल्प का शुभारम्भ होता है।

"युद्ध है ना! माया ऑपोजीशन करती है। उनका भी फर्ज है। वह न करे तो फिर युद्ध कैसे गाई जाये। ... युद्ध होगी तो हम हारते ही रहें, यह भी नहीं। हमको उसके ऊपर विजयी बनना है। जीतने की बाजी अभी ही लगानी है। ... एक भरोसा एक बल गाया हुआ है।"

मातेश्वरी 27.6.1964

* किसी भी घटना को तुम अच्छा भी नहीं कह सकते तो बुरा भी नहीं कह सकते और न ही उसके लिए किसको दोष दे सकते हो (चाहे कोई शत्रु क्यों न हो) क्योंकि वह घटना भी ड्रामा में नूँध है और ड्रामा सत्य-न्यायपूर्ण-कल्याणकारी है। ज्ञानी पुरुष को साक्षी होकर इसे देखना है और शत्रु-मित्र दोनों के प्रति शुभ भावना शुभ कामना रखनी चाहिए तथा अच्छे-बुरे दोनों को साक्षी होकर देखना चाहिए क्योंकि बुरे को अच्छा कहते तो भी आत्मा पर पाप चढ़ जाता है और बुरा कहते तो भी कहेंगे कि ड्रामा भूला हुआ है। विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञानी साक्षी और स्वस्थिति में स्थित आत्मा के लिए हर घटना, हर दृश्य और हर क्षण सुखदायी और कल्याणमय है।

* इस विश्व-नाटक में कर्म-फल, पुरुषार्थ-प्रालब्ध और आत्माओं के आपसी कर्मों के हिसाब-किताब बनने और पूरा होने का, प्रकृति के साथ हिसाब-किताब बनने और पूरा होने का अद्वितीय सन्तुलन है, जो पूर्णतया सत्य, न्यायपूर्ण और कल्याणकारी है। इसके आधार पर ये नाटक सफलतापूर्वक चलता है। जो इस सत्य को जान लेता, समझकर निश्चय कर लेता, वह इसके परमानन्द और परमसुख को अनुभव करता है और श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ होता है। इस सत्य का ज्ञान भी पुरुषोत्तम संगमयुग पर ही परमात्मा द्वारा मिलता है

ड्रामा के सर्व रहस्यों को जानना तो मनुष्य के वश की बात नहीं है परन्तु जैसे डेगरे के एक चावल को देखकर सारे डेगरे का पता लग जाता है, उसी प्रकार इसके कुछ मुख्य2 रहस्यों के अध्ययन से इसकी वास्तविकता को समझकर इसका सुख अनुभव किया जा सकता है। अपने मूल स्वरूप में स्थित और परमात्मा से योगयुक्त आत्मा ही इनका सहज स्वभाविक अनुभव करती है और कर सकती है।

* संगमयुग महान है, ये ईश्वरीय जीवन महान है, इसकी प्राप्तियाँ महान है, इस जीवन के कर्म महान हैं, जो इसके महत्व को समझ लेता है, वही यथार्थ कर्म करके इसके सच्चे सुख को अनुभव करता है। वास्तव में संगमयुग के सच्चे सुख की अनुभूतियों में रहने वाली आत्मा को सतयुग की भी इच्छा नहीं हो सकती अर्थात् वह उसके लिए भी उतावला नहीं होता, भल समयानुसार सतयुग भी अवश्य ही आयेगा। सारे कल्प में कर्मानुसार ही आत्मा को फल प्राप्त होता है। श्रेष्ठ कर्म करने का ये संगमयुग ही है, जिसका कर्म श्रेष्ठ है उसे सर्वत्र और सर्वदा सुख है। इस सत्य को जानने वाला श्रेष्ठ कर्म कर इस जीवन में सर्वोत्तम सुख अर्थात् अतीन्द्रीय सुख को अनुभव करता है और भविष्य के लिए श्रेष्ठ कर्म-फल का संचय करता है।

* श्रेष्ठ कर्म का फल सुख के रूप आत्मा को संकल्प करते ही अनुभव होता है क्योंकि

संकल्प भी एक कर्म है और वह सुख बहुत समय तक अनुभव होता रहता है। ड्रामा के यथार्थ ज्ञान और कर्म के सिद्धान्त को जानने वालों की सदा ही मन्सा-वाचा-कर्मणा श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्ति होती है और उनको ये जीवन सदा ही सुखदायी अनुभव होता है, वह कब भी इससे ऊबेगा नहीं।

* पुरुषोत्तम संगमयुग पर ये मधुवन सर्वात्माओं के पिता परमात्मा की कर्मभूमि, अवतार भूमि, वरदान भूमि है। यहाँ सर्वात्माओं के पिता परमात्मा और सर्व जीवात्माओं के पितामह प्रजापिता ब्रह्मा बाबा ने सर्वात्माओं के कल्याणार्थ वृत्ति और कर्म के द्वारा श्रेष्ठ वायब्रेशन, वायुमण्डल फैलाया है, जिससे जो भी यहाँ आये उसको यहाँ अपनत्व का आभास हो। सर्व-आत्मायें उसके अधिकारी हैं। यदि हम इसमें ईर्ष्या-द्वेष-घृणा युक्त कर्मों के द्वारा वृत्ति, वायब्रेशन, वायुमण्डल पैदा करके इसके श्रेष्ठ वृत्ति, वायब्रेशन, वायुमण्डल को दूषित करते हैं तो ये हमारा महापाप कर्म है और हमको इसका दुष्परिणाम भोगना ही होगा। इसको सरचार्ज करना हम ब्राह्मणों का पावन कर्तव्य है। यदि हम इसको सरचार्ज नहीं कर सकते तो ज्ञान की यथार्थता को समझकर साक्षी होकर रहना ही हमारे लिए हितकर है।

"ईश्वर का पार्ट अपना है। कहते हैं बच्चे मैं भी इस ड्रामा के बन्धन में बॉधा हुआ हूँ। मुझे भी कर्म करना पड़ता है। मेरा भी पार्ट है। मैं वहाँ बैठे भी कर्म करता हूँ। भक्ति मार्ग में भक्तों की अल्प सुख की मनोकामना वहाँ से पूरी करता हूँ। यह भी ड्रामा में नूँध है।"

सा. बाबा 28.11.73 रिवा.

"हर कर्म त्रिकालदर्शी बनकर करने से कभी भी कोई कर्म विकर्म नहीं हो सकता। सदा सुकर्म होगा। ... ऐसे ही साक्षी-दृष्टा बन कर्म करने से कोई भी कर्म के बन्धन में कर्म-बन्धनी आत्मा नहीं बनेंगे।"

अ.बापदादा 30.1.79

"बापदादा समय के पहले सब बच्चों को सम्पन्न स्वरूप में भरपूर भण्डार के रूप में, इच्छामात्रम् अविद्या, तृप्त स्वरूप में देखना चाहते हैं क्योंकि अभी से संस्कार नहीं भरेंगे तो अन्त में संस्कार भरने वाले बहुत काल की प्राप्ति के अधिकारी नहीं बन सकते।"

अ.बापदादा 5.12.84

"मन में धुन लग जाये कि समान बनना ही है, समाप्ति को समीप लाना ही है। आप कहेंगे संगमयुग तो बहुत अच्छा है तो समाप्ति क्यों हो ? लेकिन आप बाप समान दयालु, कृपालु, रहमदिल आत्मायें हो ... दुनिया में दुख बढ़ता जा रहा है तो दुखियों पर रहम करके उन्होंको मुक्तिधाम में तो भेजो।"

अ.बापदादा 30.11.06

"बच्चे स्वमान में कभी-कभी होने के कारण समय के महत्व को भी स्मृति में कम रखते हैं।

एक स्वयं का स्वमान, दूसरा है समय का महत्व। आप साधारण नहीं हो, पूर्वज हो। आप एक-एक के पीछे विश्व की आत्माओं का आधार है।... जिसने दिल से माना "मेरा बाबा" और बाप ने भी माना "मेरा बच्चा", वे सभी जिम्मेवार हैं।"

अ.बापदादा 16.11.06

"सारे कल्प के बीज डालने का समय यह छोटा सा संगमयुग है और डबल फल प्रापत करने का समय भी यही है। भक्ति का फल भी अभी मिलता है और प्रत्यक्ष फल भी अभी मिलता है। प्रत्यक्ष फल भी अभी मिलता है और भविष्य भी बनता है।"

अ.बापदादा 16.11.06

"कोई ज्ञान सुने या न सुने लेकिन शुभ-भावना शुभ-कामना के वायब्रेशन्स से भी बदलते हैं। सिर्फ वाणी की सेवा ही सेवा नहीं है लेकिन शुभ-भावना रखना भी सेवा है। ... ब्राह्मणों का कर्तव्य है देना क्योंकि दाता के बच्चे हो ना। ... दाता के बच्चे लेकर नहीं देते। कोई मान दे, रिगार्ड दे तो दूँ। नहीं, दाता के बच्चे सदा देने वाले।"

अ.बापदादा 13.12.90 पार्टी 2

## ११. कर्म और कर्म का प्रभाव

कर्म के प्रभाव और उसके स्वरूप पर उसके फल का निर्णय होता है। इसलिए कर्म-सिद्धान्त के अध्ययन करते समय, उसका प्रकृति और व्यक्ति पर क्या और कैसे प्रभाव पड़ता है, उसका ज्ञान होना भी अति आवश्यक है, तब ही आत्मा श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ होगी और श्रेष्ठ कर्म करके अपना और विश्व का कल्याण कर सकेगी। जीवात्मा के कर्मों का प्रभाव आत्मा और प्रकृति पर तीन रूपों (दैहिक, दैविक और भौतिक) में होता है और मनुष्य के कर्म प्रकृति के तीनों रूपों (दैहिक, दैविक और भौतक) से प्रभावित होते हैं।

मनुष्य के कुछ कर्म ऐसे होते हैं, जिनका प्रभाव उसके वर्तमान जीवन तक ही सीमित रहता है, कुछ कर्मों का प्रभाव अन्य आत्माओं को भी प्रभावित करता है और कुछ कर्म स्वयं को, आत्माओं को और जड़ प्रकृति को भी प्रभावित करते हैं। क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के अनुसार हर कर्म की प्रतिक्रिया होती है, जो उसके कर्ता पर उसी रूप में प्रभावित होती है, जिससे वे उसके जीवन में रोग-शोक, मानसिक चिन्तायें, सम्बन्धों में मधुरता और कटुता, प्राकृतिक आपदाओं के रूप में जीवन को प्रभावित करते हैं।

बाबा ने भी कहा है कि तुम्हारे योग के प्रभाव से तुम्हारी आत्मा, अन्य आत्मायें, प्रकृति के पाँच तत्व सभी पावन बनेंगे। तुमको अन्न और संग की बहुत परहेज रखनी है क्योंकि ये तुम्हारे जीवन को प्रभावित करते हैं। आत्मा के जैसे संकल्प होते हैं, उस अनुसार

तरंगें उसके द्वारा प्रवाहित होती हैं और उनका प्रभाव जड़, जंगम और चेतन तीनों प्रकृतियों पर पड़ता है और जिस रूप में हम उनको प्रभावित करते हैं, उसके अनुरूप ही उनका प्रभाव हमारे जीवन भी पड़ता है।

* वातावरण में नीहित वायब्रेशन अर्थात् विचार तरंगों का मानव-जीवन और सर्व आत्माओं के जीवन में बहुत बड़ा प्रभाव है। हर आत्मा पर वातावरण में नीहित वायब्रेशन्स का प्रभाव होता है और हर आत्मा अपने संकल्पों के द्वारा वायब्रेशन्स प्रवाहित करती है, जो उस अनुरूप वातावरण का निर्माण करते हैं। हमारे वायब्रेशन्स का प्रभाव अन्य आत्माओं पर और अन्य आत्माओं के वायब्रेशन्स का प्रभाव हमारे ऊपर अवश्य पड़ता है, इसलिए आध्यात्मिक जीवन की सफलता के लिए श्रेष्ठ वातावरण और संग का ध्यान रखना अति आवश्यक है।

* अच्छे शुभ कर्म को करने में और करके कब भय नहीं खाना चाहिए और बुरे अशुभ कर्म को करके कब खुश नहीं होना चाहिए, उससे सदा ही डरना चाहिए। शुभ कर्म का प्रभाव कर्म करने से पहले भी और करने के बाद भी आत्मा को खुशी प्रदान करता है, ऐसे ही अशुभ कर्म करने से पहले भी आत्मा को भयभीत करता है और करने के बाद भी भयभीत करता है।

* सत्य कर्म का प्रभाव सदा सुखदायी होता है। सत्य कर्म अर्थात् शुभ कर्म कब भी आत्मा को भयभीत नहीं करता, सदा सुख का अनुभव कराता है। इसलिए सत्य कर्म करने वाले को कब भयभीत नहीं होना चाहिए। यदि किसी कर्म के बाद भय उत्पन्न होता है तो उसको चेक करना चाहिए, अवश्य ही उसमें कोई असत्यता है, उसका निराकरण करके भय से मुक्त हो जाना चाहिए।

* भविष्य क्या होगा, कैसा होगा, ... इसकी चिन्ता करना आत्मा की अज्ञानता है। भविष्य वह होगा, जो हम अभी कर रहे हैं क्योंकि भविष्य वर्तमान के कर्मों का फल है। आत्मा के वर्तमान के कर्म ही उसके भविष्य के निर्माता या बीज हैं, इसलिए ज्ञानी पुरुष को भविष्य की चिन्ता से चिन्तित न होकर अपने वर्तमान को देखकर वर्तमान में श्रेष्ठ कर्म करने का पुरुषार्थ करना चाहिए। जिसके वर्तमान कर्म अच्छे हैं, उसका भविष्य निश्चित ही अच्छा होगा। परमपिता परमात्मा ने हमको वर्तमान में श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान भी दिया है तो उनको करने की शक्ति प्राप्त करने का मार्ग भी दर्शाया है।

ब्राह्मणों के अशुभ संकल्प या व्यर्थ संकल्प, अशुभ की परिकल्पना भी सिद्ध हो जाती है और वह भी विकर्म बन जाता है। इसलिए किसी भी परिस्थिति में अशुभ संकल्प, व्यर्थ संकल्प, अशुभ की परिकल्पना करके विकर्म का खाता नहीं बढ़ाना चाहिए। योग में, पवित्र स्थान पर, पवित्र वातावरण में किये हुए संकल्प विशेष रूप से फल देते हैं अर्थात् उनका

विशेष प्रभाव होता है।

"जिस समय कोई विशाल कार्य कहाँ भी होता है, उस समय दूर बैठे भी उतने समय तक सदा हर एक के मन में विश्व-कल्याण की श्रेष्ठ भावना और श्रेष्ठ कामना जरूर होनी चाहिए। ... आप सभी विशेष आत्माओं की शुभ भावना, शुभ कामना उस कार्य को अवश्य सफल बनायेगी।... कोई साकार में वाणी से, कोई कर्म से, कोई मन्सा सेवा से निमित्त बनेंगे।"

अ.बापदादा 30.12.85

"मोहब्बत से मेहनत करो। स्नेह ऐसी वस्तु है, जो स्नेह के वश ना वाला भी हाँ कर देता है।... शुभ भावना का फल सदैव श्रेष्ठ होता है।" अ.बापदादा 30.12.85

## १२. कर्म और कर्म-फल

### कर्म और कर्म-फल (श्रेष्ठ फल का खाता जमा और घाटा)

आत्मा इस कर्म क्षेत्र पर जो भी कर्म करती है, उसका प्रभाव प्रकृति और अन्य आत्माओं को अवश्य ही प्रभावित करता है। आत्मा के जिस कर्म से अन्य आत्माओं को सुख मिलता है, प्रकृति और आत्मा पावन बनती हैं, उससे उसका पुण्य का खाता जमा होता है और जिन कर्मों से आत्माओं को दुख मिलता है या दुख के साधनों का निर्माण होता है, प्रकृति और वातावरण दूषित होता है, उससे उसका श्रेष्ठ कर्मों के फल का खाता कम होता है या कहें कि उससे उसके पाप का खाता बढ़ता है, जो उसको कर्मभोग या दुख के रूप में भोगना पड़ता है। हर आत्मा का अपना कर्म-फल ही उसके सुख या दुख का मूल कारण है।

यह विश्व-नाटक कर्म-फल-कर्म पर आधारित एक घटना चक्र है। हर आत्मा को अपने कर्म का फल अवश्य मिलता है और जाने-अन्जाने भोगना ही पड़ता है। इसलिए गीता में कहा है - हे अर्जुन तू कर्म कर, फल की इच्छा न रख। शिवबाबा भी फल की चिन्ता न कर श्रेष्ठ कर्म करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। कर्मक्षेत्र पर हर आत्मा से ड्रामा अनुसार कर्म होता ही है और कर्मो अनुसार उसका फल आत्मा को सुख-दुख के रूप में भोगना ही पड़ता है परन्तु ड्रामा समझकर पुरुषार्थहीन नहीं बनना है। पुरुषार्थ अर्थात् कर्म ही प्रालब्ध का आधार है।

ड्रमा अनुसार कोई भी कर्म फल के बिना नहीं होता अर्थात् हर कर्म का फल अवश्य होता है और कोई भी फल कर्म के बिना नहीं मिलता अर्थात् किसी भी आत्मा को कोई भी अच्छा या बुरा फल मिल रहा है, वह उसके द्वारा किये गये पूर्व कर्मों का परिणाम है। इसलिए

किसी की प्राप्तियों से न ईश्र्या हो और न ही घृणा - इस सत्य को जानकर श्रेष्ठ कर्म करने का पुरुषार्थ ही श्रेष्ठ फल की आधार शिला है। फल की इच्छा करने से फल नहीं मिलेगा, कर्म करने से ही फल मिलेगा। जैसी स्मृति वैसी स्थिति और जैसी स्थिति वैसे कर्म अवश्य होते हैं।

"यह निश्चित है कि यह कार्य हुआ ही पड़ा है। सिर्फ कर्म और फल के, पुरुषार्थ और प्रालब्ध के, निमित्त और निर्माण के, कर्म फिलॉसाफी के, अनुसार निमित्त बन कार्य कर रहे हैं। भावी अटल है लेकिन सिर्फ आप श्रेष्ठ भावना द्वारा, भावना का फल अविनाशी प्राप्त करने के निमित्त बने हुए हैं।" अ.बापदादा 20.1.86

* कर्म करने के लिए आत्मिक शक्ति और शरीरिक शक्ति दोनों की आवश्यकता होती है। समय और शक्ति (दैहिक) आत्मा की ऐसी सम्पत्ति है,जो संचित नहीं की जा सकती, उसको कार्य में लगाना ही उसका संचय करना है और अपना भाग्य बनाना है।

*किसी दूसरे की उपभोग्य वस्तु की ओर लालायित होना या उपभोग की इच्छा करना पाप है और आत्मा को उसका फल भोगना होता है। किसी अनाधिकृत वस्तु की ओर आकर्षित होना भी पापकर्म है और उसका भी फल आत्मा को भोगना होता है।

* कर्म का फल = कर्म का स्वरूप + कर्ता की भावना + कर्म का व्यक्ति व प्रकृति पर प्रभाव अर्थात् इन सब बातों के आधार पर कर्म के फल का निर्णय होता है।

* किसी के अनुचित व्यवहार या कर्म से किसी आत्मा का पतन होता है, वह अनुचित कार्यों को करने के लिए बाध्य होती है, अनुचित कर्मों में प्रवृत्त होती है तो अपने उस अनुचित व्यवहार अकृत्य के कारण कर्म करने वाला व्यक्ति भी उसके कर्मों में भागीदार बनता है अर्थात् दोनों ही उसके फल में भागीदार होते हैं।

* सतयुग में कर्म, अकर्म होते क्योंकि वहाँ कोई दुखी होता ही नहीं है, इसलिए पुण्य करने की आवश्यकता ही नहीं है और विकार न होने के कारण पाप कर्म भी नहीं होता है। वहाँ संगमयुग पर बनायी हुई प्रालब्ध को भोगते हैं, जिसके कारण आत्मा की शक्ति में थोड़ा-थोड़ा ह्रास होता जाता है, जिससे आत्मा की कलायें गिरती हैं अर्थात् उतरती कला अवश्य होती है परन्तु वहाँ पाप-पुण्य का प्रश्न नहीं होता।

* सतयुग-त्रेता युग में पाप-पुण्य नहीं होता है क्योंकि दुख की फीलिंग नहीं होती इसलिए पाप-पुण्य का संकल्प ही नहीं, केवल प्रालब्ध भोगते हुए स्थिति उतरती कला की रहती है। द्वापर से देहाभिमान के कारण विकर्म होना आरम्भ होता है, जिसके फल स्वरूप दुख-अशान्ति आरम्भ होता, इसलिए पाप-पुण्य भी आरम्भ होता है परन्तु वहाँ से पाप की गति तीव्र और पुण्य की गति मन्द होती है, इसलिए स्थिति पतनोन्मुख रहती है, जिसका अनुपात उसी दिशा में

निरन्तर बढ़ता जाता है। संगम पर यथार्थ ईश्वरीय ज्ञान और परमपिता परमात्मा के संग के कारण पुण्य की गति तीव्र और पाप की गति मन्द हो जाती है, इसलिए स्थिति उत्थानोन्मुख होती है, जो अनुपात निरन्तर बढ़ते-बढ़ते आत्मा को सम्पूर्णता तक ले जाता है।

* पुरुषार्थ का फल अवश्य मिलता है और प्राप्ति पुरुषार्थ से होती है। इसलिए हमको कब पुरुषार्थ के फल की चिन्ता नहीं करनी चाहिए और न ही किसकी प्राप्तियों से ईर्ष्या करनी चाहिए। जो इस सत्य को जानकर निश्चिन्त, निर्संकल्प, निरासक्त, निर्भय होकर अपने पुरुषार्थ को करता है, वही अपने अभी लक्ष्य मुक्ति-जीवनमुक्ति का सुखद अनुभव करता है। पुरुषार्थ ही जीवन है और पुरुषार्थहीनता ही मृत्यु है।

- दृष्टि-वृत्ति, कृत्ति, संकल्प, बोल से किये गये हर कर्म का फल होता है और उसका परिणाम कर्ता को भोगना ही पड़ता है। इस सत्य को समझकर कोई भी कर्म करना है और उसके अच्छे-बुरे फल को खाने के लिए तैयार रहना चाहिए।

"एक समय और दूसरा संकल्प - इन दो खज़ानों पर विशेष अटेन्शन रखना। ... सारे कल्प के लिए जमा करने की बैंक अभी ही खुलती है। सतयुग में ये जमा की बैंक बन्द हो जायेगी।" अ.बापदादा 16.2.96

"सतयुग में न ये बैंक होंगी और न रुहानी खज़ाने जमा करने की बैंक होगी। दोनों ही बैंक नहीं होंगी। इस समय एक का पद्मगुणा करके देने की ये रुहानी बैंक है लेकिन जमा करेंगे तब पद्म मिलेगा, ऐसे नहीं। पूरा हिसाब है।" अ.बापदादा 16.2.96

हर आत्मा इस जगत में सुख या दुख अपने जमा के खाते के अनुसार ही पाती है। हमारा जीवन सदा सुखमय हो, इसके लिए हर आत्मा को अपने श्रेष्ठ कर्मों का खाता जमा करने का पुरुषार्थ करना चाहिए। इसके लिए हमारा श्रेष्ठ कर्मों का खाता किस विधि-विधान के अनुसार जमा होता है और किस अनुसार ना अर्थात् खत्म होता है, उसका ज्ञान भी होना अति आवश्यक है। परमात्मा पिता ने हमको श्रेष्ठ कर्मों के खाते को जमा करने का विधि-विधान बताया है, जिसके अनुसार कर्म करके हम अभी अपना खाता जमा करते हैं और उसके फलस्वरूप अभी भी सुख पाते हैं और सतयुग में भी श्रेष्ठ पद पाते हैं।

आत्मा जो कर्म करती है, उससे जो खाता जमा होता, उसका फल आत्मा को इस जन्म में भी मिलता है और अनेक जन्मों तक भी मिल सकता है। संगमयुग पर किये गये श्रेष्ठ कर्मों का फल आत्मा को 21जन्म तक तो मिलता ही है बाद में भी वह जमा का खाता रहता है।

जड़ तत्वों का उपभोग हो या चेतन आत्माओं के साथ व्यवहार, सबके लिए हमको

उतना ही अधिकार है जितना हमारे और समस्त विश्व के लिए आवश्यक और उपयोगी है, जिससे हमारी आत्मिक और शारीरिक शक्ति का विकास होता है, उसके अतिरिक्त उपयोग या व्यवहार से हमारा सुख का खाता कम होता है और यदि हम साधनों का दुरुपयोग करते हैं तो जमा का खाता ना होता है अर्थात दुख का खाता शुरू हो जाता है।

श्रेष्ठ कर्मों का खाता जमा करने का समय ये संगमयुग ही है और तो सारे कल्प में अन्तिम परिणाम में खाता कम ही होता है क्योंकि सतयुग-त्रेता में कोई श्रेष्ठ कर्म नहीं करते क्योंकि श्रेष्ठ कर्मों का न ज्ञान होता है और न ही आवश्यकता होती है, इसलिए वहाँ के कर्म अकर्म कहलाते हैं परन्तु वे भी आत्मा के पुण्य का खाता कम अवश्य करते हैं। द्वापर-कलियुग में मनुष्य अच्छे-बुरे दोनों प्रकार के कर्म करता है परन्तु अन्तिम परिणाम बुरे का ही भारी होता है क्योंकि देहाभिमान के वशीभुत आत्मा से बुरे कर्म ही अधिक होते हैं, अच्छे बहुत कम होते हैं।

जीवात्मा अपना आप ही मित्र और आप ही अपना शत्रु है। अपने लिए या किसी अन्य के लिए किसी दूसरे को दोष देना या दोषी ठहराना अज्ञानता है और अपने आप ही अपने पाप का खाता बढ़ाकर जीवन को अन्धकारमय बनाना है। विश्व कल्यणकारी बाप के बच्चे हैं, विश्व कल्याण हमारा लक्ष्य है, ये विश्व-नाटक कल्याणमय है, इसलिए सर्व आत्माओं के प्रति कल्याण का संकल्प रखना और कर्म करना ही हमारा कर्तव्य है, उससे ही हमारा श्रेष्ठ कर्मों का खाता जमा होता है। इसमें ही हमारा अपना और विश्व का कल्याण नीहित है।

"मुख्य यह तीनों खजाने - संकल्प, समय और श्वांस आज्ञा प्रमाण सफल होते हैं? व्यर्थ तो नहीं जाते? ... जमा का खाता इस संगम पर ही जमा करना है।... सारे कल्प के लिए जमा इस संगम पर ही करना है। ... इस छोटे से जन्म के संकल्प, समय और स्वांस कितने अमूल्य हैं!"

अ.बापदादा 15.11.99

"जमा करने की विधि बहुत सहज है, सिर्फ बिन्दी लगाते जाओ।... आत्मा भी बिन्दी, बाप भी बिन्दी और ड्रामा में जो बीत चुका, वह भी फुल-स्टॉप अर्थात् बिन्दी।... जमा का खाता बढ़ाने की विधि है - "बिन्दी" और गँवाने का रास्ता है क्वेश्चन मार्ग, आश्चर्य की मात्रा लगाना।"

अ.बापदादा 30.11.99

"इस समय जो कुछ करते हैं, वह ईश्वरीय सर्विस में शिवबाबा को देते हैं, ब्रह्मा को नहीं देते हो। तुम शिवबाबा को देते हो। बाबा कहते हैं - इनको देने से तुम्हारा कुछ भी जमा नहीं होगा। जमा वह होता है, जो तुम शिवबाबा को याद कर इनको देते हो।"

सा.बाबा 17.9.04 रिवा.

"कर्म श्रेष्ठ है तो श्रेष्ठ प्रालब्ध है, कर्म भ्रष्ट होने के कारण दुख की प्रालब्ध है। लेकिन दोनों का आधार कर्म है। कर्म आत्मा का दर्पण है।" अ. बापदादा 19.3.82

"बीज बोया जाता है तो उसका फल निकलता है। यहाँ चावल चपटी देने से महल मिल जाते हैं। किसको भी कहना नहीं है कि बीज बोओ। तकदीर में नहीं होगा तो कभी बुद्धि में आयेगा ही नहीं।... गरीब सबसे जास्ती इन्श्योर करते हैं। गरीब के चावल मुट्ठी भी साहूकार के धन के इक्वल हो जाते हैं। ... अभी अम्बा पर कितना बड़ा मेला लगता है। कुछ तो सर्विस करके गई है ना।... तुमको कोई से पैसे आदि लेने की इच्छा नहीं होनी चाहिए। तुमको तो रहमदिल बनना है।" सा.बाबा 17.09.03 रिवा.

"यथा शक्ति तथा फल की प्राप्ति करते हैं।... दिखावे मात्र करते हैं, स्वार्थ वश करते हैं। उन सब हिसाब अनुसार जैसा कर्म, जैसी भावना वैसा फल मिलता है। "

अ.बापदादा 7.3.84

"गरीब साहूकार सब आ जाते हैं। शिवबाबा का भण्डारा भरता जाता है। जो भण्डारा भरते हैं, उनको वहाँ रिटर्न में कई गुणा मिल जाता है।"

सा.बाबा 24.4.04 रिवा.

"अगर सन्तुष्टता का अनुभव नहीं किया, चाहे स्वयं, चाहे दूसरे तो जमा का खाता कम होता है। बापदादा ने जमा का खाता बहुत सहज बढ़ाने की गोल्डन चाबी बच्चों को दी है। जानते हो वह चाबी क्या है ? ... निमित्त भाव, निर्माण भाव, शुभ भाव, आत्मिक स्नेह का भाव। अगर इस भाव की स्थिति में स्थित होकर सेवा करते हो तो सहज आपके इस भाव से आत्माओं की भावना पूर्ण हो जाती है।" अ.बापदादा 31.12.03

"अभी बच्चे चलते-फिरते अथवा यहाँ बैठे-बैठे जन्म-जन्मान्तर के जो पाप सिर पर हैं, उन पापों को याद की यात्रा से विनाश करते हैं। ... बच्चे समझते हैं - हम याद की यात्रा से अपने पाप काट रहे हैं, गोया अपना कल्याण कर रहे हैं।"

सा.बाबा 16.9.04 रिवा.

"अभी तो अनेक आत्माओं के अनेक जन्मों के बने हुए खाते, जिसको पाप-कर्मों का खाता कहा जाता है, उसको भस्म कराने के आप निमित्त हो। जो अन्य के व्यर्थ खाते को भस्म कराने वाले हैं, वे स्वयं अपना ऐसा खाता बना नहीं सकते। यह तो पुराने खाते हैं। आप तो पुराने खाते समाप्त कर नया जन्म, नये खाते बनाने वाले हो। पुराने खाते सब खत्म हो रहे हैं - ऐसा अनुभव होता है ?" अ.बापदादा 4.2.75

"सिर्फ घर को याद करेंगे तो पाप विनाश नहीं होंगे। बाप को याद करेंगे तो पाप विनाश होंगे

और तुम अपने घर चले जायेंगे।" सा.बाबा 6.5.05 रिवा.

"व्यर्थ में समय नहीं गँवाओ। व्यर्थ के संस्कार पक्के होते जाते हैं। ... व्यर्थ का भी खाता जमा हो जाता है। सुनने से भी व्यर्थ जमा होता है।"

अ.बापदादा 16.3.95

"ज्ञानी और योगी आत्मा के हर कर्म स्वत: युक्तियुक्त अर्थात् यथार्थ श्रेष्ठ कर्म होंगे।... कोई भी कर्म रूपी बीज फल के सिवाए नहीं होता है।"

अ.बापदादा 14.1.90 पार्टी 2

"अगर स्वयं सन्तुष्ट हो तो खर्चा सफल हुआ, घबराओ नहीं।... बाकी कोई सीजन का फल है, कोई हर समय का फल है।... श्रीमत प्रमाण कार्य किया, तो ये श्रीमत को मानना भी एक सफलता है।" अ.बापदादा 27.2.96 पार्टी

"त्रिकालदर्शी के स्मृति की स्थिति रूपी तख्त पर स्थित होकर कोई भी कर्म करो, फिर कर्म फल नहीं देवे, यह हो नहीं सकता। बीज अगर शक्तिशाली होगा तो फल अवश्य मिलेगा, अभ्यास में कभी भी अलबेले नहीं बनो।"

अ.बापदादा 22.1.90 पार्टी

"कोई भी कर्म करते हो तो पहले त्रिकालदर्शी बनकर फिर कोई कर्म करो। ... पहले परिणाम को सोचो फिर कर्म करो तो सदा श्रेष्ठ परिणाम निकलेगा। ... त्रिकालदर्शी स्थिति में स्थित होकर कर्म करने से कब कोई व्यर्थ कर्म नहीं होगा, साधारण नहीं होगा।"

अ.बापदादा 22.1.90 पार्टी

"बाप ने हिसाब भी बताया है कि सबसे पहले भक्ति तुम करते हो, इसलिए तुमको ही पहले-पहले भगवान द्वारा ज्ञान मिलना चाहिए, जो फिर तुम ही नई दुनिया में राज्य करो।"

सा.बाबा 3.10.06 रिवा.

"शिवबाबा तो निराकार दाता है ना। तुम देते हो तो तुमको 21 जन्मों के लिए फल देते हैं। ... चावल मुट्ठी का भी गायन है ना। गरीब अपनी हिम्मत अनुसार जितना देते हैं, उतना उनका भी बनता है, जितना साहूकार का। इसलिए बाप को गरीब निवाज़ कहा जाता है।"

सा.बाबा 10.10.06 रिवा.

"मम्मा बिना कौड़ी आई और विश्व की महारानी बन गई। यह साधारण था। मम्मा बहुत सर्विस करती थी ... इसमें खर्चे की तो कोई बात ही नहीं। अगर कोई थोड़ा खर्चा करते भी हो, सो भी अपने लिए। जैसे खेती में दो मुट्ठी बीज डालने से ढेर अन्न निकलता है।"

सा.बाबा 6.11.06 रिवा.

"बाप को याद करना गोया कमाई करना। इसमें आशीर्वाद क्या करेंगे। सब पर आशीर्वाद करें तो सब स्वर्ग में चले जायें। यहाँ तो अपनी मेहनत करनी है। ... जितना याद करेंगे, उतना राजाई मिलेगी।" सा.बाबा 25.10.06 रिवा.

"बाबा के पास ऐसे-ऐसे बच्चे भी हैं, जो कहते बाबा जब जरूरत पड़े तो मुझे याद करना, हम मदद करने के लिए हाज़िर हैं। ... बाबा कहते - हम किसको याद नहीं करते, जो करना है सो करो। हम तो दाता हैं, हम आये ही हैं भारत को स्वर्ग बनाने, तुम भी स्वर्ग में जायेंगे। जो जितना करेंगे, उतना पायेंगे।" सा.बाबा 18.10.06 रिवा.

"महान दाता बन, बेहद के दाता बन वर्ल्ड के गोले पर खड़े होकर बेहद की सेवा में वायब्रेशन फैलाओ। ... मनोबल को बढ़ाओ। मनोबल द्वारा विश्व के गोले के ऊपर ऊंची स्थित में स्थित हो, बाप के साथ परमधाम की स्थिति में स्थित होकर थोड़ा समय भी यह सेवा की तो आपको उसकी प्रालब्ध कई गुणा ज्यादा मिलेगी।" अ.बापदादा 13.11.97

"अभी तुम्हारी बुद्धि में यह ज्ञान है कि बाबा हमको फिर पाँच हजार वर्ष के बाद आकर यह ज्ञान सुनायेंगे। सतयुग में यह ज्ञान नहीं होगा। ... इन लक्ष्मी-नारायण को यह राज्य किसने दिया? यह उनके कर्मों का फल है ना। बाप अभी तुमको कर्म, अकर्म, विकर्म की गति समझाते हैं।" सा.बाबा 14.10.06 रिवा.

"बाप समान बनना ही है ना कि देखेंगे, सोचेंगे ... मेहनत करते हैं, उसकी सफलता मिलती है, व्यर्थ नहीं जाती। लेकिन किसलिए सेवा करते हो? ... बाप को प्रत्यक्ष करना ही है और करेंगे ही लेकिन बाप को प्रत्यक्ष करने के पहले स्व को प्रत्यक्ष करो। ... शिव-शक्तियां इस वर्ष स्व को शिव-शक्ति के रूप में प्रत्यक्ष करेंगे?"

अ.बापदादा 31.12.06

"आज अखुट अविनाशी खज़ानों के मालिक बापदादा अपने चारो ओर के सम्पन्न बच्चों का जमा के खाते देख रहे हैं। तीन प्रकार के देख रहे हैं - 1. अपने पुरुषार्थ द्वारा श्रेष्ठ प्रालब्ध जमा का खाता, 2. सदा सन्तुष्ट रहना और सन्तुष्ट करना - यह सन्तुष्टता द्वारा दुआओं का खाता और 3. मन्सा, वाचा, कर्मणा, सम्बन्ध-सम्पर्क द्वारा बेहद के निस्वार्थ सेवा द्वारा पुण्य का खाता।" अ.बापदादा 30.11.06

"इन तीनों खातों (प्रालब्ध का, दुआओं का और पुण्य का) में जमा कितना है, है या नहीं, उसकी निशानी है - वह सदा सर्व प्रति, स्वयं प्रति सन्तुष्टता स्वरूप, सर्व प्रति शुभ-भावना, शुभ-कामना और सदा अपने को खुशनुमा, खुशनसीब स्थिति में अनुभव करेगा। तो चेक करो।" अ.बापदादा 30.11.06

"सदैव अपने को चेक करो कि आज के दिन मन्सा अर्थात् स्वयं के संकल्प शक्ति में क्या विशेष विशेषता लाई? ... साथ-साथ बोल में मधुरता, सन्तुष्टता, सरलता की नवीनता कितनी लाई? ... कर्म रूपी बीज प्राप्ति के वृक्ष से भरपूर हो, खाली नहीं हो।"

अ.बापदादा 31.12.90

"नवीनता अर्थात् हर कर्म स्व के प्रति और अन्य आत्माओं के प्रति प्राप्ति का अनुभव कराये। कर्म का प्रत्यक्षफल व भविष्य जमा का फल अनुभव हो। वर्तमान समय प्रत्यक्षफल सदा खुशी और शक्ति की प्रसन्नता की अनुभूति हो और भविष्य जमा का अनुभव हो।"

अ.बापदादा 31.12.90

"सफल उनका होगा, जो ईश्वरीय स्थापना के कार्य में लगा रहे हैं। यह है ईश्वरीय बैंक, इसमें जो जितना डाले, उतना जमा होता है। जिसने जितना कल्प पहले डाला होगा, वह उतना ही अभी भी शिवबाबा की गोलक में डालेंगे। इसका रिटर्न फिर नई दुनिया में 21 जन्मों तक मिलेगा।"

सा.बाबा 14.12.06 रिवा.

## आत्मा का खाता जमा और ना (-) होने का विधि-विधान

पापों का बोझ चढ़ने और पाप भस्म कर पावन बनने का विधि-विधान -

सारे कल्प में आत्मा को सुख या दुख उसके अपने ही पुण्य-पाप के कर्मो के फलस्वरूप मिलता है। आत्मा जो भी कर्म करती है, उसका खाता संचित होता जाता है, जो समय पर सुख या दुख के रूप में फल देता है। पाप-पुण्य दोनों ही कर्मों से आत्मा का खाता बनता है परन्तु पुण्य के खाते को जमा का खाता कहा जाता है और पाप के खाते को ना (घाटे) का खाता कहा जाता है क्योंकि उससे उसका पुण्य कम हो जाता है। आत्मा का पुण्य का खाता कैसे और कौन से कर्मों से जमा होता है और पापों का खाता कैसे बढ़ता है अर्थात् आत्मा का पुण्य का खाता कैसे खत्म होता है और आत्मा पर पाप का बोझ कैसे चढ़ता है - ये सब राज़ भी अभी परमात्मा ने बताये हैं और पाप का बोझ खत्म करके पुण्य का खाता जमा करने की विधि भी बताई है। सतयुग-त्रेता में आत्मायें कोई पुण्य-पाप कर्म नहीं करती हैं लेकिन जो साधन-सम्पत्ति का उपभोग करती हैं, उससे उनका संगमयुग पर जमा किया हुआ पुण्य का जमा खाता कम होता जाता है। अभी संगमयुग पर और सारे कल्प में आत्मायें जो भी साधन-सत्ता का उपभोग करती हैं, उससे उनका पुण्य का खाता कम होता है। इसीलिए बाबा कहते हैं अभी तुम किससे सेवा न लो, व्यर्थ उपभोग न करो, जिससे तुम्हारा पुण्य का खाता खत्म हो

जाये। दुआयें दो, दुआयें लो, सुख दो, सुख लो तो तुम्हारा खाता जमा होता रहेगा। यथार्थ रीति देखा जाये तो सारे कल्प में खाता जमा करने का समय अभी संगमयुग ही है और तो सारे कल्प खाता खत्म ही होता जाता है। भल भक्ति मार्ग अर्थात् द्वापर-कलियुग में आत्मायें पुण्य करने का पुरुषार्थ करती हैं परन्तु परिणाम में पुण्य से पाप अधिक होने के कारण पुण्य का संचित खाता कम ही होता जाता है, जो कलियुग के अन्त में ना के बराबर अर्थात नाममात्र रह जाता है।

"सारे कल्प में श्रेष्ठ खाता जमा करने का समय सिर्फ यही संगमयुग है। ... इस युग और इस जीवन की विशेषता है कि अब ही जो जितना जमा करना चाहे, वह कर सकते हैं। ... इस समय ही श्रेष्ठ कर्मों का, श्रेष्ठ ज्ञान का, श्रेष्ठ सम्बन्ध का, श्रेष्ठ शक्तियों का, श्रेष्ठ गुणों का खाता जमा करते हो।" अ.बापदादा 6.01.86

"खजाने को विधि से कार्य में लगाना अर्थात् वृद्धि को प्राप्त करना। चाहे स्वयं को सम्पन्न बनाने के कार्य में लगायें, चाहे स्वयं की सम्पन्नता द्वारा अन्य आत्माओं की सेवा के कार्य में लगायें। विनाशी धन खर्चने से खुटता है परन्तु अविनाशी धन खर्चने से पद्मगुणा बढ़ता है, इसलिए कहावत है खर्चो और खाओ।" अ.बापदादा 17.4.84

"सबसे बड़ा पुण्य है - बाप को याद करना। याद से ही पुण्यात्मा बनेंगे। ... बाप भी कहते हैं- तुमको पुण्य का खाता जमा करना है, पाप करने से वह सौगुणा हो जाता है और ही घाटे में आ जायेगा। पाप भी कोई बहुत कड़ा, कोई हल्का होता है। काम है बहुत कड़ा, क्रोध है सेकण्ड नम्बर। सबसे जास्ती काम वश होने से जो जमा हुआ, वह ना (खत्म) हो जाता है। ... इस जन्म की जीवन कहानी सुनाने से कोई जन्म-जन्मान्तर के पाप नहीं कट जायेंगे। सिर्फ इस जन्म की हल्काई हो जाती है। जन्म-जन्मान्तर के पाप योग से ही चुक्तू होने वाले हैं।"

सा.बाबा 15.1.04 रिवा.

"एक हैं जो खज़ाने को अपना बना लेते हैं और हर समय यूज़ करने के अनुभव से खुशी और नशे में रहते हैं। ... दूसरे हैं जो खज़ाना मिला है, मेरा है, इस खुशी में रहते हैं लेकिन उसको कार्य में नहीं लगाते हैं ... जमा करने और यूज़ करने की अनुभूति में अन्तर है।"

अ.बापदादा 13.3.90

"शिवबाबा को याद नहीं करेंगे तो पाप कटेंगे नहीं। भल बाप ले तो सबको जायेंगे परन्तु सजा खाकर हिसाब-किताब चुक्तू करेंगे। हिसाब-किताब चुक्तू सबको करना है। तुम जानते हो अभी हम अपना खाता जमा कर रहे हैं। जितना पवित्र बन जास्ती कमाई करेंगे, उतना अधिक जमा होता है।" सा.बाबा 14.12.06 रिवा.

## १. आत्मिक शक्ति का खाता
## श्रेष्ठ कर्म-फल का खाता

## २. खाता जमा और ना का स्वरूप

स्व का खाता - उपभोग के द्वारा
व्यक्तियों के साथ का खाता - श्रेष्ठ और भ्रष्ट कर्मों के द्वारा
तत्वों के साथ का खाता - श्रेष्ठ और भ्रष्ट कर्मों के द्वारा और उपभोग के द्वारा, वृत्ति और वायब्रेशन द्वारा तत्वों के साथ का खाता प्रभावित होता है।

3. **समय के आधार पर जमा और ना का स्वरूप -** खाते को जमा करने का एकमात्र समय संगमयुग ही है और तो सारे कल्प में आत्मिक शक्ति के जमा किये हुए खाते का उपभोग करते रहते हैं। सतयुग-त्रेता में उपभोग के रूप में कम होता है और द्वापर-कलियुग में उपभोग के साथ-साथ विकर्म करके जमा के खाते का दुरुपयोग भी करते हैं, जिससे आत्मिक शक्ति का खाता घटता ही जाता है। यद्यपि द्वापर से पाप-पुण्य दोनों होते हैं इसलिए जमा और ना दोनों होता है लेकिन अन्तिम परिणाम में श्रेष्ठ फल का खाता कम ही होता है।

4. **खाता जमा करने का आधार** - आत्मिक शक्ति के जमा का आधार एकमात्र परमात्मा की याद, उसके साथ सम्बन्ध रखकर, उसकी याद में रहकर श्रेष्ठ कर्म करना ही है।

परमात्मा से प्राप्त ज्ञान-गुण-शक्ति के आधार पर व्यक्तियों के साथ जब श्रेष्ठ व्यवहार करते, जिससे आत्माओं का हित होता तो खाता जमा होता है और उनका अहित होता है, आत्माओं को दुख-अशान्ति होती है तो खाता कम होता है।

जड़ तत्वों को भी हमारे संकल्प और कर्म प्रभावित करते हैं। जिन संकल्प और कर्मों से तत्व पावन बनते हैं, उनसे खाता जमा होता है और तत्व सुखदायी फल देते हैं, जिसका फल आत्मा स्वयं भी भोगती है और अन्य आत्मायें भी भोगती हैं तथा जिन कर्मों से तत्व दूषित होते हैं अथवा तत्वों का दुरुपयोग करते हैं, तत्व दूषित होते हैं, जिसके कारण तत्व दुखदायी फल देते हैं, जिसका प्रभाव स्वयं कर्ता आत्मा पर भी पड़ता है तो अन्य आत्मायें भी प्रभावित होती है और उससे उन आत्माओं के साथ भी हिसाब-किताब बन जाता है।

मनुष्य के संकल्पों और कर्मों से जड़ तत्व भी प्रभावित होते हैं। जिन संकल्पों और कर्मों से प्राकृतिक तत्व सतोप्रधान स्थिति को पाते हैं तो उससे खाता जमा होता है और स्वभाविक रूप में सतयुग में या अन्य समय पर उसके अनुसार कर्ता आत्मा को साधन-

सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, शरीर भी स्वस्थ, सुखदायी मिलता है। ये विधि-विधान सतयुग आदि से कलियुग अन्त तक चलता है अर्थात् प्रभावित होता है। इसके विपरीत जिन संकल्पों और कर्मों से तत्व दूषित होते हैं, उससे खाता कम होता है और परिणाम स्वरूप आत्मा को दुख-अशान्ति सहन करनी पड़ती है। सतयुग में सुखदायी प्रकृति, साधन-सम्पत्ति या अन्य समय पर सुखदायी-दुखदायी प्रकृति, साधन-सम्पत्ति की प्राप्ति इसी विधि-विधान के आधार पर होती है।

सदा खाता जमा होता रहे उसके लिए आत्मा में कर्म करने के लिए आत्मिक शक्ति भी हो और कर्म का यथार्थ ज्ञान भी हो, जिसका रास्ता परमपिता परमात्मा अभी संगमयुग में ही बताते हैं, जो उसको समझकर, अनुभव कर, उस पर निश्चय कर कर्म करते हैं, उनका खाता सदा जमा होता रहता है।

जब हमको अपने पूर्व जन्मों के कर्म-संस्कारों का ज्ञान होगा उसके विषय में निश्चय होगा तो किसके सम्बन्ध-सम्पर्क में आते, तत्वों और देह की प्रकृति से दुख होते भी तंग होकर विकर्म नहीं करेंगे, सहनशक्ति रहेगी, अपने कर्मों का फल समझने से सहज पार कर लेंगे। ऐसे ही भविष्य जन्म के विषय में भी ज्ञान होगा और उसके प्रति आश्वस्त होंगे तो हमसे कोई बुरा कर्म नहीं होगा, बुरे कर्मों पर अंकुश रहेगा। भविष्य जन्म का ज्ञान होने से भविष्य के प्रति जमा करने का आकर्षण रहेगा, जिससे विकर्म न करके सुकर्म करेंगे।

हर कर्म का फल होता है और आत्मा को अपने कर्म का फल अवश्य मिलता है। आत्मा जो कर्म करती है, उसका फल उसके खाते में जमा होता जाता है। अच्छे कर्म से श्रेष्ठ भाग्य का खाता जमा होता है और विकर्म से श्रेष्ठ कर्मों का खाता समाप्त हो जाता है। व्यर्थ कर्मों से भी श्रेष्ठ कर्मों का खाता कम तो होता है लेकिन विकर्मों जितना कम नहीं होता है और आत्मा जो उपभोग करती है, उससे भी उसका संचित खाता कम तो होता है लेकिन विकर्मों और व्यर्थ कर्मों जितना नहीं। खाता जमा करने का यही समय है। परमपिता परमात्मा आकर कर्म-अकर्म-विकर्म की गहन गति का ज्ञान देते हैं और श्रेष्ठ कर्मों का रास्ता बताते हैं, उनको करने की शक्ति प्राप्त करने का रास्ता बताते हैं, जिसके द्वारा आत्मायें श्रेष्ठ कर्म करके सारे कल्प के लिए अपना खाता भरपूर करती हैं। खाता जमा करने और ना होने में मनुष्य का कर्म ही माध्यम है, इसलिए खाता जमा और ना में निम्न प्रकार से कर्म आधार बनते हैं।

* कोई गीत बनाता, गाता, किताब लिखता या कोई कार्य करता है, जिससे अन्य आत्मायें अच्छे कर्म की प्रेरणा लेती रहें, तो उससे बनाने वाले, गाने वाले, लिखने वाले को दुआयें मिलती रहती हैं और उसका श्रेष्ठ कर्म-फल का खाता जमा होता रहता है।

खाता जमा करने के लिए दो साधन है - एक है श्रेष्ठ कर्म अर्थात् सेवा, परोपकार, योग आदि और दूसरा है आत्मिक शक्तियों की बचत से।

खाता ना होने के रास्ते हैं - साधन-सत्ता के उपयोग और उपभोग से, आत्मिक शक्तियों के उपयोग से, विकर्मों से, आत्मिक शक्तियों के दुरुपयोग से, व्यर्थ चिन्तन से ... व्यर्थ कर्मों से।

"बापदादा ने सभी बच्चों को सर्व खजाने एक जैसे ही दिये हैं, सर्व भी दिया है और समान दिया है। देने वाले दाता ने सबको समान रूप में दिया है लेकिन खजाने को कितना जमा करते हैं या गँवाते हैं - यह हरेक के अपने ऊपर है। जमा करने की विधि है - बिन्दी लगाते जाओ। आत्मा भी बिन्दी, बाप भी बिन्दी और ड्रामा। जो बीत चुका है वह भी फुल स्टॉप अर्थात् बिन्दी। बिन्दी लगाई और व्यर्थ खत्म। जमा करने की विधि है बिन्दी और गँवाने का रास्ता है - क्वेश्चन मार्क, आश्चर्य का मार्क।" अव्यक्त बाबा 30.11.99

"ब्राह्मण जीवन है मजे की जीवन, संगमयुग है मजे का युग, बोझ उठाने का युग नहीं है, बोझ उतारने का युग है।" अव्यक्त बाबा 30.11.99

"धन की सेवा - समर्पित आत्मा अगर अपने अटेन्शन से यज्ञ के कार्य में एकॉनामी करती है तो जैसे वह धन की एकॉनामी वाला धन उनके नाम से जमा होता है और अगर कोई नुकसान करता है तो खाते में बोझ जमा होता है। ... यज्ञ का एक-एक कण मुहर के समान है। ... दूसरी बात - अगर समर्पित आत्मा सेवा द्वारा दूसरों के धन को सफल कराती है तो उसमें से उसका भी शेयर जमा होता है।" अ.बापदादा 25.3.90

"अगर स्व-कल्याण का श्रेष्ठ प्लेन नहीं बनायेंगे तो विश्व-सेवा में सकाश नहीं मिल सकेगी। ... सभी ने वायदा किया है कि हम बाप समान बनकर ही दिखायेंगे। ... सफल करो और सफलता लो। ... समय, स्वांस, संकल्प, तन-मन-धन सब सफल करो, व्यर्थ नहीं गंवाओ।" अ.बापदादा 31.12.97

"जैसे धन स्थूल प्रॉपर्टी है, वैसे ही सूक्ष्म प्रॉपर्टी है समय, स्वांस, संकल्प। एक संकल्प भी व्यर्थ नहीं जाये। ... "मैं और मेरेपन" के कारण जमा करने वाले समझते हैं कि हम जमा कर रहे हैं लेकिन वह ऑटोमेटिक जमा के खाते से निकल, व्यर्थ के खाते में जमा हो जाता है। यह ऑटोमेटिक सूक्ष्म मशीनरी है। बाबा ने कराया, बाबा की सेवा है।... बाबा-बाबा बोलो तो पद्मगुणा जमा होगा।" अ.बापदादा 31.12.97

"जो प्रोग्राम किया, वह मोहब्बत से किया। अगर स्थूल धन भी लगाया है तो वह तो पदमगुणा होकर आपका परमात्म-बैंक में जमा हो गया। वह लगाया क्या जमा किया है। अब बापदादा

सेवा में क्या नवीनता चाहता है? ... जो सेवा करते हो, उसमें अनुभव करके जायें।"

अ.बापदादा 31.10.06

"जनक बच्ची की बड़ी दिल नम्बरवन है, क्यों-क्या नहीं सोचती है और हो ही जाता है... बापदादा ने सुना कि खर्चा तो हुआ लेकिन और ही बचत हुई। बच गया, तो और ही बढ़ गया, कम नहीं हुआ। तो यह किसकी कमाल है? बड़े दिल की।"

अ.बापदादा 31.10.06

"बैठे यहाँ हैं और बुद्धि बाहर जाये, लौकिक सम्बन्धी याद आयें तो ये उन पर बड़ा बोझा है। खाते परमात्मा हैं और याद दुनिया वालों को करते हैं तो ये भी बोझा हो जाता है।"

दादी जानकी 9.1.07 मधुबन

## परिणाम

* जब आत्मा का प्रकृति प्रदत्त इस देह और देह के सम्बन्धियों से खाता पूरा हो जाता तो एक सेकेण्ड भी आत्मा इस देह में रह नहीं सकती। तुरन्त ही आत्मा नई देह धारण कर नये सम्बन्धों में चली जाती है।

जब व्यक्तियों के साथ खाता खात्म हो जाता तो कोई कितना भी प्रिय हो लेकिन सेकेण्ड में सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है। भले ही वे सम्बन्ध सुखदायी भी हो सकते हैं तो दुखदायी भी हो सकते हैं।

सावधानी - श्रेष्ठ खाता जमा करने के पुरुषार्थी को ज्ञान-प्रकाश को धारण कर दैहिक प्रकृति, तत्वों, व्यक्तियों से कभी भी तंग होकर अपनी सहनशक्ति को नहीं खोना चाहिए, अपने धैर्य को नहीं खोना चाहिए, सदैव भविष्य के प्रति आशावान होना चाहिए तथा शक्ति के एकमात्र स्रोत सर्वशक्तिवान परमात्मा के साथ सदैव बुद्धियोग को जुटाये रहना चाहिए, जिससे उसके द्वारा सही मार्ग-दर्शन मिलता रहेगा तो सदा श्रेष्ठ कर्म होंगे और श्रेष्ठ कर्म-फल का खाता जमा होता रहेगा।

आत्मा को देहाभिमान के वशीभूत कोई विकर्म न करना चाहिए जिससे व्यक्तियों के साथ दुखदायी कर्म-बन्धन का खाता जुटे और इन्द्रिय सुखों के वशीभूत होकर तत्वों का दुरुपयोग भी नहीं करना चाहिए, जिससे तत्वों के साथ भी दुखदायी हिसाब-किताब बनें क्योंकि अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी तत्वों के दुरुपयोग और कर्म-बन्धन के कारण ही होती है।

सार -यदि इन सब बातों के विस्तार में न जाकर एक मन्त्र निश्चय और विश्वास के साथ सदा याद रखें तो सदा ही खाता जमा होता रहेगा - "मैं आत्मा हूँ और परमपिता परमात्मा हमारे साथ है।" इसलिए ही कहा गया है - एकै साधे सब सधैं। खाता जमा के साथ खाता चुक्तू

करने के लिए भी आत्मिक शक्ति चाहिए, जिससे आत्मा हतोत्साहित होकर कोई अकर्तव्य न कर बैठे, इसके लिए कर्म का यथार्थ ज्ञान और आत्मिक शक्ति परमावश्यक है। अभी संगमयुग पर नये कल्प के लिए खाता जमा भी होता है तो रहे हुए पुराने सब खाते चुक्ता भी होते हैं।

आत्मा मन्सा-वाचा-कर्मणा, दृष्टि-वृत्ति-स्मृति अर्थात् कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों से जो भी क्रिया करती है, वह कर्म है, उसका प्रभाव आत्मा और प्रकृति पर पड़ता है, उनसे आत्मा का हिसाब-किताब बनता है और उसका अच्छा-बुरा फल आत्मा को किसी न किसी रूप में अर्थात् दैहिक-दैविक-भौतिक रूप से सुख-दुख के रूप में प्राप्त अवश्य होता है।

मन्सा-वाचा-कर्मणा, दृष्टि-वृत्ति-स्मृति किसी भी रूप से आत्मा जो कर्म करती है, जिससे आत्माओं को सुख मिले, उनको श्रेष्ठ कर्म करने की प्रेरणा मिले, जीवन को श्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा मिले, वे कर्म दूसरों की जीवन श्रेष्ठ बनायें, उनका कल्याण हो, वह श्रेष्ठ कर्म है और उनसे जाने-अन्जाने उस आत्मा का अच्छा खाता जमा होता ही है, उसके फलस्वरूप इस जीवन में या भविष्य जीवन में उसका उन आत्माओं के द्वारा या उनके माध्यम से उस आत्मा को उसका अच्छा फल अवश्य मिलता है। परमपिता परमात्मा तो निराकार है और ज्ञान का सागर है, वह तो इस विश्व-नाटक का साक्षी-दृष्टा है और ज्ञान के द्वारा आत्माओं को श्रेष्ठ कर्मों का रास्ता बताता है, इसलिए उसके साथ हिसाब-किताब की बात नहीं होती। खाता तो आत्माओं का आत्माओं के साथ ही अच्छा या बुरा बनता है और आत्माओं के द्वारा उसका अच्छा या बुरा फल मिलता है। कर्म के खाते के आधार पर ही राजा-प्रजा, दास-दासी, मालिक-मजदूर आदि बनते हैं। परमात्मा का आत्माओं के साथ न खाता बनता है और न ही परमात्मा कोई हिसाब रखता है और फल का निर्णय करता है। विश्व-नाटक की ये सब क्रिया तो स्वचालित है, जो चलती रहती है। ज्ञान की गहराई से देखें तो परमात्मा के साथ भी हमारा अच्छा खाता बनता है। वह आकर हमको ज्ञान देकर रास्ता बताता है, जिससे हमारा जीवन बनता है और हम भक्ति मार्ग में उसकी महिमा करते, मन्दिर बनाते, पूजा आदि करते हैं। इसको भी परमात्मा के साथ हिसाब-किताब ही कहेंगे।

"तुम जानते हो - जिन्होंको बाप नॉलेज दे रहे हैं, वे ही भक्ति मार्ग में उनके मन्दिर, शास्त्र आदि बनाते हैं। ... यूँ तो उत्तम पुरुष बहुत ही होते हैं परन्तु वे एक ही जन्म में उत्तम, मध्यम और कनिष्ट हो पड़ते हैं।" सा.बाबा 10.11.06 रिवा.

"व्यर्थ कर्म भी किया तो वर्तमान और भविष्य जमा तो नहीं हुआ। श्रेष्ठ कर्म करने से वर्तमान में भी श्रेष्ठ कर्म का प्रत्यक्षफल खुशी और शक्ति की अनुभूति होगी।... दूसरे भी ऐसी श्रेष्ठ

कर्मी आत्माओं को देख पुरुषार्थ के उमंग-उत्साह में आते हैं कि हम भी ऐसे बन सकते हैं तो अपने प्रति प्रत्यक्ष फल और दूसरों की सेवा। डबल जमा (वर्तमान और भविष्य) हो गया।"

अ.बापदादा 11.4.82

* मन्सा-वाचा-कर्मणा जिस कर्म से अन्य आत्माओं को सुख मिले, उनको श्रेष्ठ कर्म या श्रेष्ठ जीवन बनाने की प्रेरणा मिले, किसका जीवन श्रेष्ठ बनाये, किसका कल्याण हो वह कर्म श्रेष्ठ कर्म है और उससे श्रेष्ठ कर्मों का खाता जमा होता है। परमात्मा तो इस विश्व-नाटक का साक्षी-दृष्टा और निष्कामी है, वह ज्ञान देकर श्रेष्ठ कर्मों का रास्ता बताता है। खाता तो आत्माओं का आत्माओं के साथ बनता और ना होता है।

* इस प्रकृति में हर चीज किसी न किसी के उपभोग के लिए है , इसलिए इसमें हर कण और हर संकल्प का हिसाब-किताब होता है और कर्ता उसके फल से प्रभावित अवश्य होता है।

* भय का मूल कारण आत्मा के भूतकाल में किये गये विकर्म है। अज्ञानता के वशीभूत आत्मा के भूतकाल के विकर्म ही आत्मा को भयभीत करते हैं। इससे मुक्ति का एकमात्र उपाय सत्य को जानकर सुकर्मों का खाता संचित करना है। गायन है सच तो बीठो नच। सत्य सबसे बड़ा सुकर्म है। सत्य स्वरूप में स्थित रहना, सत्य बोलना, सत्य कर्म करना आत्मा को निर्भय बनाता है।

"अधिकार लेने में अब और करने में कब कर लेंगे। लेने में बड़े बन जाते हैं और करने में छोटे बन जाते हैं, इसको कहा जाता है यथा शक्ति आत्मा।... इसलिए अब यथा शक्ति आत्मा से मास्टर सर्वशक्तिवान बनो। करने वाले बनो तो स्वत: ही शक्तिशाली कर्म का फल शुभ भावना, श्रेष्ठ कामना का फल स्वत: ही प्राप्त होगा। सर्व प्राप्तियाँ स्वयं ही आपके पीछे परछाई के समान अवश्य आयेंगी। सिर्फ ज्ञान सूर्य की प्राप्त हुई शक्तियों की रोशनी में चलो तो सर्व प्राप्ति रूपी परछाई आपेही पीछे-पीछे आयेगी।" अ.बापदादा 29.4.84

"कहते हैं - भूल हो गई, क्षमा करो। बाबा कहते हैं - इसमें क्षमा की बात नहीं। ... कोई भी उल्टा-सुल्टा कर्म करते हो, वह जमा होता है, जिसका अच्छा-बुरा फल अवश्य मिलता है।"

सा.बाबा 28.7.05 रिवा.

"अगर बाप (परमात्मा) का बनकर कोई पाप कर्म किया तो सौगुणा दण्ड पड़ जायेगा"

सा.बाबा 3.10.97 रिवा

"निमित्त बनने वाले का एक सेकेण्ड में एक का पद्मगुणा बनना भी है, प्राप्ति का चान्स है और अगर निमित्त बने हुए कोई ऐसा कर्म करते हैं, जिसको देख और सभी विचलित हों, तो उसका पद्मगुणा उल्टी प्राप्ति भी होती है।" अ.बापदादा 16.1.77

* ज्ञानी आत्मा को श्रेष्ठ कर्म करने के लक्ष्य से पीछे नहीं हटना चाहिए। बिना किसी की परवाह किये अपना श्रेष्ठ कर्म करते रहना चाहिए क्योंकि श्रेष्ठ कर्म का फल अवश्य ही श्रेष्ठ होगा - ये कर्म का अनादि-अविनाशी अटल सिद्धान्त सदा याद रखना चाहिए।

"कोई भी कर्म निष्फल हो ही नहीं सकता क्योंकि बाप की याद में करते हो ना। याद में किये हुए कर्म का फल सदा श्रेष्ठ रहता है। इसलिए कभी भी दिलशिकस्त नहीं बनना।"

अ.बापदादा 14.1.79 पार्टी

* किसी पाप कर्म या पुण्य कर्म के फल का निर्णय उसके प्रभाव के दृष्टिकोण (Angles) पर निर्भर करता है अर्थात् उस कर्म से कितनों को लाभ या हानि हुई, सुख हुआ या दुख हुआ। यदि बाप का बनकर विकार में जाते तो हमारे अनेक प्रकार से विकर्म बनते हैं और हमारा अनेक गुणा पाप का खाता बढ़ता है या पुण्य का खाता कम होता है। क्योंकि उससे हम (1) बाप का नाम बदनाम करते, (2) ब्राह्मण कुल को बदनाम करते, (3) अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ते, (4) ज्ञान को बदनाम करते, (5) वातावरण को दूषित करते, (6) अन्य आत्माओं के लिए विघ्न रूप बनते आदि आदि। जबकि साधारण व्यक्ति विकार में जाता तो उसका ऐसा प्रभाव नहीं होता क्योंकि उसका वह स्वभाविक जीवन है, मर्यादा है, इसलिए उनके इस कर्म का इतना पाप-कर्म नहीं होता, जितना ब्राह्मण आत्माओं का होगा।

* किसी की वस्तु को देखकर लालायित होना भी भिखारीपन है और अपना जमा का खाता कम करना है क्योंकि उससे भी ज्ञान का और बाप की भी निन्दा कराते है। संगमयुगी ब्राह्मण जीवन सारे कल्प से सम्पन्न जीवन है क्योंकि ज्ञान के समान कोई धन नहीं है, परमात्मा के समान कोई सम्बन्धी नहीं है, आत्मिक स्थिति के समान कोई स्थिति नहीं है।

* अपने कर्मो पर विश्वास रखकर मनुष्य को सतत श्रेष्ठ कर्म करके अपना श्रेष्ठ कर्मों का खाता जमा करते रहना चाहिए। श्रेष्ठ कर्मों का फल ही आत्मा का सच्चा साथी है, जो आत्मा को भविष्य की चिन्ता और भूतकाल के चिन्तन से मुक्त करता है।

* बिना जाने किसी बात पर निर्णय देना भी मनुष्य के श्रेष्ठ कर्मों के खाते को कम करता है। यदि निर्णय गलत होता है तो उससे मनुष्य का पाप कर्म बढ़ जाता है।

* श्रेष्ठ कर्मों के जमा का खाता आत्मा को निर्भय और निश्चिन्त करता है। प्रभु-स्मृति और ईश्वरीय सेवा सबसे श्रेष्ठ कर्म है, जिससे श्रेष्ठ कर्म का खाता सबसे अधिक जमा होता है - इस सत्य को जानकर प्रभु स्मृति और ईश्वरीय सेवा में निमग्न रहना ही वर्तमान जीवन की सफलता है और भविष्य जीवन की सफलता का आधार है।

"मैं तो सभी का दुखहर्ता-सुखकर्ता हूँ।... अज्ञानकाल में मनुष्य समझते हैं कि भगवान ही

दुख-सुख देते हैं परन्तु बाप ईश्वर यह धन्धा नहीं करते हैं। यह तो कर्मों के अनुसार बना हुआ ड्रामा है। जो जैसा कर्म करता है, वैसा फल पाता है।"

सा.बाबा 12.9.2001 रिवा.

"तुम मुझे याद करेंगे तो मैं भी मदद करूँगा। तुम नफरत करेंगे तो गोया अपने ऊपर नफरत करते हो। ... यह ज्ञान और योग की रेस है, जो इसमें तीखे जायेंगे, वे ही गले का हार बनेंगे और तख्त पर नज़दीक बैठेंगे।" सा.बाबा 29.11.06 रिवा.

"उनसे भी जास्ती पापात्मा वह है, जो यहाँ आकर, मेरा बनकर मुझे फारकती दे देते हैं। मेरी निन्दा कराते हैं, उनके लिए फिर ट्रिबुनल बैठती है। प्रतिज्ञा कर फिर डिस्सर्विस करेंगे तो कड़ी सजा मिलेगी।" सा.बाबा 12.9.2001 रिवा.

* इस कर्मक्षेत्र पर कर्म प्रधान है, कर्म के अनुसार फल इस सृष्टि का विधान है। इसीलिए विभिन्न विद्वानों ने इसके विषय में अनेक प्रकार से वर्णन किया है। यथा

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस कीन्ह तासु फल चाखा।

तुलसी ये तन खेत है मन्सा भया किसान, पाप-पुण्य दो बीज हैं जो जस बुवै सो तस लुनै निदान।

कर्मण्ये वाधिकारस्ते मां फलेषु कदाचन।

जीवात्मा अपना आप ही मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।

"सिर्फ लकीर के ऊपर लकीर खींच रहे हो। ड्रामा की लकीर खींची हुई है, नई लकीर नहीं खींच रहे हो, जो सोचो कि पता नहीं सीधी होगी या नहीं। कल्प-कल्प की बनी हुई प्रारब्ध को सिर्फ बनाते हो क्योंकि कर्मों के फल का हिसाब है। ... यह है अटल निश्चय।"

अ.बापदादा 11.4.86

"हर कर्म में श्रेष्ठ और सफल रहना - इसको कहते हैं नॉलेजफुल। शरीर की भी नॉलेज और आत्मा की भी नॉलेज। दोनों नॉलेज हर कर्म में चाहिए।" अ.बापदादा 11.4.86

इस विश्व-नाटक का अन्तर्जाल (Internate) इतना प्रभावशाली है कि भारत में किये गये कर्म या कर्म के बोये हुए बीज का फल आत्मा को लन्दन में भी भोगना पड़ेगा। आत्मा अपने कर्म का फल भोगने के लिए बाध्य है। भारत में बैठी आत्मा के संकल्प का प्रभाव लण्डन में बैठी हुयी आत्मा को भी प्रभावित करता है।

* इस सृष्टि नाटक का विधि-विधान ऐसा सत्य है कि हर आत्मा को अपना अच्छा-बुरा कर्म फल भोगना ही है। दुनिया के किसी भी कोने में बीज बोया होगा, उसका फल ब्रह्मास्त्र के समान हमारा पीछा करता है और हम दुनिया के किसी भी कोने में चले जायें वहाँ भी मिलेगा ही।

"त्रिकालदर्शी के स्मृति की स्थिति रूपी तख्त पर स्थित होकर कोई भी कर्म करो, फिर कर्म फल नहीं देवे, यह हो नहीं सकता। बीज अगर शक्तिशाली होगा तो फल अवश्य मिलेगा।... अभ्यास में कभी भी अलबेले नहीं बनो।" अ.बापदादा 22.1.90 पार्टी

## कर्म और कर्मों के हिसाब-किताब

ये सृष्टि कर्मक्षेत्र है, यहाँ मन्सा-वाचा-कर्मणा, दृष्टि-वृत्ति-स्मृति... से जो भी क्रिया करता है, वह कर्म है और उससे आत्मा का हिसाब-किताब बनता है। ये हिसाब किताब बनने का विधि-विधान भी विचित्र है, जो परमात्मा ही आकर बताते हैं। आत्मा का खाता सदा अच्छा रहे और सम्बन्ध सदा सुखदायी रहें, इसके लिए आत्मा के हिसाब-किताब कहाँ कहाँ बनते हैं, किस-किस के साथ बनते हैं, वे कैसे बनते और चुक्ता होते हैं, इन सब विषयों के सम्बन्ध में भी ज्ञान होना अति आवश्यक है।

आत्मा का परमात्मा के साथ हिसाब-किताब
आत्मा का आत्माओं के साथ हिसाब-किताब,
आत्मा के जड़ प्रकृति के साथ हिसाब-किताब
आत्मा का अन्य योनि की आत्माओं के साथ हिसाब-किताब,
आत्मा का स्वयं ही स्वयं के साथ अर्थात् अपनी ही प्रकृति के साथ।हिसाब-किताब

पाप-पुण्य का हिसाब-किताब - द्वापर से
खाने और खर्चने का हिसाब-किताब - सतयुग से ही
जमा करने का हिसाब-किताब - पुरुषोत्तम संगमयुग पर
आत्मा का परमात्मा के साथ हिसाब-किताब

परमात्मा को सौदागर भी कहते हैं, परमात्मा के द्वारा स्थापित इस यज्ञ को ईश्वरीय बैंक भी कहते हैं, इससे सिद्ध है कि परमात्मा के साथ भी आत्माओं का हिसाब-किताब का खाता चलता है, जिसके आधार पर ही परमात्मा से सतयुग-त्रेता युग में वर्से के रूप में फल मिलता है। आत्मायें भक्ति मार्ग में उसकी महिमा गाती हैं, मन्दिर आदि बनाते हैं।

आत्मायें संगमयुग पर अपने योगबल से प्रकृति को सतोप्रधान बनाती हैं, जिसके फल स्वरूप सतयुग-त्रेता में मनवांछित फल देती है अर्थात् सतयुग में आत्मायें जो सतोप्रधान सुख-साधनों का भोग करती हैं, उनसे आत्माओं का प्रकृति के साथ जमा किया हुआ हिसाब-किताब का सुखदायी खाता खत्म होता है।

ऐसे ही विभिन्न सुखदायी सम्बन्धों से आत्माओं का आत्माओं के साथ मधुर सम्बन्धों का खाता कम होता है। आत्मायें अपने तन द्वारा जो नैतिक-अनैतिक कार्य करते हैं, जिसका प्रभाव अपने तन तक ही सीमित रहता है, जिससे आत्मा का अपने साथ ही हिसाब-किताब बनता है और उसके फलस्वरूप बीमारी आदि के रूप में हिसाब-किताब चुक्ता होता है। परमात्मा से प्रदत्त ईश्वरीय सेवा अर्थ मिला ये तन अति मूल्यवान है, इससे हम किन्हीं अनैतिक इन्द्रीय सुखों के रूप में प्रयोग करते हैं, तो वह भी हिसाब-किताब बनता और चुक्ता होता है।

* देह से न्यारी स्थिति परम सुखदायी, परमानन्दमय है। साक्षी होकर निर्संकल्प स्थिति में स्थित हो इसका आनन्द अनुभव करना ही संगमयुग की परम प्राप्ति है। अनेक आत्माओं के साथ अनेक जन्मों के अच्छे-बुरे हिसाब-किताब हैं, इसलिए इस सत्य को सदा ध्यान में रख किसके विषय में कुछ सोचना नहीं है। परमात्मा और प्रकृति को कोई धोखा नहीं दे सकता है, उसके नियम अटल और न्यायपूर्ण हैं, जिनके अनुसार हर आत्मा को उसके कर्मानुसार फल अवश्य प्राप्त होता है और होगा। हमारा कर्तव्य है कि हम हर आत्मा के प्रति शुभ संकल्प रखें और साक्षी होकर इस जीवन का सच्चा सुख अनुभव करें।

* तुम किसका बुरा नहीं सोचोगे तो तुम्हारा कोई बुरा कर नहीं सकता, तुम्हारे लिए कोई बुरा सोच भी नहीं सकता। इस जगत में क्रिया की ही प्रतिक्रिया होती है और क्रिया-प्रतिक्रिया पर ही ये विश्व-नाटक सतत गतिशील है।

* कर्म का खेल बड़ा निराला है, इसकी गहन गति कोई भी यथार्थ रीति नहीं जानता परन्तु ये अटल सत्य है और कर्म का अविनाशी विधान है कि हर आत्मा को अपने कर्म का अच्छा-बुरा फल अवश्य मिलता है, इसलिए तुम किसके कर्म का चिन्तन मत करो। तुम कर्म की गहन गति को बुद्धि में रखकर श्रेष्ठ कर्म में प्रवृत्त रहो, अपने जीवन को श्रेष्ठ कर्म करके सफल करो। "जीवात्मा अपना आप ही ... शत्रु है" - इस सत्य को कभी भूलना नहीं। परमपिता परमात्मा की याद और ईश्वरीय सेवा सबसे श्रेष्ठ कर्म है।

"आप सबसे फीलिंग आये कि यह हमको देने वाले हैं, सहयोग देने वाले हैं, दिल का स्नेह देने वाले हैं।... अभी इस रूप को प्रत्यक्ष करो। ... पाण्डव बाप के साथ रहने वाले और सर्व को साथ देने वाले।" अ.बापदादा 31.12.06

## आत्माओं के जड़ प्रकृति के साथ हिसाब-किताब

आत्मा मन्सा-वाचा-कर्मणा, दृष्टि-वृत्ति-स्मृति...जो कर्म करती है उसका प्रभाव जड़ प्रकृति पर भी पड़ता है, उससे प्राकृति तत्व या तो पावन होते हैं, या फिर दूषित होते हैं। बाबा

ने अनेक बार कहा है - तुम्हारे योग से वातावरण शुद्ध होता है, जिसका प्रभाव से जड़ तत्व और चेतन आत्मायें पावन बनती हैं।

ड्रामा की अनादि-अविनाशी नूँध और कर्म का विधान इस विश्व-नाटक रूपी गाड़ी के दो पहिये हैं, जो साथ-साथ चलते हैं। हर कर्म से आत्मा के आत्माओं के साथ के हिसाब-किताब पूरे भी होते हैं तो नये बनते भी हैं। कल्पान्त में जन्म-जन्मान्तर के हिसाब-किताब चुक्ता करके आत्मायें घर जाती हैं। इसलिए अभी सभी आत्माओं को सारे कल्प के रहे हुए खाते को, अपने सर्व विकर्मों के हिसाब-किताब के खाते को पूरा करना है और श्रेष्ठ कर्म करके सतयुग के लिए नये पार्ट के लिए नये हिसाब-किताब को बनाना भी है। ज्ञानी आत्मा को किसी के हिसाब-किताब, सुख-दुख को देखकर आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए और किसी घटना को देखकर अपने संकल्प को व्यर्थ नहीं करना चाहिए, किसके कर्म को देखकर किसके प्रति घृणा-राग-द्वेष की भावना भी नहीं होना चाहिए क्योंकि हर आत्मा के अपने हिसाब-किताब हैं, जो उसको पूरा करना ही है और शुभाशुभ भावना से भी आत्मा का आत्माओं के साथ हिसाब-किताब बन जाता है।

यह विश्व एक विशाल नाटक है, इसमें असंख्य आत्मायें पार्टधारी हैं, उन सबके हिसाब-किताब के विधि-विधान की क्रिया-प्रतिक्रिया अपनी है। सर्व आत्माओं के हिसाब-किताब, विधि-विधान की क्रिया-प्रतिक्रिया को समझना या किसी आत्मा विशेष के 84 जन्मों के हिसाब-किताब की क्रिया-प्रतिक्रिया को समझना किसी भी आत्मा के लिए सम्भव नहीं है। परमात्मा भी कहता है - मुझको ये सब जानने की आवश्यकता नहीं है परन्तु मैं जब चाहें तब उसे प्रत्यक्ष की भांति देख सकता हूँ। ये सृष्टि एक स्व-चालित नाटक और इसके सभी विधि-विधान स्व-चालित हैं। सभी विधि-विधान सत्य, न्यायपूर्ण और कल्याणकारी हैं, जो अनादि काल से चल रहे हैं और अनन्त काल तक चलने वाले हैं। ज्ञान सागर परमात्मा ने इस सत्य सिद्धान्त को सार रूप में हम आत्माओं को बता दिया है कि कोई भी आत्मा बिना किसी कर्म के कोई अच्छा या बुरा फल नहीं भोग सकती। परमात्मा और समर्थ आत्माओं में ये शक्ति है कि वे संकल्प करते ही किसी आत्मा के विषय में जान सकते हैं परन्तु किसको ये जानने की आवश्यकता नहीं है। इसीलिए परमात्मा ने कहा है - बिना साक्षात्कार कराये धर्मराज भी सजा नहीं दे सकता है। इस सत्य सिद्धान्त को समझनें के बाद किसी भी ज्ञानी आत्मा को किसके विषय में संकल्प, वर्णन, चिन्तन करने का अंशमात्र भी स्थान नहीं है। ये करना भी उन आत्माओं के साथ अपना हिसाब-किताब बनाना है और अपने भविष्य को अन्धकारमय बनाना है। सबके साथ शुभ-भावना और शुभ-कामना रखना ज्ञानी आत्मा का कर्तवय है।

* जो जिस रूप में तन-मन-धन से यज्ञ की स्थापना के कार्य में सहयोगी बनता है, वह उसका फल नई दुनिया में उस रूप में ही अवश्य पाता है।

* समय और आवश्यकता के समय यज्ञ में सहयोग करने वाले को बाप अन्त तक सहयोग अवश्य करता है।

"कब पतित भी यहाँ छिपकर आते हैं। वे अपना ही नुकसान कर लेते हैं। अपने को ठगते हैं। बाप को तो ठगने की बात ही नहीं।... कहेंगे ड्रामा अनुसार इनकी तकदीर में नहीं है तो भगवान भी क्या करे।" सा.बाबा 20.8.71 रिवा.

Q. दोषी अर्थात् उत्तरदायी कौन ?

इस जगत में यह प्रश्न एक बड़ी पहेली है कि "दोषी कौन", जिसको हल कर पाना अति कठिन है। प्राय: सभी अप्रिय घटनाओं के समय मनुष्य में मन अनायास ही यह प्रश्न उत्पन्न हो जाता है। इस विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान, कर्मों के यथार्थ ज्ञान पर विचार करके इस पहेली का हल सोचेंगे तो ही उसका हल निकल सकेगा। हम किसी दुर्घटना से पीड़ित व्यक्ति की उस समय की परिस्थिति को ही देखते हैं तो अनुभव होता है कि विरोधी पक्ष ही दोषी है परन्तु इस विश्व-नाटक, कर्म-सिद्धान्त और अनेक जन्मों के हिसाब-किताब पर विचार करते हैं तो यही परिणाम निकलता है कि पीड़ित आत्मा स्वयं ही दोषी है।

"किसी के कहने या करने से अपनी स्थिति खराब हो गयी तो उसमें दूसरे का दोष नहीं बल्कि अपना ही दोष है अर्थात् उसके लिए दोषी स्वयं हैं।" दादी जानकी 9.11.06

"यह है कर्मों की गति का हिसाब-किताब। अब अपने आप को चेक करो कि मुझ ब्राह्मण आत्मा का तीव्रगति के तीव्र पुरुषार्थ द्वारा सब पुराने हिसाब-किताब चुक्तू हुए हैं वा अभी भी कुछ बोझ रहा हुआ है ? इसकी विशेष निशानी जानते हो ?... मन में संकल्प चलते हैं कि न चाहते भी पता नहीं क्यों हो जाता है... न चाहते हुए होना, सोचते हुए न होना वा परवश बन सफलता को प्राप्त न करना - यह निशानी है पिछले पुराने खाते के बोझ की। इन निशानियों द्वारा अपने आपको चेक करो। किसी भी प्रकार का बोझ उड़ती कला के अनुभव से नीचे तो नहीं ले आता ?" अ.बापदादा 10.12.84

"कोई-कोई घरों में भी ईविल सोल होती है तो आग आदि लगा देती है, नुकसान करती है। ... जिनको घोस्ट कहते हैं, वे छाया मुआफिक देखने में आते हैं। परन्तु उनका कुछ ख्याल नहीं करना होता है। तुम जितना बाप को याद करेंगे, उतना यह सब खत्म होते जायेंगे। यह भी हिसाब-किताब है ना।" सा.बाबा 4.2.04 रिवा.

"करावनहार बाप है लेकिन निमित्त करनहार बच्चों को ही बनाते हैं क्योंकि बच्चों को ही कर्म

का फल प्रालब्ध मिलती है। निमित्त कर्म बच्चों को ही करना है। सम्बन्ध में ब्रह्मा बाप के साथ साथ बच्चों को आना है।...अभी कार्य को आधा में तो नहीं छोड़ना है ना और बिना सम्पन्नता के आत्मा कर्मातीत हो बाप के साथ जा नहीं सकती है।"

अ.बापदादा 14.4.83

"अभी हम सोचकर अच्छा चलें, फिर भी हमारे से किसको दुख पहुंचा... यह है सारी कर्मों की फिलासॉफी। अनेक जन्मों का हमारा खाता चलता है। ऐसे नहीं अभी हम जो करते सो अभी ही पाते हैं। नहीं, अभी हम जो करते हैं, वह हमारा खाता रिजर्व में कई जन्मों तक चलता रहता है। ... हमारा कई जन्मों का खाता स्टॉक में रहता है, इसलिए हम उसको भोगते हैं। इसलिए सिर्फ इस जीवन को नहीं देखना है।" मातेश्वरी 23.4.65

* आत्मायें अलबेलेपन से, टोण्ट, हंसी-मज़ाक में भी किसी आत्मा को दुख देते हैं या कोई आत्मा दुख महसूस करती है, तो उसके साथ भी देने वाले का हिसाब-किताब बनता है और उस हिसाब-किताब को दुख के रूप में भोग कर चुक्ता करना पड़ता है।

* अमर्यादित कार्य करने का भी हिसाब-किताब बनता है, जो आत्मा को भारी बना देता है, उड़ने नहीं देता है और आत्मा को चुक्ता करना होता है। जैसे क्लास कुर्सी-कुर्सी के ऊपर कुर्सी रखकर बैठना, जिससे दूसरों को डिस्टर्वेनस होना, कुछ को बैठने का स्थान न मिलना, दूसरे का संकल्प चलना, आदि आदि।

"किसी साथी से किनारा करके अपनी अवस्था को अच्छा बनाकर दिखाऊं, यह संकल्प भी नहीं करना। ... अगर एक बार किनारा करने की आदत अपने में डाली तो यह आदत आपको कहाँ भी टिकने नहीं देगी।" अ.बापदादा 7.3.90

"बहुत हैं, जो सेन्टर खोल देते परन्तु खुद नहीं पढ़ते हैं। जो अच्छी रीति पढ़ेंगे, वे ऊंच पद पायेंगे। बाकी हाँ, सेन्टर खोलने से बहुतों का कल्याण होने की आशीर्वाद उनको मिल जाती है। ... प्रजा में साहूकार बनेंगे, मान भी हो सकता है। बीज बोने का एवजा तो मिलेगा ना। यह बाप जाने और दादा जाने।" सा.बाबा 1.12.06 रिवा.

जब तक किसी व्यक्ति या स्थान के साथ आत्मा का कर्म-सम्बन्ध या कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब है, तब तक ही आत्मा उस स्थान या व्यक्ति के साथ रहती है अर्थात् उस समय तक उस व्यक्ति या स्थान को छोड़कर नहीं जा सकती और हिसाब-किताब पूरा होने के बाद एक सेकेण्ड भी उस व्यक्ति साथ या स्थान पर नहीं रुक सकती। आत्मा का ये हिसाब-किताब का विधि-विधान सतयुग-त्रेता में भी प्रभावित होता है तो द्वापर-कलियुग में भी प्रभावित होता है। सतयुग में आत्माओं का आत्माओं के साथ हिसाब-किताब बहुत थोड़ा होता है और वह भी

संगमयुग पर परमात्मा के माध्यम से बनता है, इसलिए वहाँ किसका किसमें मोहादि नहीं रहता है, इसलिए आत्मा के जाने से दुख आदि नहीं होता है।

"अगर आप स्वयं हर जोन में निर्विघ्न बनकर दिखायेंगे तो आपकी वृत्ति का वायुमण्डल फैलेगा। यह नहीं सोचना कि वायुमण्डल फैला या नहीं फैला। अवश्य फैलेगा। ... उमंग-उत्साह से कोई भी संकल्प करेंगे तो विजय है ही है। तो याद रखना - यूथ का स्लोगन है - करना ही है। बुरा नहीं, अच्छा करना। विजयी बनना ही है, सफलता का सितारा बनना ही है।"

अ.बापदादा 15.12.06 युवा पदयात्री

## १३. कर्म और कर्म-भोग अर्थात् दैहिक, दैविक, भौतिक, मानसिक व्याधियाँ

जीवात्मा इस कर्मक्षेत्र पर जो भी अच्छा या बुरा कर्म करता है, उसका प्रभाव दैहिक, दैविक और भौतक रूप से जड़ प्रकृति और चेतन आत्माओं पर अवश्य ही पड़ता, जिसके परिणाम स्वरूप ही जीवात्मा को दैहिक, दैविक और भौतक अर्थात् दैहिक व्याधि, मानसिक व्याधि, सम्बन्धों में कटुता आदि के रूप में अवश्य ही भोगना पड़ता है। कई घटनाओं में देखा गया है कि लोग सोचते हैं, इसमें हमारा या किसी विशेष आत्मा का कोई हाथ नहीं है तो भी ये भोगना उसको क्यों भोगनी पड़ रही है। प्राकृतिक आपदाओं के समय तो प्राय: ऐसा सुनने में आता ही है परन्तु सृष्टि के अनादि-अविनाशी नियमानुसार बिना कर्म के किसी भी आत्मा को कोई दुख या सुख नहीं हो सकता है। हमारे हर संकल्प और कर्म का प्रकृति और आत्माओं पर प्रभाव जाने-अन्जाने पड़ता ही है, जिसके फलस्वरूप उनसे हमको सुख या दुख मिलता है।।

"समझाया गया है जो नम्बरवन में पुण्यात्मा बनता है वही फिर नम्बरवन पापात्मा भी होता होगा। उनको बहुत मेहनत करनी पड़ेगी क्योंकि शिक्षक बनते हैं, सिखलाने के लिए। तो जरूर मेहनत करनी है। बीमारी आदि होती है तो अपने ही कर्म का भोग कहा जाता है। अनेक जन्मों के विकर्म किये हुए हैं, इस कारण भोगना होती है। इसलिए कभी भी इससे डरना नहीं है। खुशी से पास करना क्योंकि अपना ही किया हुआ हिसाब-किताब है। प्रायश्चित होता ही है बाप की याद से।"

सा.बाबा 23.6.72 रिवा.

आत्मा को अपने कर्मों का फल तीन प्रकार अर्थात् दैहिक, दैविक, भौतिक व्याधियों के रूप में भोगना ही पड़ता है। कुछ कर्म ऐसे होते हैं, जिनसे आत्मा का अन्य आत्माओं से विशेष सम्बन्ध

नहीं होता है, अपने तक ही सीमित होते हैं जैसे खान-पान, रहन-सहन आदि के नियमों का उलंघन। ऐसे कर्मों का फल दैहिक व्याधियों के रूप में भोगना पड़ता है, अन्य आत्माओं के साथ उसका बहुत कम सम्बन्ध होता है। जैसे-

शारीरिक व्याधि - जैसे अन्धा, लूला, लंगड़ा आदि

शारीरिक व्याधि एवं सम्बन्ध - जैसे बीमारी और बीमारी के कारण अनेकों के साथ सम्बन्ध, खर्च आदि के रूप में हिसाब-किताब, सम्बन्धों में कटुता और मधुरता आदि का होना।

कुछ कर्म ऐसे होते हैं, जो सामूहिक रूप में होते हैं और विशेष रूप से प्रकृति को प्रभावित करते हैं, जिसके कारण अनेक आत्माओं को उसका परिणाम सामूहिक रूप में भुगतना पड़ता है। ऐसे कर्मों का फल दैविक आपदाओं अर्थात् प्राकृतिक आपदाओं के रूप में सामने आता है और उसके निमित्त बनी हुई सर्व आत्माओं को उसका परिणाम भोगना पड़ता है। इसकी कोई हार्ड एण्ड फास्ट लाइन नहीं है, जिसके आधार पर इसकी सत्यता को समझा जा सके और यदि है तो वह हमारी समझ के बाहर है, जिसके आधार पर ये कहा जा सके कि किन कर्मों के आधार पर किन प्रकृतिक आपदाओं का प्रकोप होता है, जिसके कारण अनेक आत्माओं को उसका फल सामूहिक रूप में भोगना पड़ता है परन्तु कर्म के अटल सिद्धान्त के आधार पर ये निश्चय से कहा जा सकता है कि किसी आत्मा को बिना कोई विकर्म किये दुख-अशान्ति की भोगना प्रकृति या व्यक्ति से हो नहीं सकती है। ये स्थिति भी क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के आधार पर धीरे-धीरे ही निर्मित होती है और समय आने पर फल देती है। जैसे - भूकम्प, सुनामी, अतिवृष्टि-अनावृष्टि, आदि-आदि प्राकृतिक आपदायें।

किस कर्म का क्या फल है, ये सत्य तो समझना कठिन है परन्तु ये अटल सत्य है कि हर आत्मा को दैहिक, दैविक, भौतिक रूप में जो भी सुख या दुख मिलता है, वह उसके ही कर्मों का परिणाम है क्योंकि कोई भी कर्म बिना कारण के नहीं हो सकता और किसी भी क्रिया की प्रतिक्रिया अवश्य होती है, जिससे आत्मायें प्रभावित होती हैं। जैसे कोई भी फल बिना वृक्ष के नहीं हो सकता, उसी प्रकार कोई कर्म-फल बिना कर्म के नहीं हो सकता। हर आत्मा को अपने कर्म का फल अवश्य मिलता है। भले हमको ये स्पष्ट ज्ञान नहीं होता है कि हमको अच्छा या बुरा जो फल मिल रहा है, वह हमारे किस कर्म का परिणाम है। कर्मभोग की विभिन्न वेदनाओं से बचने का एकमात्र साधन और साधना यही है कि आत्मा कर्म के इस अटल सिद्धान्त को समझकर उस पर निश्चय और विश्वास करके सदा श्रेष्ठ कर्म करे।

इस विश्व-नाटक में संस्कार-दृष्टि-वृति-वातावरण-स्मृति-संकल्प-कर्म-कर्मफल-संस्कार का अनादि-अविनाशी चक्र है अर्थात् संस्कार से कर्मफल फिर संस्कार तक का ये क्रम सतत

चलता रहता है। हर आत्मा को वर्तमान में स्थित होकर अपने वर्तमान कर्मों को श्रेष्ठ बनाना और बनाने का संकल्प रखना ही उसका परम कर्तव्य है।

"वहाँ सतयुग में ऐसे नहीं कहेंगे कि यह अगले जन्म के कर्मों का फल है। अभी बाप तुम बच्चों को श्रेष्ठ कर्म सिखला रहे हैं। जैसा-जैसा जो कर्म करेगा, सर्विस करेगा तो उसका रिटर्न भी ऐसा मिलेगा।... कोई कर्म करते हैं, समझ नहीं सकते तो उसके लिए श्रीमत लेनी है।"

सा.बाबा 27.10.2000 रिवा.

* अपने पाप कर्मों को सच्चे दिल से परमात्मा को बता देने से उनका भोग हल्का हो जाता है। भक्ति मार्ग में भी किसी मन्दिर-मस्जिद आदि पवित्र स्थान पर अपने कर्म का पश्चाताप करने से भी कर्मों का भोग हल्का हो जाता है परन्तु साकार में परमात्मा के सामने बताने से विशेष हल्का होता है।

"आगे जन्म-जन्मान्तर का हिसाब तो मेरे पास है। इस जन्म का जो है सो इनको सुनाओ तो मैं भी सुनूँगा। ... माफ वह करेंगे, मैं नहीं।"

सा. बाबा 18.11.72 रिवा.

* मनुष्य अपने किये हुए विकर्मों के कारण ही भयभीत होता अर्थात् मनुष्य के अपने ही जाने-अन्जाने में किये गये कर्म ही उसे भयभीत करते हैं, उसके व्यर्थ चिन्तन, दुख-अशान्ति आदि का कारण बनते हैं, जिसके कारण आत्मा निर्संकल्प और निर्विकल्प स्थिति में स्थित हो मुक्ति-जीवनमुक्ति का सच्चा सुख अनुभव नहीं कर सकती है। अपने विकर्मों के कारण आत्मा सेकेण्ड में देह से न्यारी नहीं हो सकती है और अन्त में पास विद् ऑनर के टेस्ट में पास नहीं हो सकती है। इसलिए पास होना है तो अभी कोई विकर्म नहीं करना है और पुरुषार्थ करके पुराने विकर्मों का खाता भस्म करना है।

"अपने कर्मों पर खबरदारी रखना है। कोई भी पाप कर्म न करना है।... अगर अपने घाटे और फायदे का पोतामेल न रखेंगे तो फेल हो जायेंगे। माया ऐसी है जो बहुतों को फेल कर देगी। युद्ध है ना।... जो कर्म दिल को खाता हो, उसे छोड़ते जाओ।"

सा.बाबा 3.9.68

"मनुष्यों को सत्य का पता ही नहीं है। सत्य बताने वाला सतगुरु कोई उनको मिला ही नहीं है, तुमको मिला है, वही सब सच बताते हैं और सच्चा बनाते हैं। बच्चों को कहते हैं - बच्चे तुम कभी भी झूठ-कपट नहीं करना। तुम्हारा कुछ भी छिपा नहीं रहेगा। जो जैसा कर्म करते हैं, ऐसा फल पाते हैं। बाप अच्छे कर्म सिखलाते हैं। ईश्वर के पास कोई का विकर्म छिप नहीं सकता।"

सा.बाबा 2.6.02 रिवा.

"ये भी एक गुप्त रहस्य है। कर्म बन्धन से मुक्त, सम्पन्न हुई आत्मा, इस कल्प के जन्म-मरण के चक्र को समाप्त करने वाली आत्मा ... जहाँ चाहे वहाँ स्वतन्त्र रूप से पार्ट बजा सकती है।" अ.बापदादा 5.7.74

"अपने को हाईएस्ट और होलीएस्ट समझते हुए हर संकल्प व कर्म करते रहते हो?... इतना श्रेष्ठ भाग्य सारे कल्प में फिर प्राप्त नहीं कर सकोगे।... ऊंच काम से ही ऊंच बाप का नाम प्रत्यक्ष होगा।" अ.बापदादा 22.1.76

* अधिक उपभोग, दूसरे के संसाधनों का उपयोग-उपभोग भी उन आत्माओं के साथ कर्मों का हिसाब-किताब बनाता है और कर्म-बन्धन का कारण बनता है। बुद्धिमान ज्ञानी पुरुष इस सत्य को जान जीवन में इसका अवश्य ध्यान रखते हैं और अपने परिश्रम की कमाई का ही भरोसा रखते हैं और जीवन उसका ही उपयोग-उपभोग करते हैं।

* योग है तो जीवन में सदा सुख-शान्ति, अतीन्द्रिय सुख है और वियोग है तो दुख-अशान्ति, भय-चिन्ता अवश्य होती है। इसलिए योग 1-2 घण्टा नहीं लेकिन निरन्तर होना चाहिए। चेक करो - निरन्तर योग है? योग निरन्तर होगा तो कर्म श्रेष्ठ होगा और उसका फल सुख-शान्ति अवश्य होगी।

* जमा का खाता = दुआओं का खाता = शुभ कर्मों का खाता ... सब प्राय: एक ही शुभ कर्मों के खाते के पर्यायवाची हैं। शुभ कर्मों से आत्माओं को सुख मिलता है, जिससे अन्य आत्माओं से दुआयें मिलती हैं और उनके साथ श्रेष्ठ सम्बन्धों का हिसाब-किताब बनता है तथा शुभ कर्मों का श्रेष्ठ फल जमा होता है, जो भविष्य में आत्मा को प्राप्त होता है।

खाता कम होना = अभिषाप = विकर्म ... एक ही अशुभ कर्मों के पर्यायवाची हैं। अशुभ कर्मों से अन्य आत्माओं को दुख होता है, जिसका परिणाम हमारे लिए दुख का खाता संचित होता है या श्रेष्ठ फल का खाता कम होता है और आत्माओं तथा प्रकृति के साथ दुखदायी हिसाब-किताब बनता है।

* हमारे हर संकल्प-स्वांस का हमारे जीवन की सफलता-असफलता में योगदान है, इसका यथार्थ ज्ञान होगा और उसका अनुभव और निश्चय होगा तब हम उनको व्यर्थ से बचाकर सफल कर अपना खाता जमा कर सकेंगे, अपने सुखदायी हिसाब-किताब का खाता बना सकेंगे।

* हमारे लिए दूसरों का जो समय-संकल्प-शक्ति लगती है, वह हमारे जमा के खाते को कम करती है और उनका हमारे साथ कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब बनता है तथा जब हम अपना समय-संकल्प-शक्ति दूसरों के कल्याणार्थ लगाते हैं, वह हमारे जमा के खाते को बढ़ाती है और यदि किसी के अकल्याणार्थ प्रयोग करते हैं तो खाते को कम करती है, जिससे हमारे

दुखदायी हिसाब-किताब बनते हैं।

* किसी के पतन में खुश होना भी पाप-कर्म है, जो आत्मा का पुण्य का जमा का खाता खत्म कर देता है और उनके साथ दुखदायी हिसाब-किताब का निर्माण करता है। घृणा भी पाप-कर्म है, जो भी आत्मा पुण्य का खाता खत्म कर देता है और उन आत्माओं के साथ दुखदायी हिसाब-किताब बनाता है परन्तु अपने हित के लिए नियम-संयम रखना हमारा कर्तव्य है।

"कर्मयोगी के आगे कोई कैसा भी आ जाये लेकिन वह स्वयं सदा न्यारा और प्यारा रहेगा। नॉलेज द्वारा जानेगा कि इसका यह पार्ट चल रहा है। घृणा वाले से स्वयं भी घृणा कर ले, यह हुआ कर्म का बन्धन। ऐसा कर्म के बन्धन में आने वाला एकरस नहीं रह सकता। ... इसलिए अच्छे को अच्छा समझकर साक्षी होकर देखो और बुरे को रहमदिल बन रहम की निगाह से परिवर्तन करने की शुभ भावना से साक्षी होकर देखो।" अ. बापदादा 18.4.82

* जीवात्मा अपना आपही मित्र है और आप ही अपना शत्रु है - इस सत्य को जानकर सदा निर्भय, निश्चिन्त होकर श्रेष्ठ कर्म करना हर आत्मा का कर्तव्य है। प्रकृति और व्यक्ति से हर आत्मा को कर्मानुसार फल अवश्य मिलता है, उसके विषय में सोचने का कोई स्थान नहीं है।

* दूसरे के दुख को भी अपने दुख के समान अनुभव करो तो किसको दुख देने का संकल्प नहीं आयेगा और सबको सुख दे सकेंगे। किसको सुख देंगे तब ही किससे सुख पायेंगे।

* हमको अपने संकल्प के महत्व का अनुभव और निश्चय होना चाहिए। हमारा हर संकल्प विश्व के नव-निर्माण में सहयोगी भी है तो विघ्नरूप भी है। हमारे संकल्प के आधार पर ही हमारे भाग्य का निर्माण होता है। हमारे संकल्प से हमारा खाता जमा भी होता है तो ना भी होता है। संकल्प से ही हमारा अन्य आत्माओं के साथ अच्छा या बुरा हिसाब-किताब बनता है।

* खाता जमा होना या आत्मिक शक्ति के संचय होने की पहचान है कि उस आत्मा में सेकेण्ड में देह से न्यारा होने या संकल्प को जहाँ चाहें, वहाँ वैसे ही रोकने की शक्ति होगी, कोई भी बात संकल्प को खींचे नहीं, जिससे सहज योग की सिद्धि होगी। अन्य आत्माओं के प्रति हमारी शुभ भावना और शुभ कामना होगी और उसकी हमारे प्रति शुभ भावना शुभ कामना होगी।

"कोशिश करते हैं हम राजाई पद पायें परन्तु अगर खिसक पड़ते हैं तो प्रजा में अच्छा पद पाने का पुरुषार्थ करना चाहिए। वह भी तो ऊंच पद हुआ ना। यहाँ रहने वालों से बाहर रहने वाले बहुत ऊंचा पद पा सकते हैं।... गृहस्थ व्यवहार में रहने वालों को इतने माया के तूफान नहीं आते हैं। यहाँ वालों को तूफान बहुत आते हैं। हिम्मत करते हैं हम शिवबाबा की शरण में बैठे हैं परन्तु संगदोष में आकर अच्छी रीति पढ़ते नहीं हैं।"

सा.बाबा 5.3.2001 रिवा.

* हमारे जीवन में जो भी दुख-दर्द है, वह हमारे ही पूर्व कर्मों का परिणाम है, इसलिए उसके लिए किसी अन्य को दोष देना अपना उनके साथ कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब बनाना है। हम उसको भोगकर कर या अपने सुकर्मों के द्वारा ही उसको खत्म कर सकते हैं या उस पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। बाप की याद सबसे श्रेष्ठ सुकर्म है और सर्वश्रेष्ठ कर्मों का आधार है।

* कर्मण्ये बाधिकारस्ते, मां फलेषु कदाचन। हर कर्म का फल निश्चित ही मिलता है, उसके विषय में सोचने-करने की भी आवश्यकता नहीं है इसलिए मनुष्य को सदा ही श्रेष्ठ कर्मे में प्रवृत्त रहना चाहिए।

* किसी भी आत्मा के प्रति - चाहे वह अहितकर कार्य करने वाली क्यों न हो, शत्रुता का व्यवहार करने वाली क्यों न हो परन्तु उसके प्रति भी अशुभ सोचना, अकल्याण का संकल्प करना भी विकर्म है और उसका फल कर्ता को भोगना ही पड़ता है, उससे भी उस आत्मा के साथ कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब बनता है। इस विश्व नाटक की अनादि-अविनाशी नूँध को समझते हुए सर्व के प्रति शुभ और कल्याण की भावना रखना ही ज्ञानी आत्माओं का लक्षण है। ज्ञानी आत्मा अकल्याण का संकल्प करने से तीन गुणा पाप के भागी बनते हैं - एक ईश्वराज्ञा का उलंघन करने का, दूसरा ज्ञानी होकर ज्ञान का अपमान करने का और कर्म का सिद्धान्त उलंघन करने का।

* कब किसी के पतन में खुश नहीं होना चाहिए। दुश्मन के पतन में भी खुश होने से आत्मा पर पाप चढ़ जाता है, कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब बन जाता है क्योंकि ज्ञानी पुरुष का कोई दुश्मन हो नहीं सकता, सभी आत्मायें परमात्मा की सन्तान हमारे प्रिय भाई हैं और हम सभी इस विश्व-नाटक के अनादि-अविनाशी पार्टधारी हैं, जो अपना-अपना पूर्व निश्चित पार्ट बजा रहे हैं।

* विश्व-नाटक के कर्म और फल के अटल विधि-विधान के अनुसार हर आत्मा अपने कर्म के लिए उत्तरदायी है और उसके कर्म का ही फल उसको मिलता है और मिलेगा। यदि किसी के अयुक्त व्यवहार से भी कोई दूसरी आत्मा किसी अकृत्य में प्रवृत्त होती है तो भी दूसरी आत्मा पहले वाले के कर्म का बहाना बनाकर अपने कर्म से छूट नहीं सकती भले पहली वाली को भी अपने कर्म का फल मिलेगा ही। यथा कोई स्त्री नंगी होकर सामने आ जाती है और किसी की दृष्टि-वृत्ति खराब हो जाती है तो दोनों ही दोषी हैं और दोनों को अपने-अपने कर्मानुसार फल अवश्य मिलेगा।

"देह-अभिमानी बनने से सत्यानाश हो जाती है। बाहर में जो प्रजा बनने वाले हैं, उनसे भी गिर

पड़ेंगे। प्रजा में जो साहूकार बनेंगे, उनको भी नौकर चाकर मिलेंगे। यह तो और ही जाकर नौकर-चाकर बनते हैं।... समझ में आता है कि जो बच्चे नहीं बनते हैं सिर्फ मददगार बनते हैं तो भी अच्छे धनवान बन जाते हैं, उनको नौकरी करने की दरकार नहीं रहती।"

सा.बाबा 13.8.02 रिवा.

"यह है कयामत का समय, सभी का पुराना हिसाब-किताब चुक्तू होना है और नया जन्म होना है। चोपड़ा होता है धन का, यहाँ फिर चोपड़ा है कर्मों के खाते का। आधा कल्प का खाता है। मनुष्य जो पाप कर्म करते हैं, वह खाता चलता आया है।"

सा.बाबा 20.8.02 रिवा.

"कई बच्चे समझते हैं सब चल रहा है, कौन देखता है, कौन जानता है।... चल रहे हैं, चलता है नहीं, जमा होता जाता है। दुगुणा-तिगुणा जमा होता जाता है।... हद की बातों के पीछे आप नहीं दौड़ो तो बेहद की वृत्ति, स्वमान की स्थिति आपके पीछे दौड़ेगी।"

अ.बापदादा 4.11.2002

"अगर कमजोरी नहीं तो समस्या का वार हो नहीं सकता।... जैसे मुख्य बात पवित्रता के लिए दृढ़ संकल्प किया है ना कि मर जायेंगे, सहन करेंगे लेकिन इस व्रत को कायम रखेंगे। स्वप्न में वा संकल्प में भी अगर जरा भी हलचल होती है तो पाप समझते हो ना! ऐसे समस्या स्वरूप बनना या समस्या के वश हो जाना -यह भी पाप का खाता है। पाप की परिभाषा है, पहचान है कि जहाँ पाप होगा, वहाँ बाप याद नहीं होगा, साथ नहीं होगा। पाप और बाप, रात और दिन जैसे हैं।"

अ.बापदादा 7.3.84

* भविष्य को बता देना, हवा में उड़ना, पदमपति बन जाना... कोई महानता नहीं है। अन्ततः ये सब स्वयं को और विश्व को देहाभिमान अर्थात् तमोप्रधानता के गर्त ले जाने के कार्य हैं, जिसके परिणाम स्वरूप स्वयं भी और अन्य आत्मायें भी दुखी-अशान्ति को पाते हैं। महानता उसमें है, जो स्वयं को और विश्व को तमोप्रधानता या देहाभिमान के गर्त से निकालकर सतोप्रधान अर्थात् देही-अभिमानी बना दे, उस कर्तव्य में सहयोगी बने, जिससे स्वयं और अन्य आत्मायें भी सुख-शान्ति का अनुभव करें। मनुष्य विश्व का सबसे अधिक चिन्तनशील प्राणी है और वह सबसे अधिक विचार तरंगें इस वातावरण में प्रसारित करता है, वह इस विश्व के वातावरण को सबसे अधिक प्रभावित करता है, जिससे मनुष्यात्मायें और अन्य योनि की आत्मायें भी प्रभावित होती हैं और वे आत्मायें भी वैसे कर्मों में प्रवृत्त होकर अपने कर्मानुसार फल पाते हैं। जड़ प्रकृति भी उससे प्रभावित होती है और उन निमित्त आत्माओं को उनके कर्मानुसार फल भोगने का विधान रचती है। इन्द्रीय सुखों की आकर्षण आत्मा की देहाभिमानी

स्थिति का ही परिणाम है और इन्द्रीय सुखों के प्रति चिन्तन इस विश्व की अन्य योनि की आत्माओं को देहाभिमानी बनाने का मूल कारण है, जिसका परिणाम स्वयं के लिए और अन्य आत्माओं के लिए दुखदायी अवश्य होगा, प्रकृति उसका फल अवश्य देगी क्योंकि संकल्प-कर्म से प्रकृति प्रभावित होती है। सदा अपने को चेक करो कि हमारा संकल्प, कर्म और समय देही-अभिमानी बनाने की दिशा में जा रहा है या देहाभिमानी बनाने की दिशा में जा रहा है।

"जितना बीमारी जास्ती हो, उतनी खुशी होनी चाहिए। कर्मभोग है। हिसाब-किताब चुक्तू करना ही है, इससे डरना नहीं है। समझना चाहिए - हम ज्ञान-योग बल से विकर्म विनाश नहीं कर सकते हैं तो कर्मभोगना से चुक्तू करना पड़े।"

सा. बाबा 12.6.72 रिवा.

"63 जन्मों के हिसाब-किताब यहाँ ही चुक्तू होने हैं। अपने पिछले संस्कार, स्वभाव बाहर इमर्ज हो सदा के लिए समाप्त हो रहे हैं - इस कर्मों की गुह्य गति को न जान घबरा जाते हैं।... याद रखो - सच्चे बाप को अपने जीवन की नैया दे दी है तो सत्य की नाव हिलेगी लेकिन डूब नहीं सकती।"

अ.बापदादा 3.5.77

"यहाँ तो साहूकारों के भी विकर्म बनते हैं तब तो यह बीमारियाँ आदि दुख होते हैं। वहाँ विकार में जाते ही नहीं तो विकर्म कैसे बनेंगे। सारा मदार कर्मों पर है।"

सा.बाबा 23.1.2001 रिवा.

"कोई देवाला मारता है - अरे, यह तो तुम्हारा कर्मभोग है, सो तो तुमको ही सहन करना है, इसमें बाबा क्या करे। बाप आया हुआ है सब आत्माओं को पावन बनाये साथ ले जाने।"

सा.बाबा 21.10.06 रिवा.

कर्मभोग और कर्मयोग का राज़ और कर्मभोग से सहज मुक्त होने की विधि का ज्ञान

कर्मभोग के सूली से कांटा बनने का राज़

कर्मभोग दुख देता है और कर्मयोग सुख देता है। कर्मभोग और कर्मयोग दोनों ही आत्मा के विकर्मों का खाता खत्म करने के आधार है। कर्मभोग अनेच्छा से और कर्मयोग स्वेच्छा से भोगकर विकर्मों का खाता भस्म करने की प्रक्रियायें हैं। कर्मभोग और कर्मयोग की वास्तविकता को जानकर स्वस्थिति में स्थित होकर कर्मभोग को चुक्ता करने से कर्मभोग की महसूसता कम हो जाती है अर्थात् उसकी वेदना शूली से कांटा हो जाती है। स्वस्थिति में स्थित होकर कर्मभोग को चुक्ता करना ही कर्मयोग है। परमात्मा की याद से ही आत्मा अपनी स्व-स्थिति अर्थात् आत्मिक स्वरूप की स्थिति में स्थित होने में समर्थ होती है। कर्मयोग ही कर्मभोग

पर विजय पाने या उससे मुक्त होने का एकमात्र उपाय है। योग द्वारा देह से न्यारे हो जायें तो भी उसकी वेदना की महसूसूता से मुक्त हो जायेंगे अथवा योग में कर्मभोग से मुक्त होने का कोई उपचार भी टच हो सकता है जिसके द्वारा भी हम कर्मभोग से मुक्त हो सकते हैं। कलियुग के अन्त में कर्मभोग का आना अवश्य सम्भावी है। कोई कर्मभोग न आये ये परिकल्पना भी निरर्थक है। कर्मभोग का कारण भी बाबा ने बताया है और उससे मुक्त होने का उपाय कर्मयोग भी बताया है।

कर्मभोग आत्मा को अनुभवी भी बनाता तो अन्तिम परीक्षा में पास होने के लिए पथ प्रदर्शन भी करता है। आत्माओं के परस्पर के हिसाब-किताब चुक्ता करने में भी कर्मभोग का महत्वपूर्ण स्थान है। कर्म भोग आये तब ही आत्मा के हिसाब किताब चुक्तू होने का अवसर आये और वह चुक्ता हो। भक्त कवि रहीम ने गाया है - रहिमन विपदा हू भली जो नारायण रत होये। जैसे कर्मयोग से कर्मभोग की वेदना कम होती है, वैसे ही कर्मभोग के समय कर्मभोग का अधिक चिन्तन करने से कर्मभोग की वेदना और भी बढ़ जाती है। कर्म भोग की वेदना को सहन करते भी मन में किसके प्रति कोई नेगेटिव संकल्प न आये, यही कर्मयोग द्वारा कर्मभोग पर विजय पाने की कसौटी है। नेगेटिव संकल्प कर्मभोग की वेदना को भी बढ़ाते है तथा व्यर्थ चिन्तन और पर-चिन्तन से आगे के लिये कर्मभोग का बीजारोपण भी करते हैं अर्थात् हमारा नया दुखदायी हिसाब-किताब भी आत्माओं के साथ बनाते हैं।

"बाप जो समझाते हैं, उसको उगारना चाहिए। यह भी बाप ने समझाया है - कर्मभोग की बीमारी उथल खायेगी, माया सतायेगी परन्तु मूँझना नहीं चाहिए। बीमारी में तो मनुष्य और ही भगवान को जास्ती याद करते हैं। ... तुम और सब बातें भूल मुझे याद करो।"

सा.बाबा 18.10.04 रिवा.

हमारा अपना कर्मभोग ही हमको दूसरे की वेदना की महसूसता कराता है, जो दूसरों के प्रति हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन करता है और पीड़ितों के प्रति सद्भावना जाग्रत करता है। इसीलिए गायन है - जिसके पैर न गई बिवाई, वह क्या जाने पीर पराई। इस प्रकार हम देखें तो कर्मभोग भी हमको अनुभवी बनाता है।

यदि हमको कोई कड़ुआ फल खाने को मिल रहा है या हम खाने के लिए बाध्य हो रहे हैं तो जरूर हमने ऐसा बीज बोया है, जिसका ये फल निकला है। इस सत्य को ध्यान में रख हमको भूतकाल कर्मो को खुशी से चुक्ता करना है और वर्तमान में कोई ऐसा कर्म रूपी बीज नहीं बोना है, जिसका कड़ुवा फल भविष्य में खाना पड़े।

कर्म भोग आया है और आना अवश्य सम्भावी है क्योंकि आधा कल्प से अनेक

विकर्म आत्मा ने किये ही हैं और आना भी चाहिए क्योंकि ये कर्मभोग भी हमको अनेक अनुभव कराता है और अन्तिम परीक्षा में पास होने के लिए अभीष्ट पुरुषार्थ के लिए प्रेरित करता है। हम यहाँ पूर्ण और सदा काल के लिए स्वस्थ हो जायेंगे या कोई व्यक्ति या उपचार हमको सदा काल के लिए स्वस्थ कर देगा, ये आशा रखना या परिकल्पना करना भी अज्ञानता है अर्थात् भूल होगी, एक मृग-मरीचिका है। परन्तु कर्मभोग से मुक्त होने के लिए यथा सम्भव पुरुषार्थ करना, उपचार करना, सहयोग लेना और देना हमारा कर्तव्य है, जो करना ही है और करना भी चाहिये। ये भी विश्व-नाटक में हमारा एक पार्ट है जो बजाना ही है और बजाना ही होगा परन्तु वह पार्ट भी खुशी से बजायें यही ज्ञान है। आत्मिक-स्वरुप में स्थित होकर रहना और पार्ट बजाना ही सर्व श्रेष्ठ पुरुषार्थ और उपचार है।

राग-द्वेष के वशीभूत किये गये कर्म आत्मा के बन्धन अर्थात् कर्मभोग का कारण हैं और विश्व-नाटक की यथार्थता को जानकर देह और देह की दुनिया से नष्टोमोहा, राग-द्वेष से मुक्त होकर साक्षी होकर पार्ट बजाना, यथोचित उपचार करना कर्मभोग से सहज मुक्त होने का साधन है।

कर्मभोग चुक्ता करने में भी आत्मा के परस्पर हिसाब किताब का महत्वपूर्ण स्थान है। ड्रामानुसार कर्मभोग का आना भी आवश्यक है। यदि कर्मभोग आये ही नहीं तो कर्मयोग की परीक्षा भी कैसे हो ? भले ही हम देखते हैं कि ब्रह्मा बाबा ने कर्मयोग से कमभोग को चुक्ता किया परन्तु अन्त घड़ी तक कर्मभोग ने पीछा किया और बाबा को कर्मयोग के द्वारा कर्मभोग से युद्ध लड़ना पड़ा और अन्त में उन्होंने कर्मयोग से कर्मभोग पर जीत पाई।

"खेल तो सिर्फ 10-15 मिनट का ही था। उस थोड़े से समय में ही अनेक खेल चले। उसमें भिन्न-भिन्न अनुभव हुए। पहला अनुभव तो यह था कि पहले जोर से युद्ध चल रही थी। किसकी ? योगबल और कर्मभोग की। कर्मभोग भी फुल फोर्स में अपनी तरफ खींच रहा था और योगबल भी फुल फोर्स में ही था। ऐसे अनुभव हो रहा था कि जो भी शरीर के हिसाब-किताब रहे हुए थे, वे फट से योग-अग्नि में भस्म हो रहे थे और मैं साक्षी होकर देख रहा हूँ। जैसे अखाड़े में बैठ मल्लयुद्ध देखते हैं। मतलब तो दोनों का फोर्स पूरा ही था। कुछ समय बाद कर्मभोग तो बिल्कुल निर्बल हो गया, बिल्कुल दर्द गुम हो गया। ऐसे ही अनुभव हो रहा था कि आखरीन में योगबल ने कर्मभोग पर जीत पा ली। उस समय तीन बातें साथ-साथ चल रही थी। एक तरफ तो बाबा से बातें कर रहा था ... तीसरी तरफ यह भी अनुभव हो रहा था कि कैसे शरीर से आत्मा निकल रही है।... डेड साइलेन्स का अनुभव हो रहा था। देख रहा था कि कैसे एक-एक अंग से आत्मा अपनी शक्ति छोड़ती जा रही है। मृत्यु क्या चीज है, वह अनुभव हो रहा था।"

अ.बापदादा का सन्देश 7वें दिन

बाबा का कमरा प्रभु प्यार का अनुभव भी कराता है, तो साकार तन द्वारा आत्माओं के प्यार और पालना की स्मृति भी दिलाता हैं और कमरे में बाबा की चारपाई उस युद्धक्षेत्र (Battle field) की भी याद दिलाती है और प्रेरणा देती है कि जहाँ ब्रह्मा बाबा ने कर्मभोग से कर्मयोग का युद्ध लड़ा और अन्तिम विजय पाई अर्थात् कर्मभोग पर कर्मयोग की विजय हुई और ब्रह्मा बाबा कर्मातीत बने।

स्व-स्वरूप की स्थिति परमानन्दमय भी है तो परम कल्याणमय भी है - जब कर्मभोग नहीं है या हल्का है तब इस आत्मिक स्वरूप की स्थिति का किया हुआ दृढ़ अभ्यास ही समय पर काम आता है अर्थात् कर्मयोग द्वारा कर्मभोग से मुक्त करने में सहयोगी होता है। यदि पहले से अभ्यास न किया तो कर्मभोग के समय न ये स्थिति होगी और न इस स्थिति का अभ्यास सम्भव होगा। पहले से किया हुआ अभ्यास ही उस समय काम आता है अर्थात् उस दुख-दर्द की महसूसता से मुक्त होने में सहयोगी होता है। आत्मिक स्वरूप में स्थित आत्मा देह का कठिन कर्मभोग होते भी उसकी महसूसता से मुक्त होगी और देहाभिमानी आत्मा हल्के कर्मभोग की पीड़ा भी अधिक महसूस करेगी।

"वाह-वाह के गीत गाओ। ब्राह्मण जीवन अर्थात् वाह-वाह, हाय-हाय नहीं। शारीरिक व्याधि में भी हाय-हाय नहीं, वाह-वाह! यह भी बोझ उतरता है। ... मेरा ही हिसाब है! प्राप्ति के आगे हिसाब तो कुछ भी नहीं है।" अ.बापदादा 30.11.99

"कोई बीमारी वा दुख आदि है तो तुम सिर्फ याद में रहो। यह हिसाब-किताब अभी ही चुक्तू करना है।... गाया जाता है खुशी जैसी खुराक नहीं।"

सा.बाबा 27.11.04 रि.

"इस समय के इस एक जन्म (पुरुषार्थ का फल) का अनेक जन्मों तक चलता है और वह अनेक जन्मों का (खाता) एक जन्म में खत्म होता है। तो अनेक जन्मों का हिसाब-किताब एक जन्म में खत्म करने के कारण कब-कब वह फोर्स रूप में आता है।... जब साक्षी होकर देखने लग पड़ते तो यह व्याधि बदलकर खेल रूप में हो जाती है।"

अ.बापदादा 23.3.70

आत्मा के लिए दैहिक भोगना, दुख-दर्द इतना दुखदायी नहीं है, जितना विकारों की बीमारी, व्यर्थ संकल्प की बीमारी, मानसिक बीमारी दुखदायी है। देह से न्यारा होकर ही इन सब भोगनाओं से निदान पा सकते हैं। इसमें व्यर्थ संकल्पों की सबसे बड़ी बाधा है, जो न उस स्थिति में स्थित होने देती है और न ही उसके लिए अभीष्ट पुरुषार्थ करने देती है। विकार ही कर्मभोग या दैहिक भोगना के मूल कारण हैं और यथार्थ ज्ञान की धारणा अर्थात् देह से न्यारा

होने का पुरुषार्थ ही अभीष्ट पुरुषार्थ है, जो स्थिति सर्व प्रकार की कर्मभोग की वेदना से मुक्त है।

"मुख्य शक्तियाँ हैं - तन की, मन की, धन की और सम्बन्ध की। चारो ही आवश्यक हैं। ... तन का हिसाब-किताब होते भी स्व-स्थिति के कारण स्वस्थ अनुभव करता है। उनके मुख पर, चेहरे पर बीमारी के कष्ट के चिन्ह नहीं रहते। ... क्योंकि बीमारी का वर्णन भी बीमारी की वृद्धि करने का कारण बन जाता है। वह कभी भी बीमारी के कष्ट का अनुभव नहीं करेगा, न दूसरे को कष्ट सुनाकर कष्ट की लहर फैलायेगा।" अ.बापदादा

"तुम बच्चों को अपनी इस लाइफ से कभी तंग नहीं होना चाहिए क्योंकि यह हीरे जैसा जन्म गाया हुआ है। इसकी सम्भाल भी करनी होती है। ... बीमारी में भी नॉलेज सुन सकते हैं, बाप को याद कर सकते हैं। जितने दिन जियेंगे कमाई होती रहेगी, हिसाब-किताब चुक्तू होता रहेगा। ... कर्मातीत बनना है।" सा.बाबा 10.2.05 रिवा.

बिना कर्म के आत्मा को कोई भी प्रकार की भोगना हो नहीं सकती और कोई भी कर्म बिना फल के हो नहीं सकता अर्थात् आत्मा को कोई भी सुख या दुख उसके कर्म के फल स्वरूप ही मिलता है। कर्मभोग शब्द का प्रयोग बहुधा दुख की भोगना के लिए ही प्रयोग किया जाता है परन्तु यदि उसकी सत्यता पर विचार करें तो सुख या दुख दोनों ही कर्मभोग के रूप हैं। एक है सुख का भोग और दूसरा है दुख का भोग। दुख का कर्मभोग आत्मा का दुख या विकर्मों का खाता कम करता है और सुख का भोग आत्मा का श्रेष्ठ कर्मों के जमा का खाता कम करता है। इसीलिए तो सतयुग के 1250 साल में आत्मा की दो कलायें कम हो जाती हैं।

कोई भी आत्मा अपने कर्म के भोग से बच नहीं सकती, इसलिए अच्छा यही है कि हम स्वेच्छा और शान्ति से उसको भोग कर पूरा करें, यही ज्ञान है। जैसे कर्मभोग आत्मा का विकर्मों का खाता खत्म करता है, सुख का भोग आत्मा का श्रेष्ठ कर्म के जमा का खाता कम करता है। कर्मयोग आत्मा के श्रेष्ठ कर्म का खाता जमा करने का आधार है।

"यह पुराना शरीर है, कुछ न कुछ कर्मभोग चलता रहता है। इसमें बाबा मदद करे, यह उम्मीद नहीं रखनी चाहिए। ... बाप कहेंगे यह तुम्हारा हिसाब-किताब है। अपनी आप ही मेहनत करो, कृपा मांगो नहीं। जितना बाप को याद करेंगे, इसमें ही कल्याण है।"

सा.बाबा 18.1.05 रिवा.

"जब कर्मभोग का जोर होता है। कर्मेन्द्रियां बिल्कुल कर्मभोग के वश अपने तरफ आकर्षण करें, जिसको कहा जाता है बहुत दर्द है। ... ऐसे समय कर्मभोग को कर्मयोग में परिवर्तन करने वाले, साक्षी हो कर्मेन्द्रियों को भोगवाने वाले जो होते हैं, उनको ही अष्ट रत्न कहा जाता

है, जो ऐसे समय विजयी बन दिखाते हैं।" अ.बापदादा 4.12.72

"ऐसे ही समझकर चलो कि अभी-अभी अल्पकाल के लिए नीचे उतरे हैं कार्य करने अर्थ लेकिन सदाकाल की ओरिजिनल स्थिति वही है। फिर कितना भी कार्य करेंगे लेकिन कर्मयोगी के समान कर्म करते हुए भी अपनी निजी स्थिति और स्थान को भूलेंगे नहीं। यह स्मृति ही समर्थी दिलाती है। ... सर्व शक्तियां ही मास्टर सर्वशक्तिवान का जन्मसिद्ध अधिकार हैं।"

अ.बापदादा 22.6.71

"इस अलौकिक जीवन में आत्मा और प्रकृति दोनों की तन्दुरुस्ती आवश्यक है। जब आत्मा स्वस्थ है तो तन का हिसाब-किताब वा तन का रोग शूली से से कांटा बन जाता है। ... उसके लिए वरदान अर्थात् दुआ दवाई का काम कर देती है। ... तन की शक्ति आत्मिक शक्ति के आधार पर सदा अनुभव कर सकते हो।" अ.बापदादा 29.10.87

"बीमारी का वर्णन भी बीमारी की वृद्धि करने का कारण बन जाता है।... कर्मयोगी परिवर्तन की शक्ति से कष्ट को सन्तुष्टता में परिवर्तन कर सन्तुष्ट रह औरों में भी सन्तुष्टता की लहर फैलायेगा।... अर्जी डालने वाले कभी भी सदा राजी नहीं रह सकते हैं।"

अ.बापदादा 29.10.87

"निराकार और साकारी दोनों स्वरुप की स्मृति से स्वत: ही समर्थी-स्वरुप बन जायेंगे अर्थात् हेल्थ, वेल्थ और हैपीनेस का अनुभव हर समय होगा। चाहे शरीर का कर्मभोग सूली से कितना भी बड़े रुप में हो लेकिन सदा अपने को साक्षी समझने से कर्मभोग के वश नहीं होंगे। हर कर्मभोग सूली से कांटे समान अनुभव होगा।" अ.बापदादा 27.1.76

- रोग-शोक, जरा-मृत्यु देह के धर्म हैं और अपरिहार्य हैं। कोई भी व्यक्ति या संगठन एक सीमा तक उनसे बचाने का सहयोग कर सकता है, जो हमारे कर्मों और ड्रामा के पार्ट पर आधारित है परन्तु कोई भी उनसे बचा नहीं सकता। हर व्यक्ति को अपने कर्मों का फल सुख या दुख के रूप में भोगना ही पड़ेगा।

जरा-मृत्यु अपरिहार्य है, उसको टाला नहीं जा सकता है परन्तु रोग-शोक कर्मों का परिणाम है, उसको योग या शुभ कर्मों द्वारा टाला जा सकता है अर्थात् योग द्वारा उसकी वेदना को कम किया जा सकता है। योग मानव जीवन का सबसे श्रेष्ठ और शुभ कर्म है।

"समझाया गया है जो नम्बरवन में पुण्यात्मा बनता है वही फिर नम्बरवन पापात्मा भी होता होगा। उनको बहुत मेहनत करनी पड़ेगी क्योंकि शिक्षक बनते हैं, सिखलाने के लिए। तो जरूर मेहनत करनी है। बीमारी आदि होती है तो अपने ही कर्म का भोग कहा जाता है। अनेक जन्मों के विकर्म किये हुए हैं, इस कारण भोगना होती है। इसलिए कभी भी इससे डरना नहीं

है। खुशी से पास करना है क्योंकि अपना ही किया हुआ हिसाब-किताब है। प्रायश्चित होता ही है बाप की याद से।"

सा. बाबा 23.6.72 रिवा

"एक सेकेण्ड में चोला धारण करें और एक सेकेण्ड में न्यारे हो जायें, जब यह प्रैक्टिस पक्की हो जायेगी, फिर यह कर्मभोग समाप्त हो जायेगा। जैसे इन्जेक्शन लगाकर दर्द को खत्म कर देते हैं। ... उस अवस्था के बीच कोई भी कर्मभोग की भासना नहीं रहेगी।"

अ.बापदादा 22.11.72

"दादी ने ब्रह्मा बाप से भी ज्यादा समय सेवा का पार्ट बजाया है, तो विशेष हीरो एक्टर है ना।... देखो, बीमारी कितनी भी हो लेकिन दर्द की फीलिंग नहीं हो तो वह बीमारी भी आराम देती है। हीरो एक्टर है ना, शान्ति की देवी है।"

अ.बापदादा 31.10.06

## १४. कर्म और कर्म-सम्बन्ध एवं कर्म-बन्धन

ये विश्व एक कर्म-क्षेत्र है और कर्म इस विश्व-नाटक का महत्वपूर्ण घटक है। हर कर्म का फल और हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है, जिसके आधार पर पर इस विश्व-नाटक सम्बन्ध बनते और बिगड़ते हैं। इस क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के आधार पर ही सम्बन्धों में मधुरता या कटुता आती है और इस मधुरता और कटुता के आधार कर्म-सम्बन्ध और कर्म-बन्धन बनते और टूटते हैं।

सतयुग में जब आत्मायें इस धरा पर आती हैं या सारे कल्प में समय-समय पर जो आत्मायें परमधाम से इस धरा पर आती हैं, उस समय उनके कर्म श्रेष्ठ होते हैं और फलस्वरूप सर्व आत्माओं के साथ उसके सम्बन्ध मधुर होते हैं, जिनको कर्म-सम्बन्ध कहा जाता है परन्तु यथार्थ ज्ञान न होने के कारण आत्मा में पहले देहाभान की प्रधानता होती है, जो समयान्तर में देहाभिमान में परिणित हो जाता है, जिसके कारण धीरे-धीरे आत्माओं के परस्पर सम्बन्धों में मधुरता की प्रतिशत कम होती जाती है और इस क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त के अनुसार अन्त में वह मधुरता कटुता में परिणित हो जाती है क्योंकि देहाभिमान के कारण आत्मा में विकारों की प्रवेशता हो जाती है। इन विकारों के कारण सम्बन्ध की कटुता के कारण वर्तमान जगत में मारा-काटी, युद्ध, आदि की समस्यायें पैदा हो जाती हैं। इस मधुरता और कटुता में भी आत्मा के कर्म ही निमित्त बनते हैं, इसलिए उनको कर्म-सम्बन्ध और कर्म-बन्धन कहा जाता है।

बन्धन दुख का कारण है अर्थात् प्रतीक है और सम्बन्ध सुख का आधार अर्थात्

प्रतीक है। कर्म ही आत्मा के बन्धन अर्थात् दुख का कारण बनता है और कर्म ही आत्मा के सुखदायी सम्बन्ध का आधार है। कर्मों के आधार पर ही दुखदायी या सुखदायी सम्बन्ध बनते हैं। कल्प के हिसाब से सतयुग-त्रेता कर्म-सम्बन्ध की दुनिया है और द्वापर-कलियुग कर्म-बन्धन की दुनिया है। सतयुग-त्रेता में आत्मा स्वतन्त्र होकर शरीर के द्वारा कर्म करती है, इसलिए बन्धन की बात नहीं लेकिन द्वापर-कलियुग में आत्मा देहाभिमान के वश होकर अर्थात् बन्धन में कर्म करती है इसलिए वे कर्म बन्धन अर्थात् दुख का कारण बन जाते हैं।

सतयुग-त्रेता में कर्म-सम्बन्ध सुखदायी होते हैं क्योंकि इन कर्म-सम्बन्धों का बीज संगमयुग पर परमात्मा की श्रीमत के आधार पर बोया है। द्वापर से देहाभिमान के कारण विकारों के वशीभूत कर्म आत्मा के बन्धन का कारण बनते हैं अर्थात् उस समय जो भी सम्बन्ध होते हैं, वे दुखदायी ही होते हैं, इसलिए उनको कर्म-बन्धन कहा जाता है। अभी फिर परमात्मा योग के द्वारा कर्म-बन्धन से मुक्त होने और देही-अभिमानी होकर सुखदायी कर्म-सम्बन्धों का बीज बोने की श्रीमत दे रहा है, रास्ता दिखा रहा है। जो करता है वह पाता है।

"बांधेली हैं। वास्तव में उनमें अगर ज्ञान की पराकाष्ठा हो जाये तो कोई भी उनको पकड़ न सके। परन्तु मोह की रग बहुत है। ... शरीर सहित सबको भूल जाना है, अपने को आत्मा समझ बाबा को याद करना है।" सा.बाबा 15.2.05 रिवा.

* परमपिता परमात्मा ही हमारा सच्चा सम्बन्धी है, जो सदा सुखदायी है। वही सदा सुख का रास्ता बताता। अन्य सभी सम्बन्धों की अन्तिम परिणित तो बन्धन ही है, इसलिए सारे कल्प के सम्बन्ध अन्त में कर्म-बन्धन के कारण ही बनते हैं। संगमयुग पर परमात्मा से बुद्धियोग ही कर्म-बन्धन से मुक्त करके कर्म सम्बन्ध का आधार बनता है। परन्तु इसमें भी आत्मा के कर्म ही आधार बनते हैं।

* किन्ही व्यक्तियों के मध्य निर्णय में निमित्त आत्मा अंशमात्र भी स्वार्थपरता के वशीभूत निर्णय करता है, जिससे वे दोनो पक्ष प्रभावित होते हैं, तो उनके साथ भी उसका कर्म-बन्धन का हिसाब किताब बनता है और उसका फल उसे अवश्य ही भोगना पड़ता है अर्थात् उनके साथ भी हिसाब-किताब चुकाना पड़ता है - ये कर्म और फल का अटल सिद्धान्त है।

* कोई भी आत्मा किसी के सुख-दुख का कारण नहीं बन सकती। हर आत्मा का अपना कर्म ही उसके सुख-दुख का मूल कारण है - इस सत्य को समझकर किसी भी आत्मा के प्रति राग-द्वेष के वशीभूत चिन्तन न कर अपने को देखने और प्रभु-चिन्तन करने वाला ही अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाकर वर्तमान में मधुर सम्बन्धों के आधार पर सच्चे सुख का अनुभव करता है और अपने उज्ज्वल भविष्य के लिए भी सुखद सम्बन्धों का निर्माण करता है अर्थात् मधुर

सम्बन्धों का बीज बोता है।

* हमारी दृष्टि-वृत्ति से अन्य आत्माओं को स्वरूप में स्थित होकर अतीन्द्रिय सुख की, परमपिता परमात्मा की याद आती है तो इससे हमारे मधुर सम्बन्धों का खाता जमा होता है। यदि हमारी दृष्टि-वृत्ति से कोई आत्मा देहाभिमान में आती है या हमारी दृष्टि-वृत्ति किसके प्रति पतित होती है तो ये हमारे जीवन का पाप-कर्म है और ये हमारे मधुर सम्बन्धों का खाता कम करके कटु सम्बन्धों का निर्माण करता है। इस सत्य को अनुभव करने वाला अपनी दृष्टि-वृत्ति पर ध्यान रखकर उसको शुद्ध-पवित्र बनाकर मधुर सम्बन्धों का निर्माण कर सकता है।

परमात्मा के नाम पर भी हम जो देते हैं परन्तु परमात्मा तो दाता है और अभोक्ता है, वह तो किसी के दिये हुए धन-सम्पत्ति का उपभोग नहीं करता है, उसका उपभोग तो अन्य आत्मायें ही करती हैं तो उसका उपयोग या उपभोग करने वालों के साथ भी हमारे कर्म-सम्बन्धों का निर्माण होता है। यदि कोई उसका दुरुपयोग करता है तो वह उसके कर्म-बन्धन का भी कारण बन जाता है क्योंकि अभी सारे कल्प के लिए हिसाब-किताब और सम्बन्ध बनते हैं।

"जो करेगा सो पायेगा। ... ऐसे कोई मत समझे कि हम शिवबाबा को 5 रुपया देते हैं। यह तो शिवबाबा की बड़ी इन्सल्ट करते हैं। ... तुम शिवबाबा के खजाने में 5 रुपया देते हो, बाबा तुमको 5 करोड़ देते हैं। कौड़ी से हीरे जैसा बना देते हैं। ऐसा कब संशय नहीं लाना कि हमने शिवबाबा को दिया।" सा.बाबा 25.10.01 रिवा.

* इस विश्व नाटक में हर आत्मा स्वयं ही कर्ता और उस कर्म के फल की भोक्ता है। तुम किसी आत्मा के कर्म या कर्म-फल के लिए अपना समय संकल्प व्यर्थ न गँवाओ। तुम अपना भाग्य बनाने के लिए अभीष्ठ पुरुषार्थ करो। किन्ही आत्माओं के लिए चिन्तन करना, समय-संकल्प लगाना भी कर्म-सम्बन्ध या कर्म-बन्धन का कारण बन जाता है।

* हर आत्मा को प्राप्ति-अप्राप्ति अपने कर्मानुसार होती है, तुम अपने कर्म और प्राप्ति को देखो और उसका सदुपयोग करो। यह विश्व-नाटक विविधतापूर्ण है और विविधता ही इसकी शोभा है। हर आत्मा को अपने कर्म और उसके भाव और भावना के आधार पर फल अवश्य मिलता है। दूसरे की प्राप्तियों को देखकर ईर्ष्या-द्वेष में आकर आत्मा अपने कर्म-बन्धन बना लेती है।

* किसी व्यक्ति विशेष को देखकर, मिलकर, आगे बढ़ता देखकर या किसके दुखी होने में दुखी होना या खुशी होना भी अपने भावी बन्धनों का कारण बनता है, भविष्य कर्म-बन्धनों का निर्माण करता है। आध्यात्मिक मार्ग के पथिक को सुख-दुख दोनों से न्यारा साक्षी होकर रहना

चाहिए तब ही एक परमात्मा की याद रहेगी और मधुर सम्बन्धों का निर्माण होगा, जिससे आत्मा को मुक्ति-जीवनमुक्ति का सहज अनुभव होगा। जीवनमुक्ति के अनुभव का आधार कर्म-सम्बन्ध ही हैं।

* संगमयुग अर्थात् स्व-स्थिति में स्थित। स्व-स्थिति में स्थित आत्मा के साथ कोई आत्मा दुर्व्यवहार कर नहीं सकती और यदि करती है तो ये भी उसका पुराना कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब है, इसलिए उसे अपना पुराना हिसाब-किताब समझकर धैर्य से पूरा करना ही आत्मा के लिए हितकर है। उत्तेजना में आकर अपना व्यवहार या कर्म खराब नहीं करना चाहिए यदि स्व-स्थिति को छोड़कर उत्तेजना में आकर हम भी कोई दुर्व्यवहार करते हैं तो वह भविष्य के लिए कर्म-बन्धन हिसाब-किताब का खाता बन जाता है, जो आत्मा को दुखी करता है। ये संगमयुग है ही पुराने कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब चुक्ता करने और नये युग के लिए नया सुखद कर्म-सम्बन्धों का हिसाब-किताब बनाने का युग।

* कर्म इस विश्व-नाटक का मुख्य घटक है और आत्मा के सुख-दुख का मूल कारण है। कर्म के मूल सिद्धान्तों और अटल सत्यों को जानने और दृढ़ निश्चय वाला ही श्रेष्ठ पुरुषार्थ करके मधुर सम्बन्धों का करने में समर्थ होगा और उसके फल स्वरूप सुखमय जीवन को प्राप्त कर सकेगा। जो मोहवश अनुचित कर्म करके किन्ही व्यक्तियों के लिए साधन-सम्पत्ति का संग्रह करता है, वह जिनकी सम्पत्ति का अपहरण करता है, उनके साथ तो कर्म-बन्धन का खाता बनाता ही है परन्तु जिनके लिए संग्रह करता है, उनके साथ भी दुख का कर्म-बन्धन ही बनता है क्योंकि जैसा अन्न वैसा मन के विधि-विधान और कर्म के सिद्धान्त अनुसार वे आत्मायें भी दुखी होती हैं और उससे करने वाले के साथ दुख का सम्बन्ध कर्म-बन्धन ही बनता है।

"तुम बच्चों में कुदृष्टि, क्रोध आदि कुछ नहीं होना चाहिए। अपना ही नुकसान करते हैं। कुदृष्टि होती है तो उसका भी वायब्रेशन आता है। दूसरे को भी कशिश होती है। ... अब बाप बच्चों को कर्म-अकर्म-विकर्म की गति भी समझाते हैं। ... इसलिए बाबा बार-बार समझाते हैं ताकि कोई ऐसे न कहे कि हमको कोई ने समझाया नहीं।"

सा.बाबा 2.2.02 रिवा.

Q. यदि हमारे सामने कोई कत्ल होता या कोई अन्य अकृत्य होता है तो हम उसको करने वाले को मार सकते हैं?

नहीं, क्योंकि हमको उनके पिछले कर्म-सम्बन्धों के हिसाब-किताब का पता नहीं है। यदि हमारी दोनों के प्रति शुभ भावना है तो हम अपने स्वरूप में स्थित हो दृष्टि देंगे तो वह करने वाला स्वत: ही उस दुष्कृत्य से हट जायेगा। सत्यता तो ये है जो स्वरूप में स्थित होगा, परमपिता

परमात्मा की याद में होगा, उसके सामने ऐसा दुष्कृत्य होगा ही नहीं। यही साक्षी-दृष्टा की पहचान है। परमपिता परमात्मा समर्थ होते हुए भी उनको नहीं रोकता क्योंकि वह इस विश्व-नाटक का और आत्माओं के कर्मों के हिसाब-किताब का पूर्ण ज्ञाता है। इसलिए हमको भी उनके विषय में कोई निर्णय करने का कोई अधिकार नहीं है, सबके साथ शुभ भावना और शुभ कामना रखना ही हमारा कर्तव्य है।

* किसी अशुभ घटना को देखकर यथार्थ ज्ञान को समझकर राग-द्वेष, लगाव-घृणा दोनों से परे होकर साक्षी होकर मरने और मारने वाले दोनों के प्रति शुभ भावना शुभ कामना रखनी है। मरने वालों की आत्मा के शान्ति की कामना और मारने वालों को परमात्मा सद्बुद्धि दे, जिससे वे ऐसे पाप कर्म से विमुख हो जायें। ऐसी भावना रखने वालों पर न कोई पाप चढ़ता है और न ही उनका कोई दुश्मन हो सकता।

* आत्मा कोई भी कार्य है, जिससे आत्माओं को जो सुख-दुख मिलता है, उसका हिसाब-किताब उन आत्माओं से अवश्य बनता है और उसका फल आत्माओं के द्वारा सुख-दुख के रूप में अवश्य मिलता है। जिस कार्य से प्रकृति प्रभावित होती है, उसका फल प्रकृति द्वारा मिलता है। कोई अप्राकृतिक कार्य या अप्राकृतिक रूप में किया गया कार्य देह को प्रभावित करता है, उसका फल आत्मा को देह से दुख रूप में मिलता है। यथा अप्राकृतिक मैथुन या अयथार्थ मैथुन, अयथार्थ और असमय में विषय-भोग आदि का फल शारीरिक ब्याधि के रूप में आत्मा को अवश्य भोगना पड़ता है।

"तुम जानते हो कि बेहद के बाप ने पढ़ाया, इस पढ़ाई से बरोबर तुम सतयुग के राजा बनने वाले हो। वह जो अल्पकाल के लिए विकारी राजायें बनते हैं, वह कोई नॉलेज से नहीं बनते हैं। जो दान-पुण्य करते हैं, वे जाकर साहूकार के घर में जन्म लेते हैं। ... तुम अपने को जानते हो, दुनिया तो नहीं जानती कि यह शक्तियाँ गुप्त रीति योगबल से विश्व पर अपनी दैवी राजाई स्थापन कर रही हैं।... जो गोल्डन एज बनाते हैं, वे ही आकर फिर राज्य करेंगे।"

सा.बाबा 27.2.02 रिवा.

* दूसरे के संकल्प भी हमारी स्थिति को प्रभावित करते हैं, जिसके कारण भी अन्य आत्माओं के साथ हमारे हिसाब-किताब को बनते हैं, जिसके कारण वे हमारे सुख-दुख के निमित्त बनते हैं, इसलिए सच्चे आध्यात्मिक पुरुषार्थी को कोई ऐसा कर्म नहीं करना चाहिए, जिससे किसी आत्मा को दुख हो और उसके संकल्प हमारे प्रति खराब हों।

* दूसरे की प्राप्तियों को देख लालायित होना या ईर्ष्या करना या दूसरे से किसी प्राप्ति की इच्छा रखना भिखारीपन है या आत्मा के खालीपन की निशानी है। दाता के बच्चे हो, दाता

परमात्मा ने तुमको क्या नहीं दिया है! अपनी प्राप्तियों को देख, उनका सुख लेना और सुख देना ही इस संगमयुगी जीवन की सफलता है। साथ ही ज्ञानी आत्मा को इस सत्य को भी अवश्य याद रखना है कि किसी भी आत्मा से जाने-अन्जाने भी हम कुछ लेंगे तो उसके साथ हमारा हिसाब-किताब बनेगा और वह भविष्य में चुकाना अवश्य पड़ेगा, इसलिए इस सत्य को जानकर सदा ही अपने ऊपर किसी का अनावश्यक ऋण चढ़ाने से बचकर रहना चाहिए। ये अनावश्यक लेनदेन करना भी जानबूझ कर अपने ऊपर बोझा लादना है।

* कर्मभोग, रोग-शोक आना आत्मा का अपने ही कर्मों का फल है और उसके निदान के लिए साधन-सुविधा प्राप्त होना और सफलता-असफलता पूर्वक निदान होना भी अपने कर्मों फलस्वरूप ही होता है, इसलिए ज्ञानी आत्मा को कब किससे ईर्ष्या-घृणा, क्रोध न करके अपनी प्राप्तियों से सन्तुष्ट रहना और अपने सुखमय भविष्य के लिए सदैव श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त रहना ही कल्याणकारी है। अपने दुख और अप्राप्ति के लिए किसको दोष देना अज्ञानता है और अपने कर्म-बन्धन का खाता बढ़ाना है।

* दैहिक सम्बन्धों या स्वार्थ के आधार पर अपने-पराये का भेद उत्पन्न कर ज्ञानी पुरुष को कब कोई अकृत्य करके अपना कर्म-बन्धन का खाता नहीं बढ़ाना चाहिए। इस जगत में न कोई अपना है और न ही पराया है, सभी पार्टधारी हैं और अपना-अपना अनादि-अविनाशी पार्ट बजा रहे हैं। सबके साथ शुभ भावना, शुभ कामना रखकर अच्छे सुखमय सम्बन्धों का बीज बोना चाहिए। अपने-पराये का भेद अज्ञानता जनित है, जिससे कर्म-बन्धन का खाता बनता है। सभी आत्मायें इस विश्व-नाटक में पार्टधारी हैं, जो आज अपना है, वही कल पराया होगा और जो आज पराया है, वही कल अपना होगा।

यज्ञ में कोई भी आत्मा जो पाई-पैसा देता है, उसका जो आत्मा उपयोग या उपभोग या दुरुपयोग करता है, उस आत्मा का उस देने वाली आत्मा के साथ हिसाब-किताब जुट जाता है और वह अनेक जन्मों तक चलता है और उपभोग करने वाली आत्मा को ब्याज सहित दाता आत्मा को चुकाना पड़ता है। जो भी इस यज्ञ में कोई भी नैतिक-अनैतिक कर्म से मन्सा-वाचा-कर्मणा जैसा बीज बो रहा है, वह उसके शुभाशुभ परिणाम को भोगने के लिए बाध्य है। इस सत्य को जानने वाली आत्मा किसी भी परिस्थिति में, किसी भी आत्मा को देखकर अपने सत्य पथ से बिचलित नहीं होगी, किसी विकर्म में प्रवृत्त नहीं होगी, जिससे उसका कर्म-बन्धन का खाता बन जाये।

* इस विश्व-नाटक में या सृष्टि रूपी रंगमंच पर आत्माओं का आत्माओं के साथ स्नेह और शुभ भावनायें जीवन के प्रति अभिरुचि (Charm) पैदा करती है। सदा सर्व की शुभ भावनायें

हमारे प्रति रहें, इसके लिए हमारी सदा सर्व के प्रति शुभ भावना, शुभ कामना और सदा शुभ कर्मों में प्रवृत्ति रहे, इसका पुरुषार्थ अवश्य करना है। कब किसी की बाह्य या आन्तरिक कमी-कमजोरी को देख कर उपहास, घृणा, निन्दा नहीं करना चाहिए। ये भी एक विकर्म है, अज्ञानता है, जो आत्मा का कर्म-बन्धन का खाता बनाने का कारण बन जाता है। परिवर्तनशील जगत में कभी भी वह कमी-कमजोरी हमारे जीवन में भी आ सकती है, तब वे आत्मायें हमारे साथ वैसा ही व्यवहार करेंगी, जैसा हम उनके साथ कर रहे हैं। इससे भी हमारा कर्मबन्धन बनता है।

"दूसरों पर भी मेहर करनी है रास्ता बताने की, तमोप्रधान से सतोप्रधान बनाने की। बाबा ने तुम बच्चों को पुण्य और पाप की गहन गति भी समझाई है। पुण्य क्या है और पाप क्या है। सबसे बड़ा पुण्य है - बाप को याद करना और दूसरों को भी बाप की याद दिलाना। सबसे बड़ा पाप है - संगदोष में आकर अपना और दूसरों का खाना खराब करना। सेन्टर खोलना, तन-मन-धन दूसरों की सेवा में लगाना - यह है पुण्य।" सा.बाबा 18.1.03

"खजाने को विधि से कार्य में लगाना अर्थात् वृद्धि को प्राप्त करना। चाहे स्वयं को सम्पन्न बनाने के कार्य में लगायें, चाहे स्वयं की सम्पन्नता द्वारा अन्य आत्माओं की सेवा के कार्य में लगायें। विनाशी धन खर्चने से खुटता है परन्तु अविनाशी धन खर्चने से पद्मगुणा बढ़ता है, इसलिए कहावत है खर्चो और खाओ।" अ.बापदादा 17.4.84

"जो सच्चे बच्चे होते हैं, उनकी अवस्था पक्की रहती है, जरा भी विकार की तरफ ख्याल नहीं जाता है। ऐसे बच्चों पर अगर कोई जबरदस्ती जुलुम करते हैं तो उसका पाप उन पर नहीं चढ़ता है। ... जितना जास्ती मारेंगे, तुम और ही नष्टोमोहा होती जायेंगी। मार भी अच्छा पद बना लेती है। ... ये सितम भी कर्मभोग हैं। पुरुष, स्त्री को मारता है, ऐसे ही कोई मार सकता है क्या ? तुमने भी उनको मारा होगा, वह हिसाब-किताब चुक्तू हो रहा है। यह सब कर्मों का हिसाब-किताब है। ... अब तुम श्रीमत पर श्रेष्ठ कर्म कर रहे हो। सबसे श्रेष्ठ कर्म है सबको बाप का परिचय देना।" सा.बाबा 30.6.02 रिवा.

"हर कर्म त्रिकालदर्शी बन करने से कभी भी कोई कर्म विकर्म नहीं हो सकता। सदा सुकर्म होगा। ... ऐसे ही साक्षी-दृष्टा बन कर्म करने से कोई भी कर्म के बन्धन में कर्म-बन्धनी आत्मा नहीं बनेंगे।" अ.बापदादा 30.1.79

"माया पर जीत पाकर कर्मातीत अवस्था में जाना है। पहले-पहले तुम आये हो कर्म सम्बन्ध में। उसमें आते-आते फिर आधा कल्प बाद तुम कर्म बन्धन में आ गये। पहले-पहले तुम पवित्र थे। न सुख का कर्मबन्धन, न दुख का। ... मुझे याद करो तो तुम्हारे पाप मिट जायेंगे और तुम

मेरे पास घर में आ जायेंगे।" सा.बाबा 11.1.05 रिवा.

"तीसरे नेत्र में कमजोरी आने की भी वही दो बातें हैं ... एक लगाव और दूसरा पुराना स्वभाव। ... अगर अपनी किसी विशेषता में भी लगाव है तो वह भी बन्धन-युक्त कर देगा, बन्धन-मुक्त नहीं करेगा क्योंकि लगाव अशरीरी बनने नहीं देगा।"

अ.बापदादा 15.7.73

"अनेक संकल्पों की समाप्ति होकर एक शुद्ध संकल्प रह जाये, इस स्थिति का अनुभव कर रही हो ? इस स्थिति को ही शक्तिशाली, सर्व कर्म-बन्धनों से न्यारी और अति प्यारी स्थिति कहा जाता है।" अ.बापदादा 22.6.71

"जब बन्धन-मुक्त हो जायेंगे तो जैसे टेलीफोन में एक दो का आवाज़ कैच कर सकते हैं, वैसे कोई के संकल्प में क्या है वह भी कैच करेंगे।"

अ.बापदादा 13.3.71

"दो शब्द हैं एक साक्षी और साथी। एक तो साथी सदैव साथ रखो। दूसरा साक्षी बनकर हर कर्म करो। तो साथी और साक्षी - ये दो शब्द प्रैक्टिस में लायो तो यह बन्धनमुक्त की अवस्था बहुत जल्दी बन सकती है।" अ.बापदादा 13.3.71

"जन्म-जन्मान्तर का पापों का बोझा सिर पर रहा हुआ है, यह कैसे पता पड़े। ... देखना है - बाप से हमारी दिल लगती है या देहधारियों से। कर्म सम्बन्धियों आदि की याद आती है तो समझना चाहिए हमारे विकर्म बहुत हैं।... बाप को याद कर अपने सिर से पापों का बोझा उतारना है।" सा.बाबा 30.4.05 रिवा.

"आज के दिन ब्रह्मा बच्चे ने सारे कल्प के कर्मों के हिसाब-किताब से मुक्त होने का सबूत दिया। ... सेवा में हद की रॉयल इच्छायें भी हिसाब-किताब के बन्धन में बांधती हैं। लेकिन सच्चे सेवाधारी इस हिसाब-किताब से भी मुक्त हैं। इसी को ही कर्मातीत स्थिति कहा जाता है।" अ.बापदादा 18.1.87

"बापदादा वा ड्रामा दिखाता रहता है कि दिन-प्रतिदिन सेवा बढ़नी ही है ... लेकिन बैलेन्स से सेवा का बन्धन, बन्धन नहीं सम्बन्ध लगेगा। ... सेवा का स्वीट सम्बन्ध है।"

अ.बापदादा 10.3.96

भक्त लोग भी अपने मधुर सम्बन्धों के विषय कितना जाग्रत रहते हैं, वह एक भक्त की इस पंक्ति से पता चल जाता है -

रहिमन डोरा प्रेम का मत तोड़ो चटकाये, तोड़े से जुड़ता नहीं, जुड़े गाँठ पड़ि जाये।

# १५. कर्म और प्राकृतिक आपदायें

विश्व में अनेक प्रकार की प्राकृतिक आपदायें आती हैं, जिनसे धन-सम्पत्ति की हानि के साथ-साथ बहुत बड़े रूप में जन-हानि और अन्य प्राणियों की हानि भी होती है तो उनको दुख भी होता है तो प्रश्न उठता है कि ये प्राकृतिक आपदायें क्यों और कैसे आती है और उनके लिए उत्तरदायी कौन है ? विश्व-नाटक की वास्तविकता पर विचार करते हैं तो किसी आत्मा को कोई सुख-दुख प्रकृति से या किसी अन्य आत्मा से बिना कारण अर्थात् उसके कर्म के बिना नहीं मिल सकता है। विश्व-नाटक के कर्म-सिद्धान्त के अनुसार इन प्राकृतिक आपदाओं के लिए भी मनुष्य का कर्म ही कहाँ न कहाँ उत्तरदायी है अर्थात् प्राकृतिक आपदायें भी मनुष्य के कर्मों का ही परिणाम हैं क्योंकि मनुष्य के संकल्प और कर्म जड़ तत्वों को भी प्रभावित करते हैं, जिसके अनुसार ही तत्व भी आत्माओं के लिए सुखदायी-दुखदायी बनते हैं। प्राकृतिक आपदाओं के समय भी ये तत्व किसके लिए हित का आधार बन जाते हैं और किसके लिए दुख का कारण बन जाते हैं। मनुष्य के अनेक कर्म सामूहिक रूप में होते हैं, इसलिए उनका फल भी सामूहिक रूप में ही आत्माओं को भोगना पड़ेगा। विचारणीय है कि अनेक मिल-फेक्टरियों से जो कार्बन निकलती है, अनेक प्रकार की जहरीली गैसे निकलती हैं, जो वातावरण को दूषित करती हैं, जिनके कारण इस सौर-मण्डल प्रभावित होता है, सामूहिक रूप से अनेक प्राणी दुख पाते हैं परन्तु उनमें जो उत्पादन होता है, उससे भी अनेक आत्मायें सामूहिक रूप में लाभान्वित होती हैं। भूगर्भ-सम्पदा का दोहन करते हैं, अनेक बड़े-बड़े बाँध बनाते हैं, जिससे अनेक आत्मायें लाभान्वित होती हैं परन्तु उनसे पृथ्वी का जो सन्तुलन प्रभावित होता है, उससे ही अनेक प्रकार की प्राकृतिक आपदायें आती हैं और उन अनेक आत्माओं के दुख का कारण बनती हैं, जो उससे लाभान्वित होते हैं। इस प्रकार के कार्यों का सामूहिक लाभ भी होता है तो आपदा के समय सामूहिक भोगना भी होती है।

"दुख की घटनाओं के पहाड़ फटने ही हैं। ऐसे समय पर सेफ्टी का साधन है ही "बाप की छत्रछाया"। ... यह मिलन मेला कितनी भी दर्दनाक सीन हो लेकिन मेला है तो वह खेल लगेगा, भयभीत नहीं होंगे।" अ.बापदादा 10.12.84

"धर्मराज पुरी में भी सजाओं का पार्ट अन्त में नूँधा हुआ है लेकिन वे सजायें सिर्फ आत्मा अपने आप भोगती है और हिसाब-किताब चुक्तू करती है। ... धर्मराजपुरी में सम्बन्ध और सम्पर्क द्वारा वा प्राकृतिक आपदाओं द्वारा हिसाब-किताब चुक्तू नहीं होगा। वह यहाँ साकार सृष्टि में होगा।" अ.बापदादा 10.12.84

"विशेष भारत में सिविल वार और प्राकृतिक आपदायें ये ही हर कल्प परिवर्तन के निमित्त बनते हैं। विदेश की रूप रेखा अलग प्रकार की है लेकिन भारत में यही दोनों बातें विशेष निमित्त बनती हैं। ... धर्मराजपुरी में सम्बन्ध और सम्पर्क द्वारा हिसाब वा प्राकृतिक आपदाओं द्वारा हिसाब-किताब चुक्तू नहीं होगा।"

अ.बापदादा 10.12.84

## कर्म और दुर्घटनायें

मनुष्य के जीवन में अनेक प्रकार की दुर्घटनायें होती हैं, जिनके द्वारा आत्मा को दुख-अशान्ति की अनुभूति होती है और मन में यह प्रश्न उठना स्वभाविक है कि इन सबका कारण क्या है, जो आत्माओं को इतना दुख-अशान्ति अनुभव करनी होती है। प्रत्यक्ष में तो इसका कोई कारण देखने में नहीं आता है परन्तु कर्म के अनादि-अविनाशी सिद्धान्त के अनुसार बिना कारण के कोई घटना नहीं होती है। मनुष्य के अनेक जन्मों में अनेक आत्माओं के साथ अनेक प्रकार के अच्छे-बुरे, सुखदायी-दुखदायी सम्बन्ध होते आते हैं, जिन सबका हिसाब-किताब भी दुर्घटनाओं के रूप में अब इस कयामत के समय पूरा होता है। कर्म के अटल सिद्धान्त को जानने वाले के मन में ऐसी किसी दुर्घटना के समय कोई प्रश्न उठ नहीं सकता है। बाबा ने यह भी बताया है कि मनुष्य के साथ स्थान के साथ भी आत्माओं के कर्मों का सम्बन्ध होता है, उस सम्बन्ध के अनुसार भी अनेक घटनायें घटित होती हैं। स्थान के साथ भी किसी आत्मा का सम्बन्ध आत्मा के किसी न किसी कर्म के अनुसार ही होता होगा, भले ही हम उसको प्रत्यक्ष में नहीं जानते हैं। इस प्रकार हम विचार करें तो इस कल्पान्त में कयामत के समय आत्माओं के सब हिसाब-किताब पूरे होते हैं और पूरे होने ही हैं।

## १६. कर्म और कर्मातीत एवं विकर्माजीत स्थिति अर्थात् निर्संकल्प एवं निर्विकल्प स्थिति

इस कर्मक्षेत्र पर कर्म आत्मा का स्वभाविक धर्म है और कोई भी आत्मा किसी न किसी प्रकार के कर्म के बिना रह नहीं सकती है। आत्मा की कर्मातीत अवस्था क्या है, कब और कहाँ होती है, यह एक विचारणीय विषय है। इस सृष्टि पर पार्ट बजाते भी कर्मातीत अवस्था का अनुभव क्या होगा, वह सब राज़ भी अभी बाबा ने बताया है। वैसे तो पूर्ण कर्मातीत स्थिति परमधाम में ही होती है परन्तु कर्म करते भी कर्म के बन्धन से अतीत अर्थात् न्यारी

कर्मातीत स्थिति का अनुभव हमको यहाँ ही करना है क्योंकि परमधाम में तो कोई अनुभव होता ही नहीं है क्योंकि वहाँ शरीर ही नहीं तो अनुभव का प्रश्न ही नहीं उठता। इस कर्मक्षेत्र पर आत्मा अपनी बीजरूप स्थिति में स्थित होकर कर्मातीत अवस्था का अनुभव ही करती है और उसकी निकटतम स्थिति अर्थात् जैसे कर्मातीत स्थिति का अनुभव कर सकती है अर्थात पूर्ण कर्मातीत स्थिति तो आत्मा की परमधाम में ही होती है, यहाँ उसका अनुभव अंशमात्र ही होता है।

पूर्ण कर्मातीत आत्मा कर्म के किसी फल से भी प्रभावित नहीं हो सकती है परन्तु जो भी देहधारी आत्मायें इस कर्मक्षेत्र पर हैं, उनके अच्छे या बुरे कर्मों का हिसाब-किताब यहाँ चलता ही है। यद्यपि साकार ब्रह्मा बाबा सूक्ष्मवतन में हैं तो भी सन्देशियों के अव्यक्त होने के आदि के वर्णन और अब के वर्णन की तुलना करें तो समझ में आता है कि वहाँ किये गये कर्मों का प्रभाव भी आत्मा पर पड़ता है। परन्तु वहाँ पर सब कर्म अच्छे होते हैं, इसलिए आत्मा की उत्तरोत्तर चढ़ती कला की ही स्थिति होती है, श्रेष्ठ कर्मों के जमा का खाता बढ़ता अवश्य है। जैसे आत्मा जब सतयुग आदि में आती है तो वहाँ कोई विकर्म नहीं होता परन्तु आत्मा का खाता कम तो होता ही है। पूर्ण कर्मातीत तो एक परमात्मा ही है क्योंकि उनको अपनी देह नहीं है, इसलिए वे यहाँ ब्रह्मा तन में आते भी परमधाम की स्थिति में ही रहते हैं। परमात्मा के अतिरिक्त और सभी आत्माओं की कर्मातीत स्थिति परमधाम में ही होती है क्योंकि वहाँ न कर्म है और न ही आत्मा को कर्म करने के लिए देह है। ब्रह्मा बाबा के लिए भी ऐसा ही कहेंगे कि वे इस साकार वतन से कर्मातीत हो गये हैं क्योंकि साकार शरीर के साथ कोई हिसाब किताब नहीं रहा, फिर भी सूक्ष्म देह से तो निरन्तर विश्व-सेवा का कर्म कर ही रहे हैं और वह शुभ कर्मों का खाता भी उनका जमा हो ही रहा है अर्थात् जिन आत्माओं की सेवा कर रहे हैं, उनके साथ उनका सुखदायी हिसाब-किताब का सम्बन्ध भी बन ही रहा है।

परमधाम जाने से पहले अर्थात् पूर्ण कर्मातीत बनने के लिए आत्मा को पुराने कल्प का अपना सारा हिसाब-किताब का खाता चुक्ता करना ही होता है परन्तु संगम पर किये गये कर्मों का नये कल्प में आने के लिए आत्मा का खाता आत्मा के साथ अवश्य रहता है, जिसके आधार पर ही आत्मायें नये कल्प में जन्म लेती हैं, सम्बन्ध बनते हैं, साधन-सामग्री प्राप्त करती हैं और उस अनुसार कर्म करती हैं।

हठयोग के मूल शास्त्र पातन्जलि योग में दो प्रकार की सिद्धियां बताई गई हैं। एक निर्संकल्प समाधि और दूसरी है निर्विकल्प समाधि। ये निर्संकल्प और निर्विकल्प शब्दों का राजयोग में भी प्रयोग होता है। आत्मा की चढ़ती कला की ये दो मूल स्थितियां हैं। हर

जीवात्मा का अभीष्ट लक्ष्य है सुख-शान्ति, जिसके लिए निर्विकल्प स्थिति का अभ्यास आवश्यक है परन्तु निर्विकल्प स्थिति की सिद्धि के लिए पहले निर्संकल्प स्थिति का सफल अभ्यास परमावश्यक है। वैसे तो दोनो एक-दूसरे की पूरक स्थितियां हैं। जैसे सतयुग में जाने के लिए पहले मूलवतन जाना आवश्यक है ऐसे ही निर्विकल्प स्थिति के लिए पहले निर्संकल्प स्थिति का सफल अभ्यास आवश्यक है। निर्संकल्प अर्थात् बीजरूप स्थिति और निर्विकल्प अर्थात् शुद्ध संकल्पों में रमण करना, अंशमात्र भी अशुद्ध संकल्प या व्यर्थ संकल्प न चले। जब निर्संकल्प स्थिति से आत्मिक शक्ति का विकास हो जाता है तब ही आत्मा अशुद्ध संकल्पों, व्यर्थ संकल्पों, साधारण संकल्पों से ऊपर उठकर श्रेष्ठ संकल्पों में अर्थात् निर्विकल्प स्थिति में रहने में समर्थ होती है। पूर्ण रूप से निर्संकल्प अवस्था इस कर्मक्षेत्र पर कब हो नहीं सकती। जिसको हम निर्संकल्प समाधि या बीजरूप स्थिति कहते हैं या समझते हैं, उसमें भी सूक्ष्म संकल्प रहता ही है, जिससे ही आत्मा को शान्ति-शक्ति की अनुभूति होती है। वह सूक्ष्म संकल्प भी सूक्ष्म कर्म है, जिससे वातावरण का निर्माण होता है और आत्माओं को उस अनुसार फल मिलता है। हठयोग के अनुसार भी पहले निर्संकल्प समाधि की सिद्धि होती है, उसके बाद ही निर्विकल्प समाधि की सिद्धि होती है।

इस कर्मक्षेत्र पर आते भी पूर्ण कर्मातीत स्थिति एक परमात्मा की ही होती है। वह कर्मातीत स्थिति परम सुखमय है, इसलिए बाबा सदा ही हमको उस स्थिति के अनुभव के लिए प्रेरणा देते हैं और उसको दीर्घकालिक बनाने की शिक्षा देते हैं, जिससे अन्त समय हम पूर्ण कर्मातीत स्थिति को पा सकें, जो सर्व आत्माओं को पानी ही है, वह चाहे योगबल से हो या सजायें भोग कर हो क्योंकि परमधाम घर में तो कर्मातीत बन कर ही जा सकते हैं। इसलिए बाबा सदा ही अपने महावाक्यों से ये प्रेरणा देते हैं कि बच्चे, इस कर्मातीत स्थिति का अनुभव निरन्तर बढ़ाते रहो।

भले ही शास्त्रों में भी इस कर्मातीत स्थिति का वर्णन है परन्तु यथार्थ कर्मातीत स्थिति का अनुभव संगमयुग पर ही होता है और हो सकता है, जब हमको परमात्मा पिता द्वारा कर्म से परे स्थिति का ज्ञान होता है और परमात्मा द्वारा उसका अनुभव भी होता है और अभ्यास द्वारा वह स्थिति चिर-स्थाई बनाने का पुरुषार्थ परमात्मा के द्वारा कराया जाता है। और तो सारे कल्प में कर्मों के हिसाब-किताब के वशीभूत सुख-दुख, कर्म-सम्बन्ध, कर्म-बन्धन का ही अनुभव होता है। सारे कल्प में कोई भी आत्मा कर्म के बिना रहती भी नहीं है और रह भी नहीं सकती है।

"जो गायन है कि करते हुए अकर्ता। सम्पर्क-सम्बन्ध में रहते हुए कर्मातीत। क्या ऐसी स्टेज

रहती है ? कोई भी लगाव न हो और सर्विस भी लगाव से न हो लेकिन निमित्त भाव से हो, इससे ही कर्मातीत बन जायेंगे।"

अ.बापदादा 3.2.74

"स्टडी पूरी तब होगी, जब विनाश के लिए सामग्री तैयार होगी। फिर समझ जायेंगे कि आग जरूर लगेगी। ... पिछाड़ी में कर्मातीत अवस्था होनी है। इस समय किसकी कर्मातीत अवस्था होना असम्भव है। कर्मातीत अवस्था हो जाये फिर तो यह शरीर भी न रहे।"

सा.बाबा 29.6.05 रिवा.

कर्मातीत अर्थात् कर्मो से अतीत, बीजरुप स्थिति अर्थात् मुक्त अर्थात् निर्संकल्प स्थिति। विकर्माजीत अर्थात् जीवन-मुक्त स्थिति अर्थात् निर्विकल्प स्थिति अर्थात् विकर्मो से मुक्त और शुभ कर्मो में प्रवृत स्थिति। अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित आत्मा ही कर्मातीत और विकर्माजीत स्थिति का अनुभव कर सकती है। इसका ज्ञान भी अभी ही परमात्मा ने दिया है।

"विकर्माजीत सम्वत् को 5000 वर्ष हुए हैं, फिर बाद में शुरू होता है विकर्म सम्वत्।... बाप कहते हैं - मैं तुमको कर्म-अकर्म-विकर्म की गति समझाता हूँ।"

सा.बाबा 21.7.05 रिवा.

"बच्चे में नॉलेज भी नहीं होती और कोई अवगुण भी नहीं होता, इसलिए उसे महात्मा कहा जाता है क्योंकि पवित्र है। ... जितना छोटा बच्चा, उतना नम्बरवन फूल। बिल्कुल ही जैसे कर्मातीत अवस्था है। कर्म-अकर्म-विकर्म को कुछ भी नहीं जानते।"

सा.बाबा 1.12.04 रिवा.

"आपके और बाप के मेहमान समझने में फर्क है। मेहमान उसको कहा जाता है जो आता है और जाता है। ... जितना ऊपर की स्थिति में जायेंगे, उतना उपराम होते जायेंगे। शरीर में होते हुए भी इस उपराम अवस्था तक पहुँचना है। बिल्कुल देह और देही अलग महसूस हो।... ऐसी स्थिति की स्टेज को ही कर्मातीत अवस्था कहा जाता है।"

अ.बापदादा 26.1.70

Q. आत्मा पावन होगी, कर्मातीत स्थिति के निकट होगी, आत्मा पर पापों का बोझा नहीं होगा तो उसकी निशानी उस आत्मा को क्या अनुभव होगा और अन्य आत्माओं को उससे क्या अनुभव होगा ?

आत्मा परमधाम की रहने वाली है, इसलिए जब आत्मा पापों से मुक्त, कर्मातीत स्थिति के निकट होती है तो उसे ये साकार वतन रास नहीं आयेगा। उसको स्वत: घर की आकर्षण होगी, याद करने की भी आवश्यकता नहीं होगी। वह इस जगत से उपराम होगी अर्थात् इस जगत

की किसी वस्तु या व्यक्ति से लगाव नहीं होगा, जिससे विश्व की हर आत्मा के प्रति उसकी शुभ भावना और शुभ कामना होगी और हर आत्मा की उसके प्रति शुभ भावना, शुभ कामना होगी। आत्मा में स्वभाविक आकर्षण होगा।

वह स्वयं को देह के बन्धन से मुक्त अनुभव करेगी और मुक्त होने के कारण वह दूसरों के संकल्पों को सहज समझने में समर्थ होगी और अपने संकल्पों को दूसरों तक पहुँचाने में समर्थ होगी। उसके सानिध्य से, वचन से अन्य आत्मायें भी अल्प काल के लिए अपने को देह से मुक्त आत्मिक स्वरूप में अनुभव करेंगी। हर कर्म में मेहनत कम और सफलता अधिक होगी। अपने-पराये की दृष्टि खत्म हो जायेगी, जिससे वह साक्षी होकर इस विश्व का सारा खेल देखेगा और ट्रस्टी होकर पार्ट बजायेगा। ये सब कर्म ऐसी आत्मा से स्वभाविक होंगी।

कर्मभोग होते भी उसकी वेदना से मुक्त होगा। इसीलिए कहा गया है - Events can't be changed but we can change our attitude towards events. अर्थात् कर्मभोग तो होगा परन्तु उसकी वेदना की महसूसता नहीं होगी या कम से कम होगी।

कर्मातीत स्थिति अर्थात् आत्मा की स्थिति ऊर्ध्वमुखी हो जाये अर्थात् आत्मा को घर परमधाम की स्वभाविक आकर्षण हो, उसके लिए पुरुषार्थ न करना पड़े। इस दुनिया में रहते भी निमित्त मात्र पार्ट बजाये।

"मन अमन तब हो जब शरीर में नहीं हो। बाकी मन अ-मन तो कभी होता ही नहीं है। देह मिलती है कर्म करने के लिए तो फिर कर्मातीत अवस्था में कैसे रहेंगे ? कर्मातीत अवस्था कहा जाता है मुर्दे को। जीते जी मुर्दा बनना अर्थात् शरीर से डिटैच। बाप तुमको शरीर से न्यारा बनने की पढ़ाई पढ़ाते हैं।" सा.बाबा 18.12.04 रिवा.

"स्नेह और शक्ति वाली अवस्था अति न्यारी और अति प्यारी होती है। जिसके लिए स्नेह है, उसके समान बनना है, यही स्नेह का सबूत है।... जितना समानता में समीप होंगे, उतना ही समझो कर्मातीत अवस्था के समीप होंगे।" अ. बापदादा 9.11.69

"अभी-अभी शरीर में आये, फिर अभी-अभी अशरीरी बन गये, यह प्रैक्टिस करनी है। इसी को ही कर्मातीत अवस्था कहा जाता है।... शरीर और आत्मा दोनों का न्यारापन चलते-फिरते भी अनुभव होना है।... शरीर की दुनिया, सम्बन्ध वा अनेक जो भी वस्तुयें हैं, उनसे बिल्कुल डिटेच होंगे, जरा भी लगाव नहीं होगा, तब न्यारा हो सकेंगे।"

अ.बापदादा 21.1.72

"इसमें चित्र आदि की कोई दरकार नहीं है। हमको कोई चित्र आदि याद नहीं करना है। अन्त में सिर्फ यह याद रहेगा कि हम आत्मा हैं, मूलवतन की रहने वाली हैं, यहाँ हमारा पार्ट है। ...

ये चित्र आदि सब हैं भक्ति मार्ग की चीजें।" सा.बाबा 14.7.05 रिवा.

विचार करो - ज्ञान सागर बाप ने तुमको क्या नहीं दिया है! विश्व-नाटक के सभी राज़ों को अच्छी रीति समझकर अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर इस विश्व-नाटक का सुख लो। कर्मातीत आत्मा राग-द्वेष, भय-चिन्ता, सुख-दुख, ऊंच-नीच, बड़े-छोटे, मान-अपमान, अकाल-दुकाल आदि सबसे मुक्त होती है।

"शिव बाप कहते हैं - मैं तुमको मालिक बनाता हूँ, मैं नहीं बनता हूँ। मैं तो सदैव कर्मातीत हूँ। ब्रह्मा बाप कहते हैं - हमको कर्म-बन्धन से अतीत होकर फिर नये कर्म सम्बन्ध में जुटना है, इसलिए पुरुषार्थ करना है। पुरुषार्थ कराने वाला है बाप।"

सा.बाबा 11.06.03 रिवा.

"कर्मातीत अर्थात् 1- लौकिक और अलौकिक कर्म और सम्बन्ध दोनों में स्वार्थ भाव से मुक्त, 2- पिछले जन्मों के कर्मों के हिसाब-किताब और वर्तमान जीवन के कमजोर स्वभाव-संस्कार ... इस बन्धन से भी मुक्त, 3- पुरानी दुनिया में इस पुराने अन्तिम शरीर में किसी प्रकार की व्याधि, जो श्रेष्ठ स्थिति को हलचल में लाये, उससे भी मुक्त।"

अ.बापदादा 18.1.87

"बाप कहते हैं - मैं तुमको कर्म-अकर्म-विकर्म की गति का ज्ञान सुनाता हूँ। ... यह ज्ञान अब तुम्हारी बुद्धि में आया है। अब तुम्हारी आंख खुली है, बुद्धि के कपाट खुले हैं अभी बाबा हमको विकर्मजीत बनाने के लिए समझाते हैं।" सा.बाबा 7.7.06 रिवा.

"अपने भाई-बहनों के ऊपर रहमदिल बनो ... सच्चे रहम में कोई लगाव नहीं होता... स्वार्थ का रहम नहीं।... अगर कर्मातीत बनना है तो यह सभी रुकावटें, जो बॉडी कान्शस में ले आती हैं, उनसे मुक्त हो जाओ।" अ.बापदादा 10.3.96

"एक है 108 की माला, दूसरी है फिर उससे बड़ी 16108 की माला। वह है चन्द्रवंशी घराने की रॉयल प्रिन्स-प्रिन्सेज की माला। जो इतना ज्ञान नहीं उठा सकते, पूरा प्योरीफाय नहीं बनते हैं तो सजायें खाकर चन्द्रवंशी घराने की माला में चले जायेंगे। ... यह राज़ भी तुम अभी सुनते हो, जानते हो। वहाँ यह ज्ञान की बातें नहीं रहती हैं। यह ज्ञान सिर्फ अब संगमयुग पर मिलता है। ... जो पूरा कर्मेन्द्रियों को नहीं जीतेंगे, वे चन्द्रवंशी घराने की माला में चले जायेंगे। जो जीतेंगे, वे सूर्यवंशी घराने में आयेंगे।" सा.बाबा 11.10.06 रिवा.

"मन के मालिक हो ना! तो सेकेण्ड में स्टॉप, तो स्टॉप हो जाये। ... फौरन ब्रेक लगनी चाहिए। यही अभ्यास कर्मातीत अवस्था के समीप लायेगा। संकल्प करने के कर्म में भी फुल पास।"

अ.बापदादा 6.3.97

# कर्मातीत स्थिति और कर्म-बन्धन की स्थिति

यथार्थ और सदाकाल की कर्मातीत स्थिति तो आत्मा की अन्त में ही होती है, जब आत्मा परमधाम जाती है। उससे पहले उस स्थिति का अनुभव आत्मायें अशरीरी बनकर अल्पकाल के लिए करती हैं। इस देह में रहते देह से न्यारी कर्मातीत स्थिति का अनुभव परमानन्दमय होता है। द्वापर से लेकर आत्माओं के जो भी कर्म हैं वे कर्म-बन्धन के ही निमित्त बनते हैं क्योंकि उनके फलस्वरूप आत्मायें कुछ न कुछ दुख अवश्य भोगती हैं। यथार्थ कर्मातीत स्थिति में न सुख का कर्म-सम्बन्ध होता है और न ही दुख का कर्म-बन्धन होता है, न कर्म होता है और न कर्म का संकल्प होता है। वह निर्संकल्प स्थिति होती है, जिसको हठयोग में निर्संकल्प समाधि के नाम जाना जाता है और ज्ञान मार्ग में बीजरूप स्थिति के नाम से जाना जाता है। परन्तु इस कर्मक्षेत्र पर सभी देहधारी आत्माओं के स्थूल या सूक्ष्म कर्म होते ही हैं, जो आत्माओं को कर्म-सम्बन्ध या कर्म-बन्धन में लाते हैं। इसलिए उसको पूर्ण कर्मातीत स्थिति नहीं कह सकते परन्तु जो उसके पुरुषार्थी हैं, उनको उसका अनुभव अवश्य होता है, जो अनुभव उनको सदाकाल की कर्मातीत स्थिति के लिए आकर्षित करता है।

कर्मातीत अर्थात् 1- लौकिक और अलौकिक कर्म और सम्बन्ध दोनों में स्वार्थ भाव से मुक्त, 2- पिछले जन्मों के कर्मों के हिसाब-किताब और वर्तमान जीवन के कमजोर स्वभाव-संस्कार ... इस बन्धन से भी मुक्त, 3- पुरानी दुनिया में इस पुराने अन्तिम शरीर में किसी प्रकार की व्याधि, जो श्रेष्ठ स्थिति को हलचल में लाये, उससे भी मुक्त। अ.बापदादा 18.1.87

"मन अमन तो कभी होता नहीं है। देह मिलती ही है कर्म करने के लिए तो कर्मातीत अवस्था में कैसे रहेंगे कर्मातीत अवस्था कहा जाता है मुर्दे को। ... बाप तुमको शरीर से न्यारा बनने की पढ़ाई पढ़ाते हैं।" सा.बाबा 30.01.06 रिवा.

Q. क्या देवतायें कर्मातीत होंगे या उनको कर्मातीत कहा जायेगा ?

नहीं, देवतायें विकर्माजीत होते हैं परन्तु कर्मातीत नहीं क्योंकि सतयुग-त्रेतायुग में विकार नहीं होता परन्तु कर्म तो होते हैं और कर्म का फल भी होता है, इसलिए उनको कर्मातीत नहीं कहा जा सकता है। कर्मातीत आत्मा परमधाम में ही होती है या परमपिता परमात्मा कर्म में आते भी कर्मातीत हैं क्योंकि वे निराकार हैं, उनको अपना शरीर नहीं है, इसलिए कर्म करते भी उनका कोई भी कर्म उनकी स्थिति को प्रभावित नहीं करता है। बाबा ने अनेक बार मुरलियों में ये महावाक्य उच्चारे हैं कि जब तुम कर्मातीत बन जायेंगे तो इस शरीर में रह नहीं सकते अर्थात् कोई भी कर्मातीत आत्मा इस धरा पर रह नहीं सकती। ये सृष्टि एक कर्मक्षेत्र है, जहाँ आत्मायें

कर्म करने और उसका फल भोगने के लिए ही आती हैं और रहती हैं। इस सम्बन्ध में चार शब्द विचारणीय हैं - कर्मातीत - विकर्माजीत - विकर्मी - सुकर्मी। इन चार शब्दों पर विचार करेंगे तो कर्मातीत स्थित के विषय में सहज समझ सकेंगे, जिनका बाबा ने स्पष्ट रूप से ज्ञान दिया है।

Q. क्या देवताओं के कर्मों को सुकर्म कहा जा सकता है ?

नहीं, सुकर्म उनको ही कहा जाता है, जिससे किसी आत्मा का कल्याण हो, चढ़ती कला हो। सतयुग में किसी भी प्रकार का और किसी भी आत्मा का अकल्याण ही नहीं तो कल्याण किसका होगा और करेंगे। सतयुग में आत्मा की चढ़ती कला भी नहीं होती इसलिए देवताओं के कर्मों को सुकर्म भी नहीं कहा जा सकता है। देवताओं से कोई विकर्म नहीं होता है, इसलिए उनको विकर्माजीत कहा जाता है।

Q. क्या पावन या कर्मातीत आत्मा को दूसरी आत्माओं के सुख-दुख की फीलिग होगी ?

नहीं, कर्मातीत आत्मा साक्षी होकर इस सारे खेल को देखती है परन्तु उसके सभी कर्म आत्माओं के कल्याणार्थ स्वत: ही होते हैं। वह सुख-दुख दोनों से न्यारी होती है परन्तु कोई भी आत्मा जिसने शरीर धारण कर यहाँ पार्ट बजाया, वह यहाँ साकार वतन में या सूक्ष्मवतन में शत प्रतिशत कर्मातीत स्थिति में नहीं हो सकती। शत प्रतिशत कर्मातीत तो एक परमात्मा ही है। ब्रह्मा बाबा सूक्ष्मवतन में हैं, उनको बच्चों के सुख-दुख की महसूसता होती है, इसलिए उनको रहम पड़ता है। परमात्मा तो सुख और दुख दोनों की महसूसता से न्यारा है।

"मूसलाधार बरसात, अर्थ-क्वेक आदि सब होना है। अभी तुम बच्चों ने ड्रामा का सब राज समझा है।... तुम बच्चों को अच्छी रीति समझकर औरों को भी समझाना है, खुशी में भी रहना है।... भल कितने भी दुख, मौत आदि होंगे, तुम उस समय खुशी में होंगे। तुम जानते हो मौत तो होना ही है। कल्प-कल्प का यह खेल है, फिकरात की कोई बात नहीं।"

सा.बाबा 24.7.04 रिवा.

## कर्म और कर्मातीत स्थिति एवं विनाश का सम्बन्ध

जब आत्मा पावन होती है तो उसके लिए दुनिया अर्थात् प्रकृति भी पावन चाहिए। जैसे बाबा उदाहरण देते हैं कि जैसा व्यक्ति होता है, वैसा ही उसका फर्नीचर होता है। जब आत्मायें कर्मातीत अर्थात् पावन बन जायेंगी तो वे पतित दुनिया में रह नहीं सकती, उनके लिए दुनिया भी पावन चाहिए। जब दुनिया पावन बनेगी तो पतित दुनिया का विनाश भी अवश्य होगा। इस प्रकार देखें तो कर्मातीत स्थिति ही विनाश का आधार है या कहें कि निर्णायक बिन्दु

है। कर्मातीत स्थिति के लिए कर्म अर्थात् पुरुषार्थ आवश्यक है, इसलिए कर्म, कर्मातीत स्थित और विनाश का गहरा सम्बन्ध है। जो आत्मायें यथार्थ पुरुषार्थ करके विनाश के पहले कर्मातीत बनेंगी, वे ही पहले कर्मातीत दुनिया अर्थात् परमधाम में जायेंगी और विकर्माजीत पावन दुनिया में पहले जायेंगी और जो विनाश के आधार पर अन्त में सजायें खाकर पावन बनेंगी, वे अन्त में ही जन्म लेंगी।

"अगर ज्ञान की धारणा हो तो वह नशा सदा चढ़ा रहे। नशा कोई को बहुत मुश्किल चढ़ा रहता है। मित्र सम्बन्धी आदि सब तरफ से याद निकालकर एक बेहद की खुशी में ठहर जायें, यह है बड़ी कमाल। हाँ, यह भी अन्त में होगा, पिछाड़ी में सब कर्मातीत अवस्था को पा लेते हैं।"

सा.बाबा 9.2.05 रिवा.

"बाप ने याद की यात्रा सिखलाई है, जिससे हम कर्म-बन्धन से न्यारे हो कर्मातीत हो जायेंगे।... अन्त में सब साक्षात्कार होंगे, फिर कुछ कर नहीं सकेंगे। ... अफसोस करेंगे, फिर भी सजा तो खानी ही पड़ेगी।"

सा.बाबा 6.5.05 रिवा.

"वे उपद्रवों को मिटाने के लिए यज्ञ रचते हैं, समझते हैं कि यह लड़ाई आदि न लगे। अरे लड़ाई नहीं लगेगी तो सतयुग कैसे आयेगा।... जरूर पुरानी दुनिया का विनाश कराना होगा। सबको मुक्तिधाम ले जाता हूँ।... तुमको मुक्ति में जाकर फिर जीवनमुक्ति में आना है।"

सा.बाबा 16.2.05 रिवा.

"अब नाटक पूरा होता है, यह पुराना शरीर है, इसका कर्मभोग चुक्तू करना है। जब सतोप्रधान हो जायेंगे तो फिर कर्मातीत अवस्था हो जायेगी, फिर हम इस शरीर में रह नहीं सकेंगे। कर्मातीत अवस्था हुई फिर शरीर छोड़ देंगे, फिर लड़ाई शुरू होगी।"

सा.बाबा 23.11.06 रिवा.

## कर्म और मुक्ति-जीवनमुक्ति

जैसे पूर्ण कर्मातीत स्थिति इस कर्मक्षेत्र पर होना असम्भव ही है, वैसे ही सदा काल की मुक्ति भी इस विश्व-नाटक में असम्भव ही है। हर आत्मा को इस कर्मक्षेत्र पर अपना पूर्व निश्चित अभिनय (Part) करना ही है। जब तक इस कर्मक्षेत्र पर आत्मा का पार्ट नहीं है, तब तक वह मुक्तिधाम में मुक्ति में रहती है। पूर्ण कर्मातीत स्थिति ही मुक्ति की स्थिति है और विकर्माजीत स्थिति ही जीवनमुक्ति की स्थिति है। परमधाम मुक्ति की दुनिया है क्योंकि वहाँ कर्म होता ही नहीं और सतयुग-त्रेता जीवनमुक्ति की दुनिया है, जहाँ विकर्म न होने के कारण जीवन-बन्ध नहीं होता। संगमयुग पर इन दोनों का अनुभव पुरुषार्थ के आधार पर करते हैं, जो

मुक्तिधाम की मुक्ति और जीवनमुक्तिधाम के जीवनमुक्ति से अति श्रेष्ठ है।

मुक्ति-जीवनमुक्ति हर आत्मा का ईश्वरीय जन्मसिद्ध अधिकार है और हर आत्मा ने मुक्ति-जीवनमुक्ति का अनुभव किया है तथा हर कल्प करती ही है, इसीलिए ही जीवनबन्ध या दुख के समय सर्व आत्मायें मुक्ति-जीवनमुक्ति की चाहना करती हैं। वर्तमान जीवनबन्ध की दुनिया में कितनी भी बड़ी प्राप्ति हो फिर भी आत्मा मुक्ति-जीवनमुक्ति की इच्छा रखती ही है क्योंकि वही शान्ति और सुख का चरमोत्कर्ष है। साधन-सम्पत्ति की प्राप्ति मुक्ति-जीवनमुक्ति का मापदण्ड नहीं है परन्तु ये आत्मा की आन्तरिक प्यास है, जो आत्मा यथार्थ ज्ञान की धारणा और स्वरूप में स्थित होने से ही कर सकती है, जो ज्ञान परमात्मा ही देते हैं। कल्प-कल्प परमात्मा आकर हर आत्मा को उसके पार्ट और पार्ट के समय अनुसार मुक्ति-जीवनमुक्ति का अनुभव कराता ही है। इस विश्व-नाटक में हर आत्मा को अपने पार्ट का आधा समय जीवनमुक्ति का और आधा समय जीवनबन्ध का मिला हुआ है, जो हर आत्मा को बजाना होता है परन्तु दोनों ही समय के पार्ट में कर्म की मूल भूमिका है अर्थात् दोनों प्राप्तियां कर्म के आधार पर ही मिलती है।

"तुम संगमयुग के प्राप्तियों के वरदानी समय के अधिकारी हो। ... प्राप्ति स्वरूप के भाग्य को सहज अनुभव करो।... मेहनत में लगे रहेंगे तो प्राप्ति-स्वरूप का अनुभव कब करेंगे ?"

अ.बापदादा 9.10.87

"ऐसे नहीं कि हम पार्ट से छूट जायें, आयें ही नहीं। पार्ट से छूटना हो नहीं सकता। ड्रामा अनुसार आयेंगे जरूर। ... पिछाड़ी वालों को मुक्तिधाम में जास्ती रहने के कारण मुक्तिधाम ही जास्ती याद पड़ेगा। तुमको जीवनमुक्तिधाम याद पड़ता है।... इसमें भी कल्याण है। निर्वाणधाम में रहने चाहते हैं, सुखधाम में नहीं आने चाहते तो इससे समझ जायेंगे कि इनका सुखधाम में पार्ट नहीं दिखाई देता है।" सा.बाबा 20.9.73 रिवा.

परमात्मा सदा मुक्त है और सर्वात्माओं का मुक्ति-जीवनमुक्ति का दाता है। सर्व आत्मायें उनके बच्चे हैं, इसलिए मुक्ति-जीवनमुक्ति सर्व आत्माओं का ईश्वरीय जन्मसिद्ध अधिकार है। देश-काल-परिस्थिति के अनुसार ये अधिकार परमात्मा सर्व आत्माओं को देता ही है और सर्व आत्मायें उसे अनुभव करती हैं। इसलिए ही आत्मायें परमात्मा को मुक्ति-जीवनमुक्ति का दाता समझ प्यार से याद करती हैं। भिन्न-भिन्न भाषाओं में मुक्ति-जीवनमुक्ति को भिन्न-भिन्न शब्दों से याद करते हैं और उसके लिए पुरुषार्थ करती हैं अर्थात् परमात्मा को मुक्ति-जीवनमुक्ति का दाता, लिबरेटर-गाइड आदि के रूप में याद करते हैं।

"बाबा कल्प-कल्प आकर हमको यह नॉलेज देते हैं। बरोबर भारत स्वर्ग था, वहाँ कितने थोड़े मनुष्य होंगे। ... वहाँ होता ही है एक धर्म, बाकी सब आत्मायें चली जाती हैं परमधाम। ... बाप भारत में ही आकर सबको ज्ञान देते हैं। ... भारत ही सच्चा तीर्थ है, जहाँ बाप आकर सबको मुक्ति-जीवनमुक्ति देते हैं।" सा.बाबा 16.2.05 रिवा.

"मुक्ति जीवनमुक्ति का वर्सा बाप ही आकर देते हैं परन्तु किसको डायरेक्ट और किसको इन्डायरेक्ट। ... बाप कहते हैं मैं तुम बच्चों के ही सम्मुख होता हूँ। दिन प्रतिदिन देखेंगे बाबा मधुबन के बाहर कहाँ जायेंगे ही नहीं। इस पुरानी दुनिया में रखा ही क्या है। शिव बाबा कहते हैं हमको स्वर्ग में जाने अथवा स्वर्ग को देखने की भी खुशी नहीं होती, बाकी इस दुनिया में कहाँ जायेंगे।" सा.बाबा 29.11.72 रिवा.

## मुक्ति-जीवनमुक्ति और संगमयुगी मुक्ति-जीवनमुक्ति का अनुभव

इस कर्मक्षेत्र पर मुक्ति-जीवनमुक्ति का यथार्थ अनुभव पुरुषोत्तम संगमयुग पर ही होता है, जब आत्मा को मुक्ति, जीवनमुक्ति, जीवनबन्ध और सारे चक्र का ज्ञान होता है। संगमयुग का अनुभव ही यथार्थ अनुभव है क्योंकि परमधाम में मुक्ति का कोई अनुभव नहीं होगा क्योंकि वहाँ देह ही नहीं होती तो अनुभव कहाँ से और सतयुग में जीवनबन्ध का ज्ञान हीं नहीं तो जीवनमुक्ति का अनुभव कैसा क्योंकि किसी चीज का अनुभव उसके विपरीत चीज के अनुभव के होते हुए ही होता है।

योग के द्वारा आत्मा पावन बनती है और अन्त में कर्मातीत स्थिति को धारण कर परमधाम जाती है, जो ही आत्मा की मुक्त स्थिति है। जो आत्मायें पुरुषार्थ से कर्मातीत बनती हैं, वे यहाँ भी मुक्ति-जीवनमुक्ति का अनुभव करती हैं और भविष्य नई जीवनुक्त दुनिया में भी श्रेष्ठ पद पाती हैं।

इस जीवन में ज्ञान से कर्मातीत और साक्षी स्थिति का अनुभव करना ही मुक्ति-जीवनमुक्ति का यथार्थ अनुभव है। अभी का ये अनुभव यथार्थ और अति श्रेष्ठ अनुभव है। वास्तव में परमधाम में तो मुक्ति का कोई अनुभव ही नहीं होगा और सतयुग में सदाकाल का सुख तो होता है परन्तु जीवनमुक्ति क्या होती है, इसका भी वहाँ ज्ञान नहीं होगा। मुक्ति-जीवनमुक्ति का यथार्थ अनुभव अभी ही होता है, जब हमको सारा ज्ञान परमात्मा से मिलता है और कर्म करते हुए हम उस स्थिति का अनुभव करते हैं। संगमयुग पर मुक्त-जीवनमुक्त अर्थात् साक्षी स्थिति में हम जो कर्म करते हैं, उसके फलस्वरूप ही हमको सतयुग में

जीवनमुक्ति प्राप्त होती है।

"यह कब भी नहीं समझना कि अन्तिम स्टेज का अर्थ यह है कि वह स्टेज अन्त में ही आयेगी। लेकिन अभी से उस सम्पूर्ण स्टेज को जब प्रैक्टिकल में लाते जायेंगे तब अन्तिम स्टेज को अन्त में पा सकेंगे। अगर अभी से उस स्टेज को समीप नहीं लाते रहेंगे तो दूर ही रह जायेंगे, पा न सकेंगे। इसलिये अब पुरुषार्थ में जम्प लगाओ।" अ.बापदादा 9.11.72

"इस देह के भान को भी अर्पण करने से जब अपनापन मिट जाता है तो लगाव भी मिट जाता है।...ऐसे समर्पण होने वालों की निशानी क्या रहेगी ? एक तो सदा योगयुक्त और दूसरा सदा बन्धनमुक्त। जो योगयुक्त होगा, वह बन्धन-मुक्त जरुर होगा। योगयुक्त का अर्थ ही है देह के आकर्षण के बन्धन से भी मुक्त।" अ.बापदादा 25.3.71

"जिन्होंने भी हाथ उठाया वह कभी संकल्पमात्र भी संकल्प वा शरीर की परिस्थितियों के अधीन वा संकल्प में थोड़े समय के लिए भी परेशानी व उसका थोड़ा भी लेशमात्र अनुभव करते हैं वा उससे भी परे हो गये हैं ? जब बन्धनमुक्त हैं तो मन के वश अर्थात् व्यर्थ संकल्पों के वश नहीं होंगे।" अ.बापदादा 13.3.71

"जब बन्धनमुक्त हैं तो मन के वश अर्थात् व्यर्थ संकल्पों के वश नहीं होंगे। व्यर्थ संकल्पों पर पूरा कन्ट्रोल होगा। परिस्थितियों के वश भी नहीं होंगे परिस्थितियों को सामना करने की सम्पूर्ण शक्ति होगी। ...जो बन्धनमुक्त होगा वह सदैव योगयुक्त होगा।"

अ.बापदादा 13.3.71

"कर्मातीत अवस्था के समीप पहुंचने की निशानी जानते हो ? समीपता की निशानी "समानता"है। किस बात में ? आवाज़ में आना व आवाज़ से परे हो जाना, साकार स्वरूप में कर्मयोगी बनना और साकार स्मृति से परे न्यारे निराकारी स्थिति में स्थित होना, सुनना और स्वरूप होना... इन सभी बातों में समानता। उसको कहा जाता है - कर्मातीत अवस्था की समीपता।"

अ.बापदादा 1.9.75

"सन्यासी आदि आते .. बताना चाहिए तुम तो राजाई को मानते ही नहीं हो, अगर मुक्तिधाम, निर्वाणधाम में जाना चाहते हो तो अपने को आत्मा समझ परमात्मा बाप को याद करो। अपने को परमात्मा नहीं, आत्मा समझ बाप को याद करोगे तो तुम्हारे जन्म जन्मान्तर के पाप कट जायेंगे और तुम मुक्तिधाम चले जायेंगे।" सा.बाबा 4.9.69 रिवा.

"तुम्हारी याद की यात्रा पूरी तब होगी जब तुम्हारी कोई भी कर्मेन्दियाँ धोखा न दें। कर्मातीत अवस्था हो जाये। ... अभी तुमको पूरा पुरुषार्थ करना है।"

सा.बाबा 6.7.05

"कोई कुछ कहें तो सुना-अन्सुना कर देना चाहिए। ... तुमको तो कहा गया है - सारे दुनिया को भूल जाओ, अपने को आत्मा समझो। आत्मा कानों बिगर सुनेगी कैसे, अशरीरी हो जाओ। जैसे आत्मा रात को अशरीरी हो जाती है, सो जाते हैं तो कोई गला भी काट कर जाते हैं तो पता नहीं पड़ता है। ... जब तक अशरीरी नहीं बने हो तब तक कुछ न कुछ माया की चोट लगती ही रहेगी।" सा.बाबा 13.1.69

"मुक्ति की अवस्था का अगर अनुभव करते हो तो मुक्त होने के बाद जीवन-मुक्ति का अनुभव ऑटोमेटिकली हो जाता है। ... मुक्ति-जीवनमुक्ति का अनुभव अभी करना है न कि भविष्य में। ... वह है श्रेष्ठ कर्मों की प्रारब्ध लेकिन श्रेष्ठ कर्म तो अभी होते हैं ना, तो प्राप्ति का भी अनुभव अभी होगा ना।" अ.बापदादा 11.7.72

## १७. कर्म और सुख-दुख

ये विश्व-नाटक सुख और दुख, जीत और हार का एक खेल है, जो अनादि काल से चलता आया है और अनन्त काल तक चलने वाला है, इसलिए इसको अनादि-अविनाशी कहा जाता है। सुख-दुख का अनादि-अविनाशी खेल होते हुए भी इसमें कर्म प्रधान है अर्थात् हर आत्मा को सुख या दुख उसके अपने किये गये कर्मों के आधार पर ही मिलता है। परमात्मा आत्माओं को सुखदायी कर्मों का रास्ता बताते हैं, जिनके आधार पर ही आत्मायें दुखदायी कर्मों को छोड़कर सुखदायी कर्मों को करके सुख पाती हैं, इसलिए परमात्मा को सुखदाता कहा जाता है। जहाँ सुख है, वहाँ दुख भी निश्चित है और जहाँ दुख है, वहाँ सुख भी अवश्य होगा परन्तु इसका मतलब ये नहीं कि दोनों साथ-साथ होंगे परन्तु इस खेल में दोनों समयानुसार समान होते हैं। बाबा ने कहा है, जिन्होंने बहुत सुख देखा है, वे ही बहुत दुख देखते हैं और फिर उनको ही बहुत सुख में जाना है। इस सुख-दुख में कर्म का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि कोई सुख या दुख बिना कर्म के हो नहीं सकता। मनुष्य जो भी कर्म करता है, उसके परिणाम में सुख या दुख अवश्य समाया रहता है।

अभी दुख का समय पूरा होने वाला है और सुख का समय आने वाला है, इसलिए बाबा की हम आत्माओं को श्रीमत है - न दुख दो, न दुख लो। सुख दो और सुख लो। सुख दोगे तो सुख पाओगे और दुख दोगे तो दुख अवश्य पाओगे, ये इस सृष्टि का अटल विधि-विधान है। तुम सुखदाता बाप के बच्चे हो, इसलिए तुमको सबको सुख देना है। वास्तविकता ये है कि दुख लेते हैं, तब ही दुख देने का संकल्प उठता है या फिर उदण्डता के वशीभूत

अकारण ही किन्ही निरीह असहाय जीवों को दुख देते हैं या फिर अपने सुख के लिए निरीह प्रणियों की हत्या करते हैं। इन सबका हमारे सुख-दुख से घनिष्ट सम्बन्ध है, जिसका ज्ञान और इससे बचने के लिए बाबा ने श्रीमत दी है, वह सब हमको अपनी बुद्धि में रखकर श्रेष्ठ कर्म करना है अर्थात् श्रेष्ठ कर्म करने का पुरुषार्थ करना है। बाबा ने कहा है - यदि तुम किसको दुख देंगे तो तुमको भी दुख अवश्य मिलेगा, तुम दुखी होकर मरेंगे। बाबा ये कोई श्राप नहीं देते हैं परन्तु कर्म का लॉ बतलाते हैं।

इस सत्य का ज्ञान भी बुद्धि में अवश्य रखना चाहिए कि इस सृष्टि में कोई भी क्रिया बिना कारण के नहीं होती है। यदि हमको किसी से कोई दुख मिल रहा है या हमको किसी भी प्रकार दुख हो रहा है तो उसका कारण हमारे किये हुए विकर्म ही हैं। कर्म और फल के इस विधि-विधान की सत्यता को समझकर अपने दुख के लिए किसको दोष न देकर, उसको शान्ति से सहन करके, भविष्य में दुख न हो, उसके लिए विकर्मों से बचने और सुकर्म करने का पुरुषार्थ अवश्य करना चाहिए। वास्तव में अपने दुख के लिए किसी आत्मा को दोषी ठहराना भी एक विकर्म है, जो हमारे दुखमय भविष्य का बीजारोपण करता है

* प्राय: ऐसी अभिधारणा है कि गर्भ में आत्मा दुख भोगती है परन्तु सत्यता तो ये है कि गर्भ भी एक साधन है आत्मा को शरीर रूपी वस्त्र बदलने के लिए, जो आत्मा के लिए कर्मानुसार सुखदायी भी होता है तो दुखदायी बनता है। इसलिए कहा गया है कि सतयुग-त्रेता में गर्भ भी महल के समान सुखदायी होता है। द्वापर-कलियुग में कर्मानुसार सुखदायी और दुखदायी दोनों ही हो सकता है।

* करोड़पति करोड़ से, लखपति लाख से, गरीब अपनी भावना से किसी आत्मा के दुख के निदान में सहयोगी बन सकता है परन्तु सभी परिस्थितियों में व्यक्ति को अपने कर्मानुसार दुख का अनुभव होगा ही होगा। किसी आयी बीमारी के दुख से छूटने के लिए भी करोडपति करोड़ खर्च कर सकता है, गरीब अपने अनुसार खर्च करता है परन्तु दोनों को दुख महसूसता अपने कर्मानुसार ही होती है अर्थात् किसी करोड़ खर्च करने वाले को दुख की महसूसता अधिक हो सकती है और गरीब को कम भी हो सकती है।

"बाप कहते हैं - मैं ऐसा संसार बनाता हूँ, जिस संसार में तुम सदा सुखी रहो। उसकी युक्ति बता रहा हूँ। कई समझते हैं कि यह तो इम्पासिबुल है लेकिन अगर इम्पासिबुल है तो फिर ऐसी आश हम क्यों रखते आते हैं कि हम सदा सुखी रहें!... ऐसी ही दुनिया का नाम हेविन, स्वर्ग, बहिश्त है, जिसे सभी भाषा वाले अपने-अपने नाम से याद करते हैं।... कल्प पहले भी इसी टाइम पर आया था और ऐसे ही हमको बनाया था।... हमको बनाने के लिए ही उनको

इतने सब तरीके लेने पड़ते हैं।... ऐसे नहीं कि वह सर्व समर्थ है तो अपनी शक्ति से वा अपने तरीके से बना दे। बनायेंगे भी हमारे ही तरीके से क्योंकि हमको कर्मों से बनना है। हम कर्म के आधार पर बनने वाली चीज हैं, हम दूसरी तरह से बन ही नहीं सकते हैं। हम बनते ही कर्मों से हैं, बिगड़ते भी कर्मों से हैं। हमारा है ही कर्म का चक्कर। बाप कहते हैं - मेरा यही तरीका है। इसे जो मेरे द्वारा जानते हैं और समझते हैं, वे ही बन करके अपना सौभाग्य लेते हैं।"

मातेश्वरी 27.6.1964

*अनेक जन्मों के प्रकृति और आत्माओं के साथ हिसाब-किताब हैं, जिनके परिणाम स्वरूप जीवन में दैहिक, दैविक, भौतिक रोग-शोक आना अवश्य सम्भावी हैं, जो आत्मा को भोगने ही होंगे परन्तु देही-अभिमानी स्थित आत्मा को अर्थात् देह से न्यारी आत्मिक स्थिति में स्थित आत्मा को लिए ये शूली से काँटा अनुभव होंगे और देहाभिमानी आत्मा को कांटा भी शूली समान दुखदायी होगा। इसलिए सुख के अभिलाषी आत्मा को अभी ही देही-अभिमानी स्थिति में स्थित होने का तीव्र पुरुषार्थ करना चाहिए, जिससे समय आने पर उस दुख को सहज पार कर सके क्योंकि वेदना के समय यह पुरुषार्थ सम्भव नहीं होता है।

* कोई भी विकर्म आत्मा के व्यर्थ चिन्तन या मानसिक-शारीरिक दुख का कारण अवश्य बनता है, जो आत्मा को सच्चे सुख से वंचित कर देता है। व्यर्थ चिन्तन या व्यर्थ संकल्प-विकल्प स्वत: में एक विकर्म हैं, जो आत्मिक शक्ति के ह्रास के कारण होता है और आत्मिक शक्ति का ह्रास भी करता है तथा आत्मा के दुख का निमित्त भी बनता है।

* अन्धकारमय भविष्य या अशुभ की परिकल्पना भी दुख का बड़ा कारण है। अनेक मनुष्य दुख न होते हुए भी भविष्य के दुख की परिकल्पना करके दुखी होते रहते हैं या भविष्य के अशुभ की परिकल्पना करके दुखी होते हैं और अनेक विकर्म भी कर बैठते हैं, जो भविष्य दुख का कारण बन जाते हैं।

* भविष्य के अशुभ की आशंका का भय भी आत्मा को भयभीत करता है, आशंकित करता है, जिससे आत्मा वर्तमान के सुख से वंचित होकर भविष्य की आशंका में दुखी होती है परन्तु अशुभ की आशंका से भयभीत होने से अशुभ को टाला नहीं जा सकता, उसके लिए शुभ कर्म करना या अपनी आत्मिक शक्ति का विकास करना ही भविष्य में आने वाले दुखों से बचने का साधन और साधना है। इस सत्य को समझकर वर्तमान में निश्चिन्त होकर श्रेष्ठ कर्म करने से उस अशुभ से मुक्त हो सकते हैं या आत्मिक शक्ति के विकास से कोई अशुभ आने पर उससे उत्पन्न दुख की महसूसता हल्की हो सकती है। परमपिता परमात्मा की मधुर स्मृति ही सबसे श्रेष्ठ कर्म है।

* "कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस कीन्ह तासु फल चाखा", "पवित्रता ही जीवन है"। कर्म और फल के विधि-विधान को समझकर हमको अपना जीवन सुखी बनाने के लिए किसी भी परिस्थिति में कोई अनुचित कर्म नहीं करना है। हमारे प्रति कोई अनुचित कर्म करता है या हमारे सामने कोई अनुचित कर्म होता है तो भी हमको उससे प्रभावित होकर कोई अनुचित कर्म नहीं करना है और न ही किसी के लिए अशुभ सोचना है। कर्म और फल ज्ञान को समझकर सबके प्रति शुभ भावना, शुभ कामना रखना ही ज्ञानी आत्मा का लक्षण और सुखी जीवन का प्रशस्त मार्ग है क्योंकि हर आत्मा का अपना ही कर्म उसके सुख-दुख का कारण है और हर आत्मा को ड्रामा के अनादि-अविनाशी विधान के अनुसार अपने कर्म का फल सुख या दुख के रूप में मिलता ही है और मिलना ही है।

ये सृष्टि कर्म-क्षेत्र है। इस कर्म-क्षेत्र पर कोई भी आत्मा कर्म के बिना एक सेकेण्ड भी रह नहीं सकती। कर्म आत्मा का निजी स्वभाव है, जिसके कारण आत्मा निरन्तर कर्म करती है। आत्मा जो भी कर्म करती है, वह अच्छा या बुरा, पुण्य या पाप के रूप में उस आत्मा के खाते में जमा अवश्य होता है, जिसके परिणाम स्वरूप आत्माओं को सुख-दुख प्राप्त होता है। इसीलिए कहा गया है -जीवात्मा अपना आप ही मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।

अज्ञानता के वशीभूत आत्मायें अपने दुख का कारण दूसरों को मानती है परन्तु सत्य ये है कि आत्मा अपने सुख-दुख का मूल कारण स्वयं ही हैं, दूसरे तो निमित्त कारण बनते हैं। हर आत्मा को उसके कर्म ही सुख या दुख देने के मूल कारण है, जो इस सत्य को समझ लेता है, वह अपने दुख के लिए किसी दूसरे को दोषी न ठहराकर अपने कर्म को श्रेष्ठ करने का पुरुषार्थ अवश्य करता है।

"अभी है पुरुषोत्तम संगमयुग, जब बाप आकर राजयोग सिखलाते हैं। बाप ही कर्म-अकर्म=विकर्म की नॉलेज सुनाते हैं। आत्मा ही शरीर लेकर कर्म करने यहाँ आती है।... सतयुग में विकर्म होता ही नहीं, इसलिए वहाँ दुख होता ही नहीं।"

सा.बाबा 23.7.04 रिवा.

"पवित्र आत्मा दुख नहीं भोग सकती है। पहले उनको सुख भोगना है, पीछे दुख। ऐसा कोई कर्म ही नहीं किया तो दुख क्यों भोगेंगे। हम भी पहले सम्पूर्ण होते हैं, फिर आहिस्ते-अहिस्ते कलायें कम होती हैं। हरेक मनुष्य का ऐसे होता है।"

सा.बाबा 20.3.72 रिवा.

"बाप आया हुआ है, दुख हरने की युक्ति बता रहे हैं।... तुम मेरे बने हो तो तुमको किसको दुख नहीं देना है।"

सा.बाबा 17.9.05 रिवा.

"सुखदाता बाप के बच्चे बनकर भी अगर दुख की फीलिंग आती है तो बाप कहते हैं - बच्चे, यह तुम्हारा बड़ा कर्मभोग है। जब बाप मिला तो दुख की फीलिंग आनी नहीं चाहिए। जो पुराने कर्मभोग हैं, उसे योगबल से चुक्तू करो।" सा.बाबा 12.8.05 रिवा.

"अपने को ईश्वरीय सम्प्रदाय कहलाकर फिर एक-दो को दुख देते तो उनको असुर कहा जाता है।... तुमको किसको दुख देने का ख्याल नहीं आना चाहिए।"

सा.बाबा 1.10.05 रिवा.

"अभी तुम डबल अहिंसक बनते हो।... तुमको मन्सा-वाचा-कर्मणा किसको दुख नहीं देना है।... पुरुषार्थ ऐसा करो, जो नम्बरवन में जाओ। टीचर का काम है सावधान करना।"

सा.बाबा 12.10.05 रिवा.

"दुख देते नहीं लेकिन ले तो लेते हो ना। व्यर्थ संकल्प चलने का कारण ही यह है कि व्यर्थ दुख ले लिया, सुन लिया तो दुखी हुए। सुनी हुई बात न चाहते भी मन में चलती है।... ये छोटी-छोटी अवज्ञायें मन को भारी बना देती हैं, इसलिए उड़ नहीं सकते। यह बहुत गुह्य गति है।" अ.बापदादा 17.12.89

"अभी तुम बच्चे ड्रामा के राज़ को जानते हो। हरेक चीज पहले सतोप्रधान होती है, फिर सतो, रजो, तमो होती है। ... बाप को कभी कोई बात में दुख नहीं होता है, साक्षी होकर सब देखते हैं। बच्चे कब बीमार, रोगी बन पड़ते हैं तो क्या शिवबाबा को अफसोस होता होगा ? कभी नहीं। कहेंगे ड्रामा अनुसार कर्मभोग तो हरेक को भोगना ही है। जैसे वह साक्षी होकर देखते हैं, ऐसे बच्चों को भी साक्षी होकर देखना है।"

सा.बाबा 22.04.03 रिवा.

ये विश्व-नाटक एक सुख-दुख का बड़ा वण्डरफुल खेल है, जिसमें कर्म का विशेष स्थान है अर्थात् सुख-दुख दोनों ही आत्मा को कर्म के फलस्वरूप ही मिलते हैं। संगमयुग पर आत्मायें परमात्मा की श्रीमत पर जो कर्म करते हैं, उसका फल सतयुग-त्रेता में आत्माओं से और प्रकृति से मिलता है। द्वापर युग से दुख का पार्ट आरम्भ होता है। द्वापर से देहाभिमान के वशीभूत आत्मायें विकर्म करती हैं, जिससे परस्पर सम्बन्ध बिगड़ते जाते हैं और आत्माओं को आत्माओं से और प्रकृति से दुख मिलता है, जो कलियुग के अन्त में अति में पहुँच जाता है। सतयुग-त्रेता में सुख ही सुख होता है, जो सतत कम होता जाता है परन्तु द्वापर-कलियुग में दुख-सुख दोनों का पार्ट चलता है और सतत सुख कम होता जाता है तथा दुख बढ़ता जाता है।

## १८. कर्म और पाप-पुण्य

## १९. कर्म और दान-पुण्य

पाप-पुण्य, दान-पुण्य का आधार कर्म ही है और आत्मा के द्वारा किया गया पाप-पुण्य, दान आदि ही उसके सुख-दुख का आधार होता है, इसलिए इनके साथ कर्म का क्या सम्बन्ध है, उनका कर्म पर और कर्म का उन पर क्या प्रभाव होता है, उस विधि-विधान को समझना अति आवश्यक है। आत्मा पापात्मा अपने कर्म के आधार पर ही बनती है या कहलाती है और पापों से मुक्त भी कर्म के आधार पर होती है तथा भविष्य के लिए पुण्य का खाता भी कर्म के आधार पर ही जमा करती है। ज्ञान सागर परमात्मा पतित-पावन है, वही आकर हमको अपने पापों से मुक्त होने या पापों का बोझा उतारने और पुण्य का खाता जमा करने का रास्ता बताते हैं, उसके लिए श्रीमत देते हैं, जिस पर चलने से हमारा पापों का बोझा खत्म होता है और पुण्य का खाता जमा होता है।

सतयुग-त्रेता में पाप-पुण्य दोनों नहीं होता है, वहाँ पर आत्मा संगमयुग पर किये हुए पुण्य कर्मों का फल उपभोग करती है। द्वापर-कलियुग में पाप-पुण्य दोनों होता है लेकिन देहाभिमान के कारण पाप अधिक और पुण्य कम होता है। संगमयुग पर बाबा हमको सृष्टि-चक्र का ज्ञान, कर्म का ज्ञान और श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति प्राप्त करने का ज्ञान देते हैं और श्रेष्ठ कर्म करने की श्रीमत देते हैं। इस संगमयुग के समय जो ये सब ज्ञान बुद्धि में रखकर कर्म करते हैं, उनका पुण्य का खाता जमा होता है और पाप का खाता खत्म होता जाता है।।

मन्सा-वाचा-कर्मणा, तन-मन-धन जो भी कर्म करता है, उसका फल होता है और वह आत्मा के पाप-पुण्य के खाते में जमा होता है अर्थात् उससे पाप-पुण्य का खाता कम होता है या जमा अवश्य होता है। सतयुग-त्रेता में भले इनसे पाप-पुण्य नहीं होता है परन्तु संगमयुग पर जमा किया हुआ पुण्य का खाता कम अवश्य होता है। मन्सा, वाचा, कर्मणा, सम्बन्ध-सम्पर्क अर्थात् तन-मन-धन आत्मा के पाप और पुण्य के दरवाजे हैं अर्थात् इससे ही आत्मा का पाप या पुण्य बनता है अर्थात् इनसे ही आत्मा कर्म करके पुण्यात्मा या पापात्मा बनती है। इस सत्य को ही स्पष्ट करने के लिए महान कवि तुलसीदास ने भी कहा है - "तुलसी ये तन खेत है, मन्सा भया किसान। पाप-पुण्य दो बीज हैं, जो जस बुवै सो तस लुनै निदान।"

ये विश्व-नाटक गिरने और चढ़ने का खेल है। आत्माओं की गिरती कला तो सतयुग की आदि अर्थात् पहले जन्म के पहले क्षण से ही आरम्भ हो जाती है, जिसके फल स्वरूप त्रेता के अन्त तक आत्मा की शक्ति की 4 कलायें कम हो जाती हैं परन्तु तब तक आत्माओं के

द्वारा कोई पाप-कर्म नहीं होता है, इसलिए वे न पापात्मा बनती हैं और न ही आत्मा को किसी प्रकार का दुख होता है। द्वापर से आत्मिक शक्ति क्षीण होने के कारण देहाभिमान आत्मा पर हावी हो जाता है, जिसके वशीभूत जीवात्मायें काम विकार में जाती हैं, तब ही उसको पापात्मा कहा जाता है और इस पापात्मा बनने की भी डिग्री है। बाबा ने कहा है - क्रोध वाले को पापात्मा नहीं कहते हैं, पापात्मा काम विकार वाले को कहा जाता है। क्रोध तो सन्यासियों में भी होता है परन्तु वे ब्रह्मचारी रहते हैं तो उनको पवित्रात्मा कहते हैं, उनको सिर झुकाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि पाप-कर्म का मूल कारण काम विकार ही है और उससे आत्मा की शक्ति सबसे अधिक ह्रासित होती है। यह पुण्यात्मा, पवित्रात्मा और पापात्मा का राज़ भी बाबा ने अभी बताया है, जिससे पुण्यात्मा और पवित्रात्मा का अन्तर समझ में आया है।

"विकार में जाने से ही पापात्मा बनते हैं।... मनुष्यों को पता नहीं है कि देवतायें, जो पुण्यात्मा हैं, वे ही फिर पुनर्जन्म में आते-आते पापात्मा बनते हैं।... तुम बच्चों को यह बात सबको समझानी है, सर्विस करनी है।" सा.बाबा 1.11.04 रिवा.

पांच विकारों के वशीभूत आत्मा जो भी कर्म करती है, वह पाप ही होता है और उससे आत्मा की गिरती कला होती है। पतित-पावन परमात्मा की याद में जो भी कर्म करते हैं वे ही पुण्य कर्म होते हैं क्योंकि उससे ही आत्माओं की चढ़ती कला होती है, उससे दूसरी आत्माओं का भी कल्याण होता है। आत्मिक स्थिति में जो कर्म होते हैं, वे पाप और पुण्य दोनों से परे होते हैं, इसलिए ही सतयुग-त्रेता में आत्माओं के कर्मों को अकर्म कहा जाता है क्योंकि उनसे न पाप होता है और न ही पुण्य होता है परन्तु उनसे भी आत्मा की कलायें उतरती अवश्य हैं। भक्ति-मार्ग में जो दान-पुण्य करते हैं, उनसे अल्पकाल के लिए पुण्य होता है परन्तु अन्तिम परिणाम पाप का ही होता है और उनसे गिरती कला में तीव्रता होती है।

"अभी बच्चे चलते-फिरते अथवा यहाँ बैठे-बैठे जन्म-जन्मान्तर के जो पाप सिर पर हैं, उन पापों को याद की यात्रा से विनाश करते हैं।... बच्चे समझते हैं - हम याद की यात्रा से अपने पाप काट रहे हैं, गोया अपना कल्याण कर रहे हैं।"

सा.बाबा 16.9.04 रिवा.

"यह भी तुम जानते हो - कब से पाप शुरू किये हैं, जब से काम चिता पर चढ़े हो। तो तुम्हारी बुद्धि में सारा चक्र है। ... तुम बाजोली वा 84 के चक्र को भी जानते हो। ... यह चक्र बुद्धि में सदैव फिरता रहना चाहिए। यह नालेज अभी तुम ब्राह्मणों के पास ही है, न शूद्रों के पास और न देवताओं के पास है।" सा.बाबा 9.11.04 रिवा.

आत्मा ही पावन और आत्मा ही पतित बनती है, इसलिए पुण्यात्मा, पापात्मा कहा

जाता है। जब आत्मा पंच तत्वों के सम्पर्क में आती है, पंच तत्वों से बना शरीर धारण कर पार्ट बजाती है तब से ही आत्मा की पवित्रता की कलायें (Digree) गिरना आरम्भ हो जाती हैं। ये गिरती कला की प्रक्रिया सतयुग के प्रथम जन्म के आदि काल अर्थात् प्रथम क्षण से ही प्रारम्भ हो जाती है परन्तु सतयुग-त्रेता में ये गति मन्द होती है क्योंकि आत्मा में आत्मिक शक्ति होने के कारण इन्द्रियों पर आत्मा का अधिकार होता है, इसलिए विकार और विकारों के वशीभूत विकर्म नहीं होते अर्थात् कोई पाप-कर्म नहीं होते। द्वापर से आत्मिक शक्ति का ह्रास होने के कारण आत्मा पर देहाभिमान हावी हो जाता है और आत्मा विकारों के वशीभूत हो जाती है, जिससे गिरती कला की गति तीव्र से तीव्रतर होती जाती है। काम विकार आत्मा के पतित बनने में मुख्य भूमिका निभाता है।

परमात्मा पतित-पावन है। कलियुग के अन्त और सतयुग के आदि के संगमयुग पर जब परमात्मा आते हैं और आत्माओं को आत्मा, सृष्टि-चक्र, कर्म का ज्ञान देकर राजयोग सिखलाते हैं, तब ही आत्मा के पावन बनने की प्रक्रिया आरम्भ होती है और राजयोग के सतत अभ्यास से आत्मा पावन बनती है। जो आत्मायें राजयोग के द्वारा पावन नहीं बनती, वे कर्मभोग के रूप में सजायें खाकर पावन बनती है।

"तुम यह 84 जन्मों का स्वदर्शन चक्र फिरायेंगे तो तुम्हारे जन्म-जन्मान्तर के पाप कट जायेंगे। चक्र को भी याद करना है, यह ज्ञान किसने दिया, उनको भी याद करना है। बाबा हमको स्वदर्शन चक्रधारी बना रहे हैं।... बाप को याद करने और स्वदर्शन चक्र को फिराने से ही तुम्हारे पाप कटते हैं।" सा.बाबा 12.10.04 रिवा.

"यह फायदा और घाटा तब देखने में आता है जब आत्मा शरीर के साथ है। ... बाप समझाते हैं - देहाभिमान होने के कारण विकारों का कितना किचड़ा है। ... आत्मा में कितनी मैल है, यह अभी पता पड़ा है। ... तुम पवित्र बन जायेंगे तो फिर कोई अपवित्र की शक्ल देखने की भी दिल नहीं होगी।" सा.बाबा 14.10.04 रिवा.

"हम क्या थे, फिर क्या से क्या बन जाते हैं, ये बातें तुम बच्चे ही समझते हो। ... अभी तुम बच्चे जानते हो हमारी आत्मा में कैसे किचड़ा भरता गया है।... तुम बच्चों को ज्ञान मिला है कि अपने को आत्मा समझो और बाप को याद करो तो आत्मा से किचड़ा निकल जायेगा।" सा.बाबा 14.10.04 रिवा.

"तुम जानते हो हम ही पहले पुण्यात्मा थे, फिर पापात्मा बने, अब फिर पुण्यात्मा बनते हैं। यह तुम बच्चों को नॉलेज मिल रही है, फिर तुम औरों को दे आप समान बनाते हो।... अभी तुमको सारी सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त की नॉलेज है।"

सा.बाबा 2.11.04 रिवा.

"स्मृति से है फायदा और विस्मृति से है घाटा। अपनी यह चांच करनी है।... चेक करो हमने जीवन में क्या-क्या किया, कोई भी बात दिल अन्दर खाती तो नहीं है?... यहाँ तो पाप होते ही हैं। मनुष्य जिसको पुण्य का काम समझते हैं, वह भी पाप ही है। यह है ही पापात्माओं की दुनिया। यहाँ तुम्हारी लेन-देन भी पापात्माओं के साथ ही है।"

सा.बाबा 18.11.04 रिवा.

इस सम्बन्ध में विशेष रूप से बाबा कहते हैं - दुनिया में मां-बाप या कोई मनुष्य किसी कन्या की शादी करा देना बड़ा पुण्य समझते हैं और उसको कन्या-दान की संज्ञा देते हैं परन्तु बाबा कहते हैं यह तो सबसे बड़ा पाप कर्म क्योंकि कन्या जो पवित्र है, उसको पाप-कर्म के लिए प्रेरित करते हैं अर्थात् पाप-कर्म में ढकेलते हैं। ऐसे ही अनेक अन्य कर्मों के विषय में भी बाबा बताते हैं कि कैसे मनुष्य अनेक प्रकार के पाप कर्म करते हुए भी उनको पाप नहीं समझते और पापात्मा बनते जाते हैं।

"मनुष्य विकार को पाप नहीं समझते हैं। अभी बाप ने बताया है - यह काम विकार बड़े से बड़ा पाप है, इन पर जीत पाना है ... बाप की याद में रहकर जो कर्म करते हैं, वे अच्छे कर्म होते हैं।"

सा.बाबा 13.9.05 रिवा.

"सन्यासियों को कहेंगे पवित्र-आत्मा और जो दान आदि करते हैं, उनको कहेंगे पुण्यात्मा। ... आत्मा निर्लेप नहीं है।"

सा.बाबा 12.7.05 रिवा.

"जन्म-जन्मान्तर का पापों का बोझा सिर पर रहा हुआ है, यह कैसे पता पड़े।... देखना है - बाप से हमारी दिल लगती है या देहधारियों से। कर्म सम्बन्धियों आदि की याद आती है तो समझना चाहिए हमारे विकर्म बहुत हैं।... बाप को याद कर अपने सिर से पापों का बोझा उतारना है।"

सा.बाबा 30.4.05 रिवा.

"अगर कोई भी कमजोर वा पतित वायुमण्डल का वर्णन भी करते हैं तो यह भी पाप है। क्योंकि उस समय बाप को भूल जाते हैं।... वायुमण्डल का वर्णन करना - यह भी व्यर्थ हुआ ना। जहां व्यर्थ है वहां समर्थ की स्मृति नहीं।... कितना भी कोई माफी ले लेवे लेकिन जो कोई पाप कर्म वा व्यर्थ कर्म भी हुआ तो उसका निशान मिटता नहीं। निशान पड़ ही जाता है।"

अ.बापदादा 10.5.72

"जैसा संकल्प वैसा स्वरूप बनने वाले सच्चे वैष्णव हो, ऐसे सच्चे वैष्णवों को क्या कोई छू सकने का साहस कर सकता है? अगर छू लेते हैं, तो छोटे मोटे पाप बनते जाते हैं। ऐसे सूक्ष्म पाप, आत्मा को ऊंच स्टेज पर जाने से रोकने के निमित्त बन जाते हैं क्योंकि पाप अर्थात् बोझा,

वह फरिश्ता बनने नहीं देते बीज रूप स्थिति व वानप्रस्थ स्थिति में स्थित नहीं होने देते।"

अ.बापदादा 23.5.74

"पाँच विकारों के वश किये हुए कर्म, विकर्म या पाप कहे जाते हैं - यह है पापों का मोटा रूप। ऐसे ही महीन पुरूषार्थ अर्थात् महारथी के सामने पाँच तत्व अपनी तरफ, भिन्न-भिन्न रूप से आकर्षित कर महीन पाप बनाने के निमित्त बनते हैं। पाँच विकारों को समझाना और उन्हों को जीतना सहज है लेकिन पाँच तत्वों के आकर्षण से परे रहना, यह महारथियों के लिए विशेष पुरूषार्थ है।"

अ.बापदादा 23.5.74

परमधाम की शान्ति या स्थिति पाप-पुण्य दोनों से परे है, सतयुग-त्रेतायुग की शान्ति और स्थिति सुखमय है परन्तु वह भी पाप-पुण्य से परे हैं। द्वापर-कलियुग की स्थिति पाप-पुण्य दोनों से युक्त है लेकिन उसमें पाप की गति अधिक है, पुण्य की गति कम। संगमयुग की अर्थात् हमारी वर्तमान स्थिति ही पुण्यमय है। संगमयुग अर्थात् जब हमारी बुद्धि का कांटा परमधाम में परमपिता परमात्मा के साथ लटका हुआ हो और हमारे संकल्प कर्म विश्व-कल्याण के कार्य में रत हों। उसके अतिरिक्त समय की स्थिति तो कलियुग की ही है अर्थात् पापमय ही है। ये पुरुषोत्तम संगमयुग का समय ही पुण्यमय और परमानन्दमय है।

"गृहस्थ व्यवहार में रहते उनसे भी तोड़ निभाओ। वास्तव में कायदे बहुत कड़े हैं। तुम जन्म-जन्मान्तर तो पापात्माओं को दान देते पापात्मा बनते रहे। अभी तुम पापात्मा को पैसा दे नहीं सकते परन्तु अगर दादे का वर्सा है तो देना पड़ता है। इसलिए बाप कहते हैं - पहले सब काम उतारकर फिर सरेण्डर हो जाओ। ऐसा भी कोटों में कोई ही निकलता है। फॉलो फादर करना है।"

सा.बाबा 20.11.06 रिवा.

"कोई चीज छिपाकर खा लेते हैं। समझते थोड़ेही हैं कि यह भी पाप है। चोरी हुई ना। सो भी शिवबाबा के यज्ञ की चोरी करना बहुत खराब है।"

सा.बाबा 21.7.05 रिवा.

"यह भी तुम बच्चे अभी जानते हो - 21 जन्म तुम पुण्यात्मा रहते हो, फिर पापात्मा बनते हो। जहाँ पाप होता है, वहाँ दुख जरूर होगा।... ये सब बातें उनकी बुद्धि में ही बैठेंगी, जिनकी बुद्धि में कल्प पहले बैठीं होंगी।"

सा.बाबा 21.8.04 रिवा.

"परमपिता परमात्मा से स्वर्ग की राजाई का वर्सा पाना है। अगर यहाँ आकर और चले जाये तो सभी कहेंगे शायद ईश्वर नहीं है। जो ऐसे ऐसे छोड़कर निकलते हैं, उनको देख कितने संशय बुद्धि बन पड़ते हैं, उन सभी का पाप उनके ऊपर चढ़ जाता है। उनकी गति बिल्कुल गन्दी हो जाती है।"

सा.बाबा 2.5.73 रिवा.

"इन्डायरेक्ट भी परमात्मा के नाम पर दान-पुण्य करते तो दूसरे जन्म में उसका एवजा जरूर

मिलता है। बाप को याद करते हैं, भल गालियां भी देते हैं तो भी मुख से भगवान का नाम लेते हैं। बाकी अन्जान होने के कारण जानते कुछ भी नहीं।"

सा.बाबा 28.8.04 रिवा.

"विकार में गये तो ड्रामा अनुसार बुद्धि का ताला बन्द हो जायेगा। फिर किसको कह नहीं सकेंगे कि विकार में मत जाओ। अन्दर खाता रहेगा कि हमने इतने पाप किये हैं। अज्ञान काल में भी खाता है। मरते हैं तो तोबा-तोबा करते हैं। फिर पिछाड़ी में सब पाप सामने आते हैं। गर्भजेल में गया फट से सजायें शुरू हो जाती हैं।" सा.बाबा 15.10.03 रिवा.

"विघ्न डालने वालों पर दोष पड़ जाता है। ड्रामा अनुसार उनकी बुद्धि का ताला बन्द हो जाता है, कुछ भी बोल नहीं सकेंगे। अगर जाकर निन्दा करेंगे तो गला घुट जाता है।"

सा.बाबा 21.08.03 रिवा.

"एक-दो को मारते ही रहते हैं। ड्रामा में देखो कैसा राज़ है। एक-दो से लड़ेंगे तो बाप पर थोड़ेही पाप लगेगा। हम साक्षी होकर देखते हैं। ... तुमको विनाश का भी दुख नहीं होता है।... यहाँ कोई मरे तो तुमको थोड़ेही दुख होगा। तुम तो साक्षी होकर देखते हो, इसने जाकर दूसरा शरीर लिया, अपना पार्ट बजाने के लिए। तुम्हारे में भी सब निश्चयबुद्धि नहीं हैं।"

सा.बाबा 1.09.03 रिवा.

"कोई बहुत धन दान करते हैं तो राजा के घर में वा साहूकार के घर में जन्म लेते हैं। वह दान से बनते हैं। तुम पढ़ाई से राजाई पद पाते हो। पढ़ाई भी है, दान भी है। यहाँ है डायरेक्ट, भक्ति मार्ग में है इन्डायरेक्ट। शिव बाबा तुमको पढ़ाई से ऐसा बनाते हैं। शिव बाबा के पास तो हैं ही अविनाशी ज्ञान रत्न।" सा.बाबा 23.12.69 रिवा.

"तौबा-तौबा, ऐसी बुद्धि शल किसकी न हो। परमात्मा के यज्ञ की चोरी! उन जैसा महान पापात्मा कोई हो न सके। कितनी अधमगति हो जाती है। बाप कहते हैं, यह सब ड्रामा में पार्ट है। तुम राजाई करेंगे, वे तुम्हारे सर्वेन्ट बनेंगे। सर्वेन्ट बिगर राजाई कैसे चलेगी। कल्प पहले भी ऐसे ही स्थापना हुई थी। ... कोई झट बतलाते हैं - बाबा यह भूल हुई। बाबा खुश होते हैं। भगवान खुश हुआ तो और क्या चाहिए।" सा.बाबा 31.3.04 रिवा.

"बाप को सुनायेंगे तो बाबा सावधान करेंगे।... पाप कर लेते, सुनाते नहीं, छिपा लेते तो फिर करते ही रहेंगे। श्राप मिल जाता है।... अन्त में सबको साक्षात्कार होगा - यह-यह बनेंगे।"

सा.बाबा 1.10.05 रिवा.

"पूज्य आत्माओं अर्थात् अलौकिक परिवार की आत्माओं के प्रति अगर कोई भी अपवित्र दृष्टि जाती है तो यह स्मृति का फाउन्डेशन कमज़ोर है और यह महा-महा महापाप है। किसी भी

पूज्य आत्मा प्रति अपवित्रता अर्थात् दैहिक दृष्टि जाती है तो वह महापाप है।"

अ.बापदादा 9.5.83

"यहाँ तुम श्रीमत से श्रेष्ठ पुण्यात्मा बन रहे हो। ... बाप कहते हैं कर्म भल करो लेकिन बीच-बीच में यह सब छोड़ अन्तर्मुख हो जाओ। जैसे कि यह सृष्टि है ही नहीं।... बाप कहते हैं - अपने को आत्मा समझ मुझे याद करो।" सा.बाबा 22.8.05 रिवा.

"अभी तुम जानते हो - याद की यात्रा से हमको पूरा पुण्यात्मा बनना है। ... बाप की श्रीमत पर चलना है। बाप मुख्य बात कहते हैं - एक तो याद की यात्रा में रहो और काम महाशत्रु है, उस पर जीत पानी है।" सा.बाबा 26.8.05 रिवा.

"चेलेन्ज और प्रैक्टिकल में महान अन्तर है... ऐसे करने वाली आत्मायें अनेक आत्माओं को वंचित करने के निमित्त बन जाती हैं, पुण्य-आत्मा के बजाये बोझ वाली आत्मायें बन जाती हैं। इस पाप और पुण्य की गहन गति को जानो।... संकल्प द्वारा भी पाप होता है। संकल्प के पाप का भी प्रत्यक्ष फल प्राप्त होता है।" अ.बापदादा 3.12.78

"अन्य आत्माओं के प्रति संकल्प में भी किसी विकार के वशीभूत वृत्ति है तो यह भी महापाप है। किसी अन्य आत्माओं के प्रति व्यर्थ बोल भी पाप के खाते में जमा होता है। ... शुभ भावना के बजाये और कोई भी भावना है तो यह भी पाप का खाता जमा होता है क्योंकि यह भी दुख देना है।" अ.बापदादा 3.12.78

"अच्छा कर्म करते हैं तो उसका भी रिटर्न मिलता है। कोई ने हॉस्पिटल बनवाया तो अगले जन्म में अच्छी हेल्थ मिलेगी, कालेज बनवाया तो अच्छा पढ़ेंगे परन्तु पाप का प्रायश्चित क्या है? उसके लिए फिर गंगा स्नान करने जाते हैं। बाकी जो धन दान करते हैं तो उसका दूसरे जन्म में मिल जाता है, उसमें पाप कटने की बात नहीं रहती। वह होती है धन की लेन-देन, ईश्वरी अर्थ दिया तो ईश्वर ने अल्पकाल के लिए दे दिया। ... बाप की याद के सिवाए पावन बनने का और कोई उपाय नहीं है। ... अभी तुम जो देते हो, इसका रिटर्न तुमको 21 जन्मों के लिए नई दुनिया में मिलेगा।" सा.बाबा 12.4.05

संगमयुग है उड़ती कला का युग, अतीन्द्रिय सुख अनुभव करने का समय परन्तु पापों-कर्मों का बोझ आत्मा को भारी बना दिता है, जिससे आत्मा उड़ती कला का अनुभव नहीं कर सकती है।

"यह बहुत गुह्य गति है। जैसे पिछले जन्मों के पाप कर्मों के बोझ आत्मा को उड़ने नहीं देते। ऐसे इस जन्म की छोटी-छोटी अवज्ञाओं का बोझ, जैसी स्थिति चाहते हो, वह अनुभव करने नहीं देता।... अवज्ञाओं का बोझ सदा समर्थ बनने नहीं देता।"

Q. सबसे बड़ा पुण्य क्या है, पुण्यात्मा या पुण्य का खाता जमा है, उसकी निशानी क्या है अर्थात स्वयं को उसकी अनुभूति क्या होगी और दूसरों को क्या होगी ?

Q. हमारे सिर पर पापों का बोझा कितना है, उसकी कसौटी क्या है ? आत्मा पर पापों का बोझा कितने जन्मों से चढ़ा है और आत्मा पर जंक कितने जन्मों से चढ़ी है ?

सबसे बड़ा पुण्य है अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर परमात्मा को याद करना। जिसका पुण्य का खाता जमा होगा, वह आत्मा संकल्प करते ही अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित हो जायेगी और परमात्मा की याद से उसे अतीन्द्रिय सुख अर्थात् परमानन्द की अनुभूति होगी। अन्य आत्माओं को भी न जानते और न चाहते भी बिना किसी स्वार्थ के उसके प्रति आकर्षण होगा, उसके प्रति शुभ भावना जाग्रत होगी। उसकी दृष्टि-वृत्ति से, सम्बन्ध-सम्पर्क से अन्य आत्मायें भी अल्पकाल के लिए अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर अतीन्द्रिय सुख का अनुभव करेंगी।

आत्मा पर पापों का बोझा आधे कल्प अर्थात् 63 जन्मों का है और जंक पूरे कल्प अर्थात् 84 जन्मों की चढ़ी हुई है क्योंकि सतयुग से ही आत्मा पर जंक चढ़ना आरम्भ हो जाता है। संगमयुग पर आत्मा पापों से मुक्त होने और जंक उतारने का पुरुषार्थ करती है परन्तु संगमयुग होने के कारण देहाभिमान के वशीभूत कोई न कोई पाप-कर्म भी हो जाते हैं, जिससे जंक उतरते-उतरते चढ़ भी जाती है परन्तु चढ़ती कम है और उतरती अधिक है इसलिए कल्पान्त में आत्मा बिल्कुल पवित्र-पुण्यात्मा बन जाती है।

Q. आत्मा में अविनाशी संस्कार हैं - तो आत्मा ओरिजिनली पुण्यात्मा है या पापात्मा ? और है तो कैसे है ?

आत्मा परमधाम से सतयुग में आती हैं, जहाँ पवित्र होती हैं परन्तु वहाँ पुण्य-पाप का कोई प्रश्न ही नहीं उठता और परमधाम में भी पुण्य-पाप का प्रश्न नहीं है। द्वापर से जब आत्मायें देहाभिमान के वशीभूत होती हैं, तब ही पुण्यात्मा-पापात्मा का प्रश्न उठता है और आत्माओं का पाप का खाता बढ़ता जाता है और पुण्य का खाता क्षीण होता जाता है, जिससे आत्मा कल्प के अन्त में पूरी पापात्मा बन जाती हैं। संगमयुग पर परमात्मा से यथार्थ ज्ञान मिलता है, जिस ज्ञान प्रकाश में आत्मा सुकर्म करके पापात्मा से पुण्यात्मा बनती हैं। संगमयुग पर आत्मा जब अपने मूल स्वरूप में स्थित होती है, तो उसके विचार, स्वभाव-संस्कार सदा श्रेष्ठ और सर्व के कल्याणार्थ होते हैं, इसलिए आत्मा ओरिजिनली पुण्यात्मा है। साधारण स्वभाव-संस्कार वाली आत्मा के सामने कोई पाप-कर्म का प्रश्न आता है तो उसकी अन्तरात्मा एक बार उसको उस

पाप-कर्म से रोकती अवश्य है, इसलिए भी आत्मा के ओरिजिनल संस्कार पुण्यात्मा के ही हैं। "अगर विकारों का दान देकर फिर वापस लेते हैं तो अपना पद गँवाते हैं। बाबा का बने गोया 5 विकारों का दान दे दिया। कहते हैं - दे दान तो छूटे ग्रहण।"

सा.बाबा 6.11.06 रिवा.

"भक्ति में कुम्भ मेले पर जाते, दान-पुण्य आदि करते हैं। अब बाप कहते हैं - यह सब बातें छोड़ो। तुमको ज्ञान सागर मिला है, फिर और कहाँ जायेंगे।... बाबा से पूछते - विनाशी धन सफल कैसे करें? ... भारत की सेवा में लगाए उसको सफल कर दो, कोई सेन्टर खोल दो।"

सा.बाबा 18.10.06 रिवा.

"इस बाबा ने सब कुछ दे दिया, फिर फायदे में है या घाटे में है? बाबा अब सम्मुख समझा रहे हैं - तुम्हारा यह धन-दौलत सब कुछ मिट्टी में मिल जाने वाला है। अपना जीवन सफल करना है, तन-मन-धन सब इसमें लगाओ, फिर देखो इनके एवज़ में तुमको क्या मिलता है।"

सा.बाबा 2.12.06 रिवा.

"गरीब जो अच्छी रीति पढ़ेंगे, वे जाकर राजा-रानी बनेंगे। ऐसे भी सेन्टर्स पर आते हैं, जो ईश्वरीय सेवा में कुछ नहीं देते हैं। उनको पता ही नहीं कि थोड़ा भी बीज बोने से हमारा भविष्य कितना ऊंचा बनेगा। सुदामा का मिसाल है ना।... कौड़िया देते, हीरे बन जाते हैं। इसलिए ही चावल मुट्ठी का गायन है।"

सा.बाबा 6.12.06 रिवा.

"अगर यह रुहानी पर्सनॉलिटी इमर्ज रूप में रहती है तो उनके नयन, उनका चेहरा, चलन, संकल्प और सम्बन्ध सब प्रसन्नता वाले होंगे। ... प्रसन्नचित्त आत्मा कैसी भी परेशान आत्मा को, अशान्त आत्मा को अपनी प्रसन्नता की नज़र से प्रसन्न कर देगी।"

अ.बापदादा 28.11.97

"स्नेह है अटूट लेकिन परसेन्टेज में अन्तर पड़ जाता है। तो अन्तर मिटाने के लिए क्या मन्त्र है? हर समय महादानी, अखण्डदानी बनो। ... बाप के साथ-साथ आप ने भी मददगार बनने का संकल्प किया है। चाहे मन्सा द्वारा शक्तियों का दान वा सहयोग दो, वाचा द्वारा ज्ञान का दान दो, सहयोग दो, कर्म द्वारा गुणों का दान दो, स्नेह दो और सम्पर्क द्वारा खुशी का दान दो।"

अ.बापदादा 31.10.06

"यह है शिवबाबा का रुद्र ज्ञान यज्ञ। इस यज्ञ के तुम ब्राह्मण रक्षक हो। ... यह तो बहुत भारी यज्ञ है। ब्राह्मण कब पतित नहीं बन सकते।... यज्ञ के रक्षक ब्राह्मण कोई उल्टा काम कर न सकें। उनको पूरा देही-अभिमानी रहना है।... अगर यज्ञ में कोई अपवित्र काम किया तो बहुत दण्ड भोगना पड़ेगा।"

सा.बाबा 16.12.06 रिवा.

# २०. कर्म और काल-चक्र

भूतकाल, वर्तमान और भविष्य के घटना-चक्र पर आधारित यह विश्व-नाटक एक काल-चक्र है। वर्तमान और कुछ भी नहीं है, वह केन्द्र-बिन्दु अर्थात् पल-विपल है, जिसके एक तरफ भूलकाल है और दूसरी तरफ भविष्य काल है। वर्तमान भूतकाल के कर्मों का फल और भविष्य में होने वाले कर्मों का बीज है। इसलिए भूतकाल का चिन्तन और भविष्य की चिन्ता न करने वाले ही वर्तमान में श्रेष्ठ कर्म करके वर्तमान का भी सुख अनुभव कर सकते हैं और उज्ज्वल भविष्य का भी निर्माण कर सकते हैं। जो भूतकाल के चिन्तन और भविष्य की चिन्ता में रहते हैं, वे अपने वर्तमान के सुखों को भी गँवा देते हैं और भविष्य के लिए करने वाले पुरुषार्थ को भी नहीं कर पाते हैं।

काल-चक्र के हिसाब से हर आत्मा और हर चीज को सतो, रजो, तमो बनना ही है। सतयुग-त्रेता में आत्मा में आत्मिक शक्ति प्रधान होती है, जिससे आत्मा का इन्द्रियों पर शासन होता है, जिससे वहाँ सर्व कार्य आत्मिक शक्ति अर्थात् योगबल के आधार पर होते हैं। सतयुग-त्रेता में सन्तानोत्पत्ति भी योगबल से होती है परन्तु द्वापर से जब आत्मिक शक्ति कम हो जाती है तो देहाभिमान का आत्मा पर शासन हो जाता है, जिससे कर्म और फल का विधि-विधान आरम्भ होता है और सन्तानोत्पत्ति भी काम विकार के द्वारा होने लगती है। वास्तव में ये सब कर्म ड्रामा में पहले से ही नूँधे हुए हैं, जो समय पर आत्मा को करने ही पड़ते हैं। ऐसे ही सब अविष्कारों की भी ड्रामा में नूँध है, जो समय पर उनकी बुद्धि में आते हैं और उनसे उस अनुसार कर्म होते हैं।

कर्म के आधार पर ही यह काल-चक्र फिरता है या कहें कि काल-चक्र के आधार पर ही आत्माओं के होते हैं। वास्तव में ये दोनों ही बातें एक दूसरे की पूरक हैं अर्थात् आत्मायें जैसा कर्म करती हैं, उसके अनुसार काल अर्थात् समय परिवर्तन होता है परन्तु ये भी कटु सत्य है कि काल के अनुसार आत्माओं के कर्म-संस्कार परिवर्तन होने ही हैं। जो आत्मायें सतयुग की आदि में शत प्रतिशत सतोप्रधान होती हैं, उनको भी समय के अनुसार कलियुग के अन्त में तमोप्रधान बनना ही होता है। कोई चाहे कि वह सदा ही सतोप्रधान स्थिति में रहे, तो वह सम्भव नहीं है। परन्तु इस काल-चक्र अर्थात् विश्व-नाटक में कर्म प्रधान है, इसलिए आत्माओं के जिस समय जैसे कर्म होते हैं, उस अनुसार उस समय का नाम गाया जाता है। सतयुग में कर्म-संस्कार सतोप्रधान तो सतयुग और कलियुग में तमोप्रधान तो कलियुग कहा जाता है। कर्म-संस्कारों के आधार पर यह काल-चक्र सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग चार समान भागों

में विभाजित है। पांचवां है संगमयुग जब तमोप्रधान और सतोप्रधान कर्म-संस्कारों का संगम होता है और आत्मायें तमोप्रधान कर्मो को छोड़कर सतोप्रधान कर्म-संस्कारों को धारण करती हैं और यह काल-चक्र कलियुग से सतयुग में परिवर्तित होता है।

ये पूरे कल्प का काल-चक्र 5000 वर्ष का है, इसकी गणना के लिए और भी अनेक प्रकार के काल-चक्र हैं, जिनमें पृथ्वी की गति के आधार पर दिन-रात का काल-चक्र, चन्द्रमा और पृथ्वी की गति के आधार पर मास का काल-चक्र, पृथ्वी और सूर्य की गति के आधार पर वर्ष का काल-चक्र आदि आदि। इस कल्प के काल-चक्र का आधार ज्ञान-सूर्य परमात्मा है। उसके आने से और उसके कर्म के आधार पर ही इस कल्प के काल-चक्र का परिवर्तन होता है अर्थात् वह आकर आत्माओं जो कर्म सिखाता है, उसके आधार पर आत्माओं के कर्मो में परिवर्तन होता है और इस कल्प के दिन-रात अर्थात् स्वर्ग-नर्क के काल-चक्र परिवर्तन होता है।

* ये विश्व-नाटक क्रिया-प्रतिक्रिया पर आधारित एक घटना-चक्र है। क्रिया-प्रतिक्रिया का विधि-विधान सतयुग आदि से कलियुग अन्त तक एक इन्जन के समान चलता है। जैसे इन्जन जब स्टार्ट करते हैं तो पहले उसका फ्लाई व्हील धीरे-धीरे घूमता है, फिर तेज होता जाता है और जब बन्द करते हैं तो पहले तेज होता है, फिर धीरे-धीरे गति मन्द होते-होते शान्त हो जाता है परन्तु ये सृष्टि का क्रिया-प्रतिक्रिया का चक्र कब बन्द नहीं होता है क्योंकि ये अनादि अविनाशी है। सतयुग में जब आत्मायें आती है तो वे कर्मातीत स्थिति से आती हैं तो उनकी क्रिया-कलाप, हिसाब-किताब बहुत कम होते हैं, फिर क्रिया की प्रतिक्रिया होते हुए दिनोदिन बढ़ते जाते हैं और फिर संगमयुग पर जब परमात्मा आकर ज्ञान देते हैं और कर्मातीत बनने की प्रेरणा देते हैं तो ये क्रिया-प्रतिक्रिया का विधि-विधान कम होते-होते शान्ति की ओर अग्रसर होता है और आत्मायें शान्त होते-होते कर्मातीत स्थिति को प्राप्त होती हैं।

## कर्म और पुरुषोत्तम संगमयुग

काल-चक्र के अनुसार अभी हमारा पुरुषार्थ करने का समय है और विश्व में अनेक आत्माओं का प्रालब्ध का समय है, इसलिए पुरुषार्थ के समय की प्राप्तियों और प्रालब्ध के समय की प्राप्तियों की तुलना नहीं हो सकती है और यदि कोई करता है, तो यह उसकी अनभिज्ञता ही है। अज्ञानता वश जो पुरुषार्थ के समय की और प्रालब्ध के समय की प्राप्तियों की तुलना करता है, वह दुखी हो जायेगा। अभी संगमयुग का पुरुषार्थ भी प्रालब्ध के समान और उससे भी अधिक सुख को देने वाला है परन्तु दोनों में स्थूल साधन-सम्पत्ति की तुलना नहीं

की जा सकती अर्थात् पुरुषार्थ के समय की और प्रालब्ध के समय की साधन-सम्पत्ति में अन्तर अवश्य होगा।

विश्व की साधन-सम्पत्ति तो वही है, उसमें कोई घटती-बढ़ती तो न होती है और न ही हो सकती है परन्तु स्वामित्व का परिवर्तन अर्थात् रिजर्वेशन होता है, जो विश्व-नाटक के पार्ट और आत्मा के पुरुषार्थ अर्थात् कर्म के आधार पर निर्भर करता है। किसी भी साधन-सम्पत्ति पर जब एक के स्वामित्व का रिजर्वेशन समाप्त होता है तो उस पर दूसरे का रिजर्वेशन आरम्भ हो जाता है। यह सारे कल्प के लिए रिजर्वेशन का कार्य इस पुरुषोत्तम संगमयुग पर होता है, जब परमात्मा आकर श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान देते हैं और करने की शक्ति देते हैं, करने के लिए मार्ग-प्रदर्शन करते हैं।

"यह सत्यता के परिचय की वा सत्य ज्ञान की शक्ति की लहर जब तक चारो ओर नहीं फैलेगी तब तक प्रत्यक्षता के झण्डे के नीचे सर्व आत्मायें सहारा नहीं ले सकती। ... यहाँ अपनी स्टेज है, श्रेष्ठ वातावरण है, स्वच्छ बुद्धि का प्रभाव है, स्नेह की धरनी है, पवित्र पालना है, ऐसे वायुमण्डल के बीच अपने सत्य ज्ञान को प्रसिद्ध करने से ही प्रत्यक्षता का आरम्भ होगी।" अ.बापदादा 12.3.85

"संगम पर ही यह सब होता है। अभी तुम यह सब कुछ जानते हो। बाप कहते हैं बाकी जो कुछ राज़ हैं, वे आगे चलकर धीरे-धीरे समझाते रहेंगे। जो रिकार्ड में नूँध है, वह खुलते जायेंगे, तुम समझते जायेंगे। इन-एडवान्स कुछ भी नहीं बतायेंगे। यह भी ड्रामा का प्लेन है, रिकार्ड भी खुलता जायेगा। ... ड्रामा का राज़ सारा भरा हुआ है। ऐसे नहीं कि रिकार्ड से सुई उठाकर बीच में रख सकते हैं।" सा.बाबा 8.4.04 रिवा.

"संगमयुग का असली संस्कार है जो सदा नॉलेज देता और लेता रहता है, उसको सदा ज्ञान स्मृति में रहेगा और वह सदा हर्षित रहेगा।... अपने जन्म और समय के महत्व को जानो तब ही महान कर्तव्य कर सकेंगे।" अ.बापदादा 16.6.72

"बाप ने संगम पर ही कर्म, अकर्म, विकर्म का राज़ बताकर मनुष्यों को देवता बनाया है। भारतवासी ही जानते हैं। देवताओं की मनुष्य महिमा गाते हैं - आप सर्वगुण सम्पन्न ... परमोधर्म।" सा.बाबा 20.11.72 रिवा.

"जब यहाँ आते हो दुनिया के सब ख्यालात छोड़कर आओ।... तुमने कलियुग को छोड़ दिया है, अब तुम संगमयुग पर हो। मधुबन जो खास है, यह है संगम। इसलिए मधुबन का गायन है। यहाँ इस मुरली का ही सुमिरन करना है। जो सुनते हो, उसे रिपीट करो और विचार-सागर मन्थन करो।" सा.बाबा 09.11.06 रिवा.

"संगमयुग की प्राप्तियों की प्रालब्ध का अनुभव अब नहीं करेंगे तो कब करेंगे! भविष्य की प्रालब्ध अलग चीज है, वह तो आपके इस पुरुषार्थ के प्रालब्ध की परछाई है। ... वह प्रालब्ध है - सर्व शक्ति सम्पन्न, सर्व ज्ञान सम्पन्न, सर्व विघ्न विनाशक मूर्त। ... इसकी बहुत सहज विधि है कि अब मास्टर दाता बनो। बाप से लिया है और लेते भी रहो लेकिन आत्माओं से लेने की भावना नहीं रखो।"

अ.बापदादा 13.11.97

## २१. कर्म और धर्म-सत्ता एवं राज-सत्ता / धर्म और कर्म

कर्म और धर्म-सत्ता एवं राज-सत्ता का घनिष्ट सम्बन्ध है। कर्म के आधार पर ही धर्म-सत्ता एवं राज-सत्ता स्थापन होती है और उसको चलाने के लिए भी कर्म ही प्रधान होता है। जो राज-अधिकारी सुकर्मी होते हैं, उनकी राज-सत्ता फलती और फूलती है, सफल होती है, उनके कर्मों के आधार पर उनका गायन होता है। ऐसे ही धर्म-सत्ता की सफलता का आधार भी कर्म ही है। जब धर्म-सत्ता वालों के नियम-संयम अच्छे रहते हैं तब तक उसकी वृद्धि होती है और जब कर्मों में झूठे आडम्बर आ जाते हैं तो उस धर्म का पतन होने लगता है।

सतयुग-त्रेता युग में धर्म-सत्ता और राज्य सत्ता साथ-साथ रहती है, इसलिए राज-सत्ताधारियों के कर्म धर्म-सम्पन्न होते हैं, इसलिए वहाँ सुख-शान्ति, सम्पन्नता होती है। इस धर्म सम्पन्न राज-सत्ता का विधि-विधान परमात्मा संगमयुग पर ही सिखाते हैं। परमात्मा ब्राह्मण जीवन में धर्म और कर्म को साथ-साथ करना सिखाते हैं, जिससे कर्म श्रेष्ठ होते हैं और ये संस्कार ही आत्मा सतयुग में लेकर जाती है। द्वापर से अन्य धर्म जब स्थापन होते हैं तो धर्म-सत्ता और राज्य सत्ता अलग-अलग हो जाती है, जिससे राज-सत्ता वालों में धर्म-सत्ता की अनुपस्थिति में विलासिता, अहंकार, उदण्डता आ जाती है और वे अहंकार के वश अनेक प्रकार के विकर्मों में प्रवृत्त हो जाते हैं। ऐसे ही धर्म-सत्ता वालों के पास राज-सत्ता अर्थात् अधिकार न होने के कारण धर्म-सम्पन्न सुख-शान्तिमय जीवन के लिए कार्य करने में असमर्थ होते हैं, जिसके फलस्वरूप व्यक्तिगत जीवन में और सामूहिक जीवन में सुख-शान्ति-सम्पन्नता दूर होती जाती है और दुख-अशान्ति बढ़ती जाती है। दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हो जाते हैं, जिससे सुख-शान्ति, समृद्धि के लिए यथार्थ कर्म करने में असमर्थ हो जाते हैं।

सतयुग-त्रेतायुग में धर्म-सत्ता और राज-सत्ता एक के ही हाथ में होती है, जिसके कारण वहाँ सुख-शान्ति-सम्पन्नता होती है। दोनों सत्ताओं की निशानी देवताओं को प्रकाशमय ताज और रतनजड़ित ताज दोनों दिखाते हैं परन्तु द्वापर से धर्म-सत्ता और राज-सत्ता दो भागों

में बट जाती है, इसलिए राजाओं को रत्नजड़ित ताज तो होता है लेकिन प्रकाशमय ताज नहीं होता है और धर्म-पिताओं को प्रकाशमय ताज होता है लेकिन रतनजड़ित ताज नहीं होता है।

वास्तव में दासता स्वर्ग की भी अच्छी नहीं है। यदि अभी संगम पर सेवा नहीं करेंगे, दूसरों की तन-मन-धन से सेवा लेते रहेंगे तो स्वर्ग में अवश्य दूसरों की सेवा करनी होगी, दासता में रहना होगा, इसलिए संगमयुग पर परमात्मा की यज्ञ सेवा करने की श्रीमत देते हैं। संगमयुग पर दिल से, तन-मन-धन से मन्सा-वाचा-कर्मणा यज्ञ सेवा करना ही दासता से मुक्त होने का एकमात्र साधन है।

"सतयुग-त्रेतायुग में सम्पन्नता और सम्पूर्णता का गायन है ... द्वापर में भी राज्य-सत्ता तो आपके पास होती है। वहाँ धर्म-सत्ता और राज्य-सत्ता दो भागों में बट जाती है, इसलिए द्वापर कहा जाता है।... धर्मपितायें धर्म-सत्ता के आधार से धर्म की स्थापना करते हैं।"

अ.बापदादा 30.9.75

"संगम पर ही ब्राह्मण धर्म और कर्म को कम्बाइण्ड करते हैं ... धर्म का अर्थ है - दिव्य गुण धारण करना। ... धर्म भी हो और कर्म भी हो, इसका ही अभ्यास परमात्मा सिखलाते हैं।... धर्म और कर्म का प्रवृत्ति मार्ग कहो या कर्म और योग का प्रवृत्ति मार्ग कहो, बात एक ही हो जाती है।"

अ.बापदादा 3.2.76

"आज विश्व में तीन शक्तियाँ हैं - एक धर्म-सत्ता, दूसरी राज्य-सत्ता, तीसरी विज्ञान की सत्ता। लेकिन आप ब्राह्मण आत्मओं में चार सत्तायें हैं। ... चौथी है - श्रेष्ठ कर्मों की सत्ता।... इन चारो सत्ताओं के द्वारा आप ब्राह्मण आत्मायें अपना और विश्व का कल्याण कर रही हो।"

अ.बापदादा 10.1.91

"राज्य सत्ता अर्थात् स्वयं चलने की और औरों को चलाने की कला। ... श्रेष्ठ कर्म की सत्ता अर्थात् कर्म का वर्तमान फल खुशी और शक्ति अनुभव करना और साथ-साथ भविष्य फल जमा होने की अनुभूति होना। इसको कहते हैं कर्म के खज़ानों की सम्पन्नता के नशे की कला। सबसे बड़ा खज़ाना है श्रेष्ठ कर्मों का खज़ाना। ... चारो ही सत्ताओं का बैलेन्स ही है बाप समान सम्पन्न और सम्पूर्ण स्थिति।"

अ.बापदादा 10.1.91

"यहाँ नर से नारायण बनने आये हो, न कि राम-सीता। इतनी अच्छी पढ़ाई पूरी रीति नहीं पढ़ते, इसलिए फेल हो जाते हैं। फिर राजा-रानी बनते हैं। बाकी सरेण्डर नहीं होते हैं तो प्रजा में चले जाते हैं। प्रजा तो ढेर है।"

सा.बाबा 19.11.69 रिवा.

"जितना योग में रहेंगे, ज्ञान की धारणा करेंगे, औरों को समझायेंगे, उतना खुशी का पारा चढ़ेगा।... सृष्टि-चक्र को जितना याद करेंगे, जितनों को आप समान बनायेंगे, उतना फायदा

है। राजा बनना है तो प्रजा भी बनानी है।" सा.बाबा 29.9.06 रिवा.

"बच्चों ने शुरू में साक्षात्कार किया था - यह क्राइस्ट, इब्राहम, बुद्ध आदि सब आयेंगे मिलने के लिए। ... भारत सबको बहुत खींचता है। भारत बाप का बर्थ प्लेस है। ... पार्ट बजाते-बजाते आखरीन सबको दुख में आना ही है। फिर दुख से छुड़ाए सुख में ले जाना बाप का ही काम है।" सा.बाबा 29.11.06 रिवा.

"इस संगमयुग में ही सभी धर्म-स्थापक आत्माओं वा सर्व वर्ग की आत्माओं में बीज पड़ना है। ... जैसे सभी धर्म-पितायें आपके आगे बाप का झण्डा, प्रत्यक्षता का झण्डा लहराने में सहयोगी बनेंगे, ऐसे ही सर्व वर्ग वाले भी प्रत्यक्षता का झण्डा लहराने में सहयोगी बनेंगे।"

अ.बापदादा 31.12.97

## २२. कर्म और अहंकार-हीनता एवं दोनों से मुक्ति

## २३. कर्म और अधिकार एवं कर्तव्य

अहंकार और हीनता वर्तमान मानव जीवन की मुख्य भावनायें हैं, जो अज्ञानता जनित है। दोनों भावनायें आत्माओं के कर्मों पर गहरा प्रभाव डालती है, जिसके कारण आत्मायें अनेक विकर्मों में प्रवृत्त होती हैं। इसलिए विकर्मों से बचने के लिए अहंकार और हीनता के कारण और उसके कर्मों के ऊपर पड़ने वाले प्रभाव को भी जानना अति आवश्यक है। दूसरे को दुखी, अप्राप्ति वाला देखकर स्वयं को प्राप्ति-सम्पन्न अनुभव करके खुश होना अहंकार है और दूसरे को प्राप्ति-सम्पन्न, सुखी देखकर स्वयं में कमी अनुभव करना, दुखी होना हीनता है। परन्तु विश्व-नाटक के यथार्थ ज्ञान के अनुसार दोनों ही अयथार्थ हैं। दोनों को ही साक्षी होकर देखना और ट्रस्टी होकर अपना पार्ट बजाना तथा सबके प्रति शुभ भावना, शुभ कामना रखना कि दुखी भी सुखी हो जायें, वह पुरुषार्थ करना ज्ञानी आत्मा का कर्तव्य है।

अहंकार और हीनता अज्ञानता जनित एक विकार है, जो आत्मा के देहाभिमानी बनने से ही जन्म लेता है। इसलिए अहंकार और हीनता दोनों के वशीभूत आत्मा के द्वारा किये गये कर्म विकर्म ही होते हैं। वास्तव में इस विश्व-नाटक में अहंकार और हीनता का कोई स्थान नहीं है। परमात्मा और प्रकृति के द्वारा हर आत्मा को समान अधिकार मिले हुए हैं, हर आत्मा अपना अनादि-अविनाशी पार्ट बजा रही है, भल हर एक आत्मा का पार्ट अपना-अपना है। आत्मिक स्वरूप अहंकार और हीनता दोनों से मुक्त है। अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित आत्मा अहंकार और हीनता दोनों से मुक्त होती है और जीवन में परमसुख का अनुभव करती है।

अधिकार के लिए प्राय: साधन-सम्पत्ति के विषय में ही खींचातान होती है। साधन-सम्पत्ति तो विश्व में वही होती है परन्तु परन्तु उस पर अधिकार परिवर्तनशील है, जो सृष्टि के आदि से चलता आता है। जो आज हमारी वह कल दूसरे की होगी और दूसरे की हमारी होगी परन्तु इस अधिकार परिवर्तन में कर्तव्य की मुख्य भूमिका होती है।

"ऐसे ही सत्कारी सर्व के प्रति सत्कार की भावना हो...सिर्फ स्थूल सेवा व वाणी द्वारा सेवा, सम्पर्क द्वारा सेवा... स्वयं के गुणों की शक्ति द्वारा अन्य के अवगुणों को मिटा देना अर्थात् निर्बल को बलवान बनाना। ... सत्कार न देने वाले को भी सत्कार देने वाला, ठुकराने वाले को भी ठिकाना देने वाला, ग्लानि करने वाले के भी गुणगान करने वाला, ऐसे को कहा जाता है सर्व-सत्कारी।"

अ.बापदादा 10.2.75

अधिकार और कर्तव्य जीवन रुपी गाड़ी के दो चक्र हैं, जिनके सन्तुलन से ये गाड़ी सफलता पूर्वक चलती है, उसके कर्म श्रेष्ठ होते हैं, जिसके फलस्वरूप आत्मा अपने अभीष्ट लक्ष्य को सहज प्राप्त करती है। अधिकार की प्रधानता आत्मा को उदण्ड बना देती है, जिससे आत्मा अनेक प्रकार के विकर्मों में प्रवृत्त हो जाती है और अधिकार की अनभिज्ञता और कर्तव्य की प्रधानता से जीवन में दासता के बीज अंकुरित होते हैं, जो भी आत्मा को श्रेष्ठ कर्म करने में बाधक होते हैं। इसलिए दोनों का सन्तुलन परमावश्यक है। बाबा ने जीवन में दोनों का महत्व बताया है, इसलिए दोनों में सन्तुलन रखने वाले को ये ब्राह्मण जीवन परम सुखमय होता है।

हम सभी आत्मायें परमपिता परमात्मा के बच्चे हैं, तो परमात्मा की सम्पत्ति पर हर आत्मा का जन्मसिद्ध अधिकार है। परमात्मा नई दुनिया का रचयिता है, सुख-शान्ति, मुक्ति-जीवनमुक्ति का दाता है तो समय और पार्ट के अनुसार ये जन्मसिद्ध अधिकार हर आत्मा को मिलता है, उसके लिए पुरुषार्थ करना हर आत्मा का पावन कर्तव्य है।

"आप लॉ मेकर हो। आप जो कदम उठाते हो वह मानो लॉ बन रहा है। ... आप जो कदम उठायेंगे, आपको देखकर सारा विश्व फॉलो करेगा। ... ऐसी जिम्मेवारी समझकर सदा याद रखो - जो कर्म मैं करूँगा, मुझे देखकर सभी करेंगे।"

अ.बापदादा 14.5.70

"अधिकार भी सामने रखना है और निरहंकारिता का गुण भी सामने रखना है और उपकार करने का कर्तव्य भी सामने रखना है। ये तीनों ही बातें सदैव याद रखना है।... तब यह ताज और तख्त सदैव कायम रहेगा।"

अ.बापदादा 14.5.70

"सभी आत्माओं का एक ही समय यह जन्मसिद्ध अधिकार लेने का पार्ट नहीं है। परिचय तो जरूर मिलना है, पहचानना भी है लेकिन कोई का पार्ट अभी है, कोई का पीछे। ... बिन्दी रूप में न होने के कारण फर्ज भी मर्ज हो जाता है।" अ.बापदादा 26.1.70

"यह वेस्ट संकल्प का वज़न भारी होता है और बेस्ट थॉट्स का वज़न कम होता है। ये वेस्ट थाट्स दिमाग को भारी कर देते हैं, पुरुषार्थ को भी भारी कर देते हैं। इसलिए शुभ-संकल्प जो स्व-उन्नति की लिफ्ट है, वह कम होने के कारण मेहनत की सीढ़ी चढ़नी पड़ती है। ... वेस्ट को खत्म करने के लिए अमृतवेले से लेकर रात तक दो शब्द याद रखो - स्वमान और सम्मान। स्वमान में रहना है और सम्मान देना है। ... दोनों का बैलेन्स चाहिए।"

अ.बापदादा 15.10.04

चेक करना है - बाप सर्व प्राप्तियों का अखुट भण्डार है, उसने हमको क्या-क्या प्राप्ति का अधिकार दिया हुआ है और उस अधिकार को पाकर हमने अपना कर्तव्य कहाँ तक पूरा किया है ?

## अधिकार और कर्तव्य

परमात्मा बाप ने आत्म-ज्ञान और परमात्म ज्ञान की हमारी जन्म-जन्म की आश पूरी की, अनुभव कराया। उसको पाकर हमने परमात्मा की आश पूरी की ? अर्थात् उसको अनुभव करके हमने अपने अन्य भाइयों को बाप का परिचय दिया, अनुभव कराया है ?

बाप ने हमको साकार में गोद का अधिकार दिया, अपनी परम सुखमय गोद का सुख अनुभव कराया - हमने उस सुख को जीवन में स्थाई बनाया, औरों को भी अनुभव कराया है ? बाबा ने हमको सर्वोत्तम ज्ञान का अधिकार दिया - हमने उसे धारण कर औरों को भी वह ज्ञान दिया ?

बाबा ने हमको सर्वोत्त्म ब्राह्मण बनाया, ब्राह्मण परिवार में रखा - हमने औरों को भी ब्राह्मण बनाया, ब्राह्मण बनने का रास्ता दिखाया, ब्राह्मण जीवन के अनुसार कर्तव्य किया ?

बाबा ने हमको अव्यक्त मिलन, फरिश्ता स्वरूप का अनुभव कराया, वरदान दिये - हमने वे वरदान धारण कर, वैसा स्वरूप बनाकर औरों को भी वरदान दिये, वरदान का मार्ग बताया ?

बाबा ने हमको इस पाण्डव भवन की वरदानी भूमि में रहने का अधिकार दिया - हमने उसके महत्व को समझकर उसके महत्व को आगे बढ़ाया, औरों को अनुभव कराया ?

परमात्मा ने हम पर विश्वास करके उस अनुसार सेवा दी - हमने विश्वास-पात्र बनकर उस अनुसार कर्तव्य किया, सेवा को सफल किया ?

अधिकार और कर्तव्य एक गाड़ी के दो पहिये हैं, जो साथ-साथ चलते हैं। अधिकार को पाकर हम वैसा कर्तव्य करेंगे तब ही उस अधिकार का यथार्थ सुख अनुभव कर सकेंगे। "असम्भव को सम्भव करना यह चैलेन्ज (challenge) आप ब्राह्माणों का स्वधर्म है अर्थात् धारणा है तो स्वधर्म में स्थित होना सहज है या कठिन है?... एक सेकेण्ड में जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त करो। तो जरुर एक सेकण्ड में प्राप्त करने का प्लैन प्रैक्टिकल में है।"

अ.बापदादा 24.4.74

बाबा ने हमको इस विश्व-नाटक का सारा ज्ञान दिया है। उस ज्ञान-प्रकाश में अपने अधिकार और कर्तव्य को समझकर सोचना, बोलना, कर्म करने वाला ही यथार्थ ज्ञानी है। बिना सोचे-समझे संकल्प करने, बोलने, कर्म करने वाला ज्ञानी होते भी अज्ञानी है और अपने समय, संकल्प, शक्ति को व्यर्थ गँवाता है, जिससे अपने पाप का खाता बढ़ाता है।

भले हम जानते हैं कि विश्व में हर आत्मा को सुख-दुख उसके कर्मों अनुसार मिलता है परन्तु बुद्धिमान ज्ञानी पुरुष की किसी भी दुखी आत्मा के प्रति रहम और कल्याण की भावना, श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्ति होनी ही चाहिए, ये उसका कर्तव्य है। ये सर्व के प्रति रहम की भावना, कल्याण की भावना ही आत्मा को श्रेष्ठ कर्मों के लिए प्रेरित करता है, जिससे श्रेष्ठ कर्मों का खाता जमा होता है। यदि हम उन दुखी आत्माओं के प्रति उदासीन होंगे, उपहासपूर्ण भावना लाते हैं तो इससे भी हमारा विकर्म का खाता बढ़ता है।

"सर्व शक्तियाँ बाप का वर्सा और वरदाता का वरदान हैं। बाप और वरदाता - इन डबल सम्बन्ध से हरेक बच्चे को यह श्रेष्ठ प्राप्ति जन्म से ही होती है। ... सभी बच्चों को एक द्वारा एक जैसा ही डबल अधिकार मिलता है लेकिन धारण करने की शक्ति नम्बरवार बना देती है।"

अ.बापदादा 29.10.87

"किसने अच्छा किया और बोल दिया तो आधा फल खत्म हो जाता है, आधा जमा होता है। जो गम्भीर रहता होता है, उसका फुल जमा होता है। ... बापदादा कहते हैं - गम्भीरता से अपनी मार्क्स इकट्ठी करो, वर्णन करने से खत्म हो जाती है। चाहे अच्छा वर्णन करते हो या बुरा वर्णन करते हो। अपने अच्छे का वर्णन अपना अभिमान और किसके बुरे का वर्णन उसका अपमान कराता है।"

अ.बापदादा 7.11.95

"पढ़ाई, पालना और प्राप्ति सबको एक जैसी एक द्वारा मिल रही है, फिर भी गति में अन्तर क्यों? ... उसके विशेष दो कारण देखे - एक संकल्प शक्ति को यथार्थ रीति समय प्रमाण स्व प्रति और सेवा के प्रति लगाने की यथार्थ रीति नहीं और दूसरा वाणी की शक्ति को यथार्थ रीति, समर्थ रीति कार्य में लगाने की विधि की कमी।"

अ.बापदादा 14.1.90

* हर व्यर्थ संकल्प और व्यर्थ कर्म के विपरीत समर्थ संकल्प और कर्म होता है। अच्छे पुरुषार्थी का कर्तव्य है व्यर्थ का त्याग करके समर्थ को धारण करना।

* ब्राह्मण जीवन अर्थात् इस ईश्वरीय जीवन की शान (Grace), उसके महत्व का अनुभव होगा, उस पर निश्चय होगा तो इस ईश्वरीय जीवन में कब हीनता या मायूसी आ नहीं सकती और साथ ही अहंकार भी नहीं आ सकता।

"बाप और बच्चे का फुल अधिकार का सम्बन्ध है। ... बाप सभी को अधिकार एक जैसा देता है क्योंकि बाप अखुट वर्सा देने वाला दाता है ... बाप के पास खज़ाना भी अथाह है तो कम क्यों दे। लेकिन लेवता में फर्क हो जाता है।" अ.बापदादा 13.3.90

"जिनकी अच्छी प्रैक्टिस होगी, वे नई-नई प्वाइन्ट्स धारण करते होंगे। ... सारा मदार बुद्धि पर है और तकदीर की भी बात है। यह भी ड्रामा है। ...ड्रामा के आदि-मध्य-अन्त को नहीं जानते गोया कुछ नहीं जानते। तुमको तो जानना चाहिए। बच्चों का फर्ज है औरों को बाप का परिचय देना।" सा.बाबा 29.11.06 रिवा.

## २४. कर्म और कर्म-सन्यास एवं कर्मयोग अर्थात् हद-बेहद का सन्यास

कर्म और भक्ति-भावना, परमात्मा एवं ज्ञान

कर्म-सन्यास, कर्मयोग, भक्ति-मार्ग सबमें कर्म ही प्रधान है और उस अनुसार ही फल मिलता है। ये सृष्टि कर्मक्षेत्र है, जहाँ आत्मायें कर्म करने और उसका फल भोगने के लिए ही आती हैं, इसलिए यहाँ हर आत्मा को कर्म करना ही पड़ता है और करना ही पड़ेगा। इसलिए कर्म-सन्यास हो नहीं सकता अर्थात् कर्म-सन्यास कहना अयथार्थ है। विचारणीय है कि केवल कमाना, खाना बनाना, गृहस्थ-व्यवहार ही कर्म नहीं हैं लेकिन खाना-पीना, उठना-बैठना, सोना, स्वांस लेना भी कर्म है, इसलिए कर्म-सन्यास की परिकल्पना करना यथार्थ नहीं है। बाबा ने हमको कर्म-योग का विधि-विधान सिखाया है अर्थात् योग में रहते जीवन के आवश्यक कार्य करना और कर्म करते भी परमात्मा पिता की याद अर्थात् योग में रहना। यदि यथार्थता को विचार करें तो कर्म-सन्यास भी कर्म है और योग भी एक कर्म है, इसलिए कर्म इस विश्वनाटक में प्रधान है, जिससे कोई भी आत्मा इस कर्मक्षेत्र पर मुक्त नहीं हो सकती है, इसलिए कर्मयोग के द्वारा अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाना ही यथार्थ कर्म अर्थात पुरुषार्थ है।

भक्ति मार्ग में विभिन्न कर्म-काण्ड, तीर्थ, उपवास, आसन, प्राणायाम, गंगा स्नान, भक्ति में तारागण स्नान, अमृतवेला पूजा-पाठ, दर्शन आदि कर्मों का जो विधि-विधान है, वह

भी कर्म है, आत्माओं के मानसिक और दैहिक स्वास्थ्य और व्यवहार शुद्धि के लिए अति आवश्यक हैं, इसलिए ही धर्म-मनीषियों ने उनको धर्म के साथ जोड़ दिया, जिससे मनुष्य कुछ न कुछ ऐसा कर्म करता रहेगा, जिससे उसका स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा और व्यवहार-शुद्धि भी होगी। इस प्रकार के कर्मों से आत्मा की पतन की गति भी मन्द हो जाती है।

भक्ति भी जो जिस भावना से करते, उस अनुसार फल मिलता है और उस अनुसार ही वे ज्ञान मार्ग में भी श्रेष्ठ पुरुषार्थ करते हैं और उस श्रेष्ठ कर्म का फल सतयुग में पाते हैं। ये भक्ति और ज्ञान के कर्मों का सारे कल्प का चक्र है, जिस अनुसार आत्मायें कर्म करते हैं और फल पाते हैं।

भक्ति करने वाले की भावना और कर्म के अनुसार भक्ति के भी तीन रूप होते हैं - एक मुक्ति की इच्छा से एक परमात्मा की भक्ति, दूसरी स्वर्ग या सुख की इच्छा से परमात्मा या देवताओं की भक्ति। तीसरी है दूसरों के अहित की भावना से परमात्मा, देवताओं, भूत-प्रेतों आदि की भक्ति, तन्त्र-मन्त्र आदि करना। जो जिस भावना से भक्ति करते हैं, उसकी साधना के फलस्वरूप अल्पकाल की सिद्धि तो मिलती है परन्तु जो अहित की भावना से भक्ति करते हैं, उसका परिणाम बुरा ही होता है अर्थात् करने वाले का भी अहित अवश्य होता है।

"बाप कहते हैं - यू आर माई बिलवेड सन्स, हमारा आनन्द, प्रेम, सुख तुम्हारा है क्योंकि तुमने वह दुनिया छोड़कर हमारी आकर गोद ली है। ... जो बिलवेड सन बन जाते हैं, उनको जन्म-जन्मान्तर के लिए वर्सा मिल जाता है। ... प्रजा तो साथ नहीं रहती है, वे कहाँ-कहाँ कर्मबन्धन में चले जाते हैं।"

सा.बाबा 11.10.06 रिवा.

"108 पक्के सन्यासी विजय माला के दाने बनने वाले हैं... घर में योग लगाते-लगाते कोई फिर अन्दर आ जाते हैं तो प्रजा से वारिस बन जाते हैं।... जो सन्यास करते हैं, वे वारिस बन जाते हैं। उनको रॉयल घराने में अवश्य ले जाना है। लेकिन अगर ज्ञान इतना नहीं उठाया तो पद नहीं पायेंगे।"

सा.बाबा 11.10.06 रिवा.

"बिरला के पास कितनी ढेर मिल्कियत है। मन्दिर बनाते हैं, उससे कुछ भी नहीं मिलता है। गरीबों को थोड़ेही कुछ देते हैं। मन्दिर बनाया, जहाँ मनुष्य आकर माथा टेकेंगे। हाँ, गरीब को दान में देते हैं तो उसका रिटर्न में मिल सकता है। धर्मशाला बनाते हैं तो बहुत मनुष्य जाकर वहाँ विश्राम पाते हैं तो दूसरे जन्म में अल्पकाल के लिए सुख मिल जाता है।... संगमयुग पर बाप सारे ड्रामा के आदि-मध्य-अन्त का राज समझाते हैं।"

सा.बाबा 6.5.04 रिवा.

"तुमको यह ज्ञान मिलता है। वह भी कर्मों अनुसार ही कहेंगे। शुरू से लेकर भक्ति की है तो

यह अच्छे कर्म किये हैं, इसलिए शिवबाबा भी अच्छी तरह बैठ समझाते हैं। जितनी जास्ती भक्ति की होगी, शिवबाबा राजी हुआ होगा तो अभी भी ज्ञान जल्दी उठायेंगे।"

सा.बाबा 7.5.04 रिवा.

"जो सदा याद में रहते हैं, सदा श्रीमत पर चलते हैं, उनकी पूजा भी सदा होती है। जो हर कर्म में कर्मयोगी बनता है, उसके हर कर्म की पूजा होती है। बड़े-बड़े मन्दिरों में हर कर्म की पूजा होती है।"

अ.बापदादा 30.11.92 पार्टी 5

"जैसे बाप से सम्बन्ध रखना आवश्यक है, ऐसे ईश्वरीय परिवार से सम्बन्ध रखना भी अति आवश्यक है। ... यह भी पास विद् ऑनर की निशानी नहीं है। क्योंकि आप सन्यासी आत्मायें नहीं हो। ... विश्व से किनारा नहीं, विश्व-कल्याणकारी हो। ब्राह्मण आत्माओं की तो बात छोड़ो लेकिन प्रकृति को भी परिवर्तन करने वाले आप हो।"

अ.बापदादा 7.3.90

"भक्त महिमा गाते हैं। तुम भी गाते थे। तुम अब महिमा नहीं गाते हो और न तुम्हारे लिए महिमा की जरूरत है। जो भगत करते हैं, वह तुम बच्चे नहीं कर सकते हो। ... बाप का बनकर बाप की श्रीमत पर चलना है।... जो जितना पढ़ेगा, वह उतना ऊंच पद पायेगा।... इसमें बड़ाई की वा महिमा की कोई बात नहीं है। यह तो ड्रामा बना हुआ है। बाप भी आकर अपना पार्ट बजाते हैं।"

सा.बाबा 26.10.06 रिवा.

"सेवा तो ब्राह्मण आत्माओं का धर्म है, कर्म है। लेकिन अभी सेवा के साथ-साथ समर्थ स्वरूप बनना है। जितना सेवा का उमंग-उत्साह दिखाया है ... सेवा में भी नम्बरवन और समर्थ स्वरूप में भी नम्बरवन। सबको सन्देश देना ब्राह्मण जीवन का धर्म और कर्म है।"

अ.बापदादा 15.12.06

"दुनिया वालों को समय करायेगा और समय पर मजबूरी से करेंगे परन्तु बाप बच्चों को समय के पहले तैयार करते हैं और बच्चे बाप की मोहब्बत से करते हो।... बेहद का वैराग्य धारण करना ही होगा लेकिन मजबूरी से करने का फल नहीं मिलता। मोहब्बत से करने का प्रत्यक्षफल और भविष्य फल बनता है।"

अ.बापदादा 13.12.90

"एक है प्रोग्राम से तपस्या करना और दूसरा है दिल के उमंग-उत्साह से करना। (दोनों के फल में बड़ा अन्तर है) ... तपस्या का सदा और सहज फाउण्डेशन है - बेहद का वैराग्य। बेहद का वैराग्य अर्थात् चारो ओर के किनारे छोड़ देना।"

अ.बापदादा 13.12.90

बाबा ने कहा है - जो सच्चे भक्त होते हैं, वे अपने कर्मों पर बहुत खबरदारी रखते हैं, वे पाप

कर्म से डरते हैं। बाबा जो कहते, वह तो शत प्रतिशत सत्य है ही परन्तु अनेक भक्तों की रचनाओं को देखें तो इस बात का अनुभव होता है। जैसे - बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोये।। जो दिल खोजूँ आपना, मोसे बुरा न कोये ।।

## २५. कर्म और आपघात-महापाप / आपघात और जीवघात का भेद

दुनिया में जानबूझकर, स्वयं ही स्वयं के शरीर को नष्ट कर देना या स्वयं ही अपनी इच्छा से मृत्यु को वरण कर लेने को आत्मघात कहते हैं और आपघात को महापाप मानते हैं। परन्तु अभी हमको बाबा ने आत्मा और जीव का अन्तर बताया है इसलिए आपघात किसको कहा जाता है और जीवघात किसको कहा जाता है, उसका राज़ भी समझ में आया है। आपघात महापाप क्यों है, उसका राज़ भी बाबा ने बताया है।

मनुष्य तो जीवघात को ही आत्मघात समझते हैं। वास्तव में जीवघात भी बड़ा पाप है क्योंकि उससे सिद्ध होता है कि आत्मा इस विश्व नाटक में अपने पार्ट से तंग हो गई, इसलिए आई हुई परिस्थितियों को सहन नहीं कर पा रही है या आने वाली परिस्थितियों को सहन करने में अपने को असमर्थ पाती है, इसलिए उनसे छूटने के लिए जीवघात कर लेती है और समझते हैं कि हम आई हुई परिस्थितियों के दुखों से छूट जायेंगे। परन्तु प्रश्न उठता है - क्या इससे हम उस दुख से छूट जायेंगे ? वास्तव में विश्व-नाटक में कर्म के विधि-विधान के अनुसार कोई भी आत्मा अपने किये हुए विकर्म के दुख से छूट नहीं सकता, उसको अपने विकर्मो का फल जाने-अन्जाने इस शरीर से या भविष्य में दूसरा शरीर लेकर भोगना ही पड़ेगा। इसलिए विश्व-नाटक की यथार्थता और कर्म के विधि-विधान को जानने वाला कभी जीवघात नहीं कर सकता है। सत्यता ये है कि परिस्थिति के छूटने का निवारण जीवघात नहीं है लेकिन विश्व-नाटक की यथार्थता और कर्म के विधि-विधान को समझकर अपनी आत्मिक शक्ति को बढ़ाना है और आई हुई परिस्थितियों को अपने ही कर्मों का फल समझकर साहस पूर्वक उनको सहन करके चुक्ता करना। ये भी विचारणीय है कि ये कार्य परिस्थिति आने के समय नहीं हो सकता है, उसके लिए पहले से ही पुरुषार्थ करना होगा।

आपघात अर्थात आत्मघात क्या है, उसकी गहराई क्या है और वह महापाप क्यों है, यह भी अभी बाबा के ज्ञान से समझ में आया है कि जो आत्मा अपनी आत्मा की पुकार को दबाकर कर्म करती है, अपने विवेक को दबाकर कर्म करती है, वह आपघात महापाप है क्योंकि उसके कारण आत्मा आगे भी पाप कर्म ही करती रहती है, इसलिए पाप का खाता बढ़ता ही रहता है। यथार्थ ज्ञान की धारणा ही इससे मुक्त होने का एकमात्र साधन है। ज्ञान में

चलते-चलते किसी कारण से परमात्मा को और उनके द्वारा सिखाये जा रहे ज्ञान-योग से विमुख होकर उनको छोड़ देना भी आपघात है अर्थात् आत्मा का अकल्याण है।

"तीसरे प्रकार की महसूसता है - मन मानता है कि यह ठीक नहीं है, विवेक आवाज़ भी देता है कि यह यथार्थ नहीं है लेकिन बाहर से ... यह विवेक का खून करना भी महापाप है। जैसे आपघात महापाप है, वैसे यह भी पाप के खाते में जमा होता है।"

अ.बापदादा 2.11.87

"आत्मा के असली गुण स्वरूप और शक्ति स्वरूप से नीचे आना अर्थात् विस्मृत होना - यह भी पाप के खाते में जमा होता है। इसलिए कहा जाता है आत्मघाती महापापी। ... माया के वश, परमत के वश, कुसंग के वश या परिस्थिति के वश अपने ईश्वरीय विवेक को दबाते हो तो समझो ईश्वरीय विवेक का खून करते हो।"

अ.बापदादा 15.10.75

"सबसे बड़ा धोखा स्वयं ही स्वयं को देते हो कि जो जानते हुए, मानते हुए फिर भी स्वयं को श्रेष्ठ प्राप्ति से वंचित कर देते हो। ... अपने को अच्छा पुरुषार्थी सिद्ध करना, कोई भी गलती करके छिपाना - यह भी स्वयं को धोखा देना है वा ठगी करना है।"

अ.बापदादा 15.10.75

Q. जीवघात के लिए उत्तरदायी कौन अर्थात् अपराधी कौन अर्थात् जिससे परेशान होकर किसी आत्मा ने जीवघात-आपघात किया, वह या जिसने उसकी बात सुनी नहीं, वह या जीवघात-आपघात करने वाला स्वयं ?

विश्व-नाटक के ज्ञान और कर्म के नियम-सिद्धान्त को विचार करते हुए निर्णय करें तो - क्या जिस पर सर्वशक्तिवान परमात्मा की छत्रछाया हो, परमात्मा से प्रीतबुद्धि हो उसको कोई आत्मा इस स्थिति तक परेशान कर सकती है कि वह ऐसा कर्म करने के लिए बाध्य हो जाये ?

भगवानुवाच - "निश्चयबुद्धि विजयन्ति, प्रीतबुद्धि विजयन्ति" तो इन महावाक्यों का अस्तित्व ही क्या रहा ? जीवघात-आपघात करने वाले को यथार्थ ज्ञानी कहा जा सकता है ?

विश्व-नाटक में पार्ट के अनुसार आपघात करने वाली आत्मा के स्वयं के कर्म ही उसके लिए उत्तरदायी हैं।

ये घटनायें रोकने के लिए पुरुषार्थ क्या ?

वास्तव में कर्म सिद्धान्त को विचार करें और जीवघात करने वाले व्यक्ति की मन: स्थिति को विचार करें तो 65-70 प्रतिशत तो वह व्यक्ति ही उत्तरदायी होता है अर्थात् वह ईश्वरीय नियम-संयम का, ईश्वरीय मर्यादाओं का उलंघन अवश्य करता होगा और 25-30

प्रतिशत अन्य आत्मायें परस्पर हिसाब-किताब के अनुसार निमित्त बनती हैं, जो भी अपने अपराध के लिए पश्चाताप अवश्य करती हैं या उनके कर्मफल में, मान-प्रतिष्ठा में ह्रास अवश्य होता है। जो समर्थ है, निमित्त है, वह ध्यान नहीं देता तो उसका भी कुछ न कुछ अपराध अवश्य बनता है और उसको भी उसका फल कुछ न कुछ पश्चाताप के रूप में भोगना ही पड़ता है। इसके लिए हर एक को अपनी ज्ञान की स्थिति में उन्नति अति आवश्यक है।

"बाप का बनकर फिर बाप को छोड़ा तो बहुत पापात्मा हो जाते हैं। जैसे कोई किसका खून करता है तो पाप लगता है ना। वह पाप भी थोड़ा है। यहाँ जो बाप का बन और आकर फारकती देते, प्रतिज्ञा कर फिर विकारी बन पड़ते तो बहुत पाप लगता है। अज्ञान काल में इतना नहीं लगता, जितना ज्ञान काल में लगता है।"

सा.बाबा 28.5.71 रिवा.

"काम की चमाट लगती है तो एकदम चकनाचूर हो जाते हैं। जैसे कोई मनुष्य अपना जीवघात करते हैं। उसको आत्मघात नहीं, जीवघात कहा जाता है। ऐसे यह भी आत्मा का घात हो जाता है।"

सा.बाबा 15.11.06 रिवा.

"भक्त लोग बहुत फास्ट (व्रत) रखते हैं। ... यह भी तुम जैसे जीवधात करते हो, आत्म-घात नहीं कहेंगे क्योंकि आत्मा का घात कभी होता नहीं है।... इस समय अपने शरीर को तकलीफ देना - यह भी तो महापाप है। तुम उनको कह सकते हो कि इस समय तुम महान पुण्यात्मा बन सकते हो, इस पुरुषार्थ से।"

सा.बाबा 18.12.06 रिवा.

## २६. कर्म और स्वर्ग-नर्क

स्वर्ग और नर्क दोनों की प्राप्ति में और दोनों के विधि-विधान में कर्म ही प्रधान है। स्वर्ग के सुख भी आत्मा को अपने कर्मानुसार मिलते हैं तो नर्क का दुख भी आत्मा को अपने कर्मानुसार ही मिलता है। नर्क और स्वर्ग के संगमयुग पर परमात्मा आकर कर्मों का यथार्थ ज्ञान देते हैं, जिसके अनुसार आत्मायें कर्म करके अपनी स्वर्ग के साथ-साथ सारे कल्प की प्रालब्ध बनाते हैं। स्वर्ग और नर्क दोनों में कर्मानुसार राजा-प्रजा, दास-दासी, साहूकार-गरीब सब होंगे परन्तु स्वर्ग में सभी सुखी होते हैं और नर्क में सुख-दुख दोनों होते हैं। इसलिए बाबा कहते हैं - तुम अभी जो कर्म करते हो, उससे सारे कल्प के लिए तुम्हारी प्रालब्ध बनती है अर्थात् स्वर्ग और नर्क दोनों में उसका फल पाते हो। कलियुग को कर-युग भी कहा जाता है अर्थात् यहाँ आत्मायें कर्म करती हैं और उसका फल यहाँ ही पाती है, जबकि स्वर्ग में हम संगमयुग में किये गये कर्मों का फल पाते हैं या कहें कि परमात्मा पिता का बनने से उनसे

उसका वर्सा पाते हैं। यह परमात्मा पिता का बनना और उनकी मत पर चलना सबसे श्रेष्ठ कर्म है, जिसका फल हमको स्वर्ग के सुखों के रूप में मिलता है। स्वर्ग या नर्क में जाकर भी हर आत्मा को कर्म तो करना ही पड़ता है।

"तुम अपने तन-मन-धन से अपने लिए राजधानी स्थापन करते हो। जो करेगा, वह पायेगा। जो नहीं करते, वे पायेंगे भी नहीं। कल्प-कल्प तुम ही करते हो। तुम ही निश्चयबुद्धि होते हो। तुम समझते हो बाप, बाप भी है, टीचर भी है, वही गीता का ज्ञान भी यथार्थ रीति सुनाते हैं। ... यह लिखो - गीता का भगवान कृष्ण नहीं, परमपिता परमात्मा शिव है।"

सा.बाबा 3.9.04 रिवा.

"कर्मो का हिसाब-किताब है ना। ... फर्क तो वहाँ भी रहता है ना। कोई सोने के महल बनायेंगे, कोई चाँदी के, कोई ईटों के भी बनायेंगे।" सा.बाबा 7.4.05

"यह कर्मभोग अन्त तक होता रहेगा। जब सम्पूर्ण बन जायेंगे, फिर यह शरीर भी नहीं रहेगा।... सतयुग में कोई कर्मभोग होता नहीं है।"

सा.बाबा 10.11.06 रिवा.

## २७. कर्म और पुरुषार्थ

कर्म, पुरुषार्थ और भाग्य अर्थात् ड्रामा का पार्ट

पुरुषार्थ आत्मा का मूल स्वभाव है क्योंकि हर आत्मा अपने कल्याणमय भविष्य के लिए सदा प्रयत्नशील रहती है परन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र में पुरुषार्थ शब्द का प्रयोग आत्म-कल्याण के लिए किये गये प्रयत्न के लिए किया जाता है क्योंकि आत्मा को पुरुष कहा जाता है, इसलिए जो कर्म पुरुष अर्थात् आत्मा के कल्याणार्थ किया जाता है, वही पुरुषार्थ है। देवतायें तो कोई पुरुषार्थ करते नहीं हैं क्योंकि उनको आत्म-कल्याण का कोई संकल्प ही नहीं होता है और उनको कोई आवश्यकता भी नहीं होती है क्योंकि वे कल्याण में ही हैं। भक्ति मार्ग में जब आत्मायें दुख का अनुभव करती हैं तो आत्म-कल्याण के लिए पुरुषार्थ करती हैं परन्तु वहाँ पुरुषार्थ करते हुए भी आत्म-कल्याण होता नहीं है क्योंकि आत्मा की स्थिति निरन्तर गिरती जाती है। फिर भी वहाँ आत्मायें जो पुरुषार्थ करती हैं, उससे उनकी गिरती कला में कमी अवश्य आती है अर्थात् पुरुषार्थ गिरती कला में अवरोध (Speed Breaker) का काम करता है। सच्चा पुरुषार्थ तो संगमयुग पर ही होता है, जब परमात्मा आकर सत्य ज्ञान देते हैं और पुरुषार्थ का यथार्थ मार्ग दिखाते हैं, जिससे ही आत्मा की चढ़ती कला होती है। अभी के कर्म ही सच्चा पुरुषार्थ हैं, जो आत्मा को चढ़ती कला में ले जाते हैं, आत्मा को मुक्ति-

जीवनमुक्ति का सच्चा अनुभव कराते हैं।

आध्यात्मिक पुरुषार्थ की सफलता साधन-सम्पत्ति, मान-शान की प्राप्ति, भाषण आदि करने, किताब आदि लिख देने में नहीं है लेकिन अपने यथार्थ आत्मिक स्वरूप में स्थित होने, दूसरों को भी आत्मिक दृष्टि से देखने और उनको भी आत्मिक स्वरूप के अनुभव कराने के सफल अभ्यास में है। आध्यात्मिक पुरुषार्थ की सफलता अर्थात् आत्मा जब चाहे, जैसे चाहे, वैसे उसी समय उस स्थिति में स्थित हो जाये, सदा आत्मिक स्वरूप में स्थित रह अतीन्द्रिय सुख परमानन्द का अनुभव करती रहे।

"पुरुषार्थी को कभी भी यह समझना नहीं चाहिए कि मेरे पुरुषार्थ करने के बाद कोई असफलता भी हो सकती है। सदैव समझना चाहिए कि जो पुरुषार्थ किया, वह कभी व्यर्थ नहीं जा सकता।" अ.बापदादा 27.4.72

"जब बीज अविनाशी ही है तो फल न निकले, यह तो हो नहीं सकता। कोई पीछे आने वाले हैं तो अभी कैसे आयेंगे ?... कब भी सर्विस करते यह नहीं देखना वा सोचना कि जो किया, वह व्यर्थ गया।" अ.बापदादा 11.7.71

किसी कर्म के फल में व्यक्ति, व्यक्ति, समय, स्थान, परिस्थितियों का भी बहुत महत्व होता है। अपवित्रता आत्मा की शक्ति का पतन का मूल कारण है अभी पतित पावन परमपिता परमात्मा आया है पवित्रता के लिए उसकी आज्ञा है, हम यज्ञ में रहते हैं, समय की पुकार है ... इन सब बातों को समझकर अभी जो अपवित्र बनता, उसका उसको विशेष पश्चाताप करना होता है और जो सत कर्म करता, पवित्र बनता उसका फल भी उसे विशेष मिलता है।

कर्म करके उसके पश्चाताप में समय-संकल्प-शक्ति व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। करने के बाद उसके परिणाम को सहन करने और आगे वह न हो, उसके लिए पुरुषार्थ करना चाहिए क्योंकि पछताने से कोई फायदा नहीं होता है।

पुरुषार्थ का फल अवश्य मिलता है और प्राप्ति पुरुषार्थ से होती है। इसलिए हमको कब पुरुषार्थ के फल की चिन्ता नहीं करनी चाहिए और न ही किसकी प्राप्तियों से ईर्ष्या करनी चाहिए। इस सत्य को जानकर जो निश्चिन्त, निर्संकल्प, निरासक्त, निर्भय होकर अपने पुरुषार्थ को करता है, वही अपने अभीष्ट लक्ष्य अर्थात् मुक्ति-जीवनमुक्ति का सुखद अनुभव करता है। पुरुषार्थ ही जीवन है और पुरुषार्थहीनता ही मृत्यु है। इसलिए दुनिया में भी जो परमात्मा को नहीं मानते, देवताओं को नहीं मानते, वे कहते हैं - Work is worship अर्थात् उनके लिए कर्म ही प्रधान है।

सुखमय भविष्य की अभिलाषी आत्मा को वर्तमान में पुरुषार्थ करके हर परिस्थिति को सहन करने की शक्ति धारण करने का पुरुषार्थ करना चाहिए और श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त रहकर श्रेष्ठ कर्म-फल का खाता जमा करना चाहिए। याद रहना चाहिए किसी भी आत्मा के सामने कोई भी परिस्थिति पूर्व कर्मों के फल स्वरूप आ सकती है, इसलिए उसको पार करने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। उसके लिए भी पुरुषार्थ पहले से ही करना होगा।

"आत्मा में रिकार्ड भरा हुआ है। ड्रामा के प्लेन अनुसार हमारा पुरुषार्थ चल रहा है। कोई राजा, कोई रानी बनेंगे। ... अच्छे कर्म वालों को अच्छा जन्म मिलेगा। ... यह बना-बनाया खेल है ना। अभी बच्चों का कर्मों पर ध्यान है।"

सा.बाबा 11.1.68 रात्रि क्लास

"जास्ती तकदीर में ही नहीं है तो फिर कर्म ही ऐसा करते हैं। तो सौगुणा दण्ड पड़ जाता है। पुण्यात्मा बनने के लिए पुरुषार्थ कर और फिर पाप करने से सौगुणा पाप हो जाता है। ... कहीं भी रहे बाप को याद जरूर करना है जो सजाओं से छूट जाओ। यहाँ तुम आते ही हो पतित से पावन बनने। पास्ट के भी कोई ऐसे कर्म किये हुए होते हैं तो शरीर की कितनी कर्म भोगना चलती है।"

सा.बाबा 1.9.69 रिवा.

"पाँच विकारों के वश किये हुए कर्म, विकर्म या पाप कहे जाते हैं - यह है पापों का मोटा रूप। ऐसे ही महीन पुरूषार्थ अर्थात् महारथी के सामने पाँच तत्व अपनी तरफ भिन्न-भिन्न रूप से आकर्षित कर महीन पाप बनाने के निमित्त बनते हैं। पाँच विकारों को समझना और उन्हों को जीतना सहज है लेकिन पाँच तत्वों के आकर्षण से परे रहना, यह महारथियों के लिए विशेष पुरूषार्थ है।"

अ.बापदादा 23.5.74

"हर एक का वही पार्ट बजता है, जो कल्प-कल्प बजता है। उसमें कोई फर्क नहीं हो सकता। यह सारा बना-बनाया खेल है। कोई पूछते हैं - पुरुषार्थ बड़ा या प्रालब्ध बड़ी ? अब पुरुषार्थ बिगर प्रालब्ध मिलती नहीं है। ड्रामा अनुसार पुरुषार्थ से ही प्रालब्ध मिलती है।"

सा.बाबा 27.12.04 रिवा.

"ऐसे नहीं कि ड्रामा में होगा तो हमारे से अपने आप होगा। अपने आप कैसे होगा, वह भी हम सोचेंगे कि हमको यह करना है, यह रांग है, यह राइट है, यह करना है, यह नहीं करना है। ... कहे जो होना होगा, वह अपने आप होगा, फिर तो सबमें बैठ जाओ, कोई धन्धा आदि भी नहीं करो। ... जैसे उसमें सोच-समझकर चलना पड़ता है ... वैसे ही इसमें भी अपने कर्मों को श्रेष्ठ रखकर चलना है।"

मातेश्वरी 23.4.65

"यह सृष्टि का चक्र कैसे फिरता है, उसको अभी हम जानते हैं। कैसे यह नीचे आता है फिर

कैसे ऊंचा उठता है, वह जानते हैं। अभी ऊंचा उठने का टाइम है, इसलिए हमको ऊंच कर्म करना ही चाहिए। ड्रामा अनुसार अभी हमारी चढ़ती कला का टाइम है तो हमको चढ़ना ही चाहिए।... बाकी ऐसे नहीं कि अपने आप होगा। अपने आप कुछ होता नहीं है।"

मातेश्वरी 23.4.65

"अभी तुम शिवबाबा से स्वर्ग की बादशाही ले रहे हो। हर एक उस दादे से वर्सा लेते हैं परन्तु अपने-अपने पुरुषार्थ अनुसार। इसमें कोई हिस्सा बाँटा नहीं जाता है।... सारा मदार अपने पुरुषार्थ पर है।"

सा.बाबा 11.11.06 रिवा.

"भाग्य विधाता बाप ने हर एक बच्चे को पुरुषार्थ से, श्रेष्ठ कर्मों की कलम से यह सब रेखायें खींचने की खुली दिल से खुली छुट्टी दे दी है।... लेकिन समय के अन्दर।... अभी के तकदीर की लकीर आपको सारे कल्प में भी श्रेष्ठ बनाती है।"

अ.बापदादा 13.11.97

## २८. कर्म और जड़-जंगम एवं चेतन प्रकृति

### कर्म और वातावरण

चैतन्य आत्मा की मन्सा-वाचा-कर्मणा, दृष्टि-वृत्ति, स्मृति के की गई सभी क्रियायें कर्म हैं और उनका फल कर्ता को अवश्य मिलता है क्योंकि वे सभी कर्म जड़, जंगम और चेतन को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित अवश्य करते हैं और उन सबसे आत्मा के जड़-चेतन के साथ हिसाब-किताब बनते हैं, जो उसके कर्ता को सुख या दुख के रूप में भोगने पड़ते हैं।

मनुष्य के कर्मों का प्रभाव जड़-जंगम प्रकृति पर भी पड़ता है और मनुष्य के कर्मों अनुसार जड़ प्रकृति में भी परिवर्तन होता है, जिसके आधार पर वह उसके कर्मों अनुसार फल देती है। सतयुग में प्रकृति सतोप्रधान होती है और मनवांछित फल देती है क्योंकि संगमयुग पर हमने प्रकृति को योगबल से पावन बनाया है। वही प्रकृति द्वापर-कलियुग में दुखदायी बन जाती है क्योंकि मनुष्यों के कर्म विकारी हो जाते हैं, जो जड़ प्रकृति को भी दूषित करते हैं। सतयुग के आदि की सतोप्रधान प्रकृति का सुख सतोप्रधान आत्मायें ही पा सकती है क्योंकि वे ही प्रकृति को सतोप्रधान बनाने में परमात्मा की मददगार बनती हैं।

परमात्मा न किसको सुख देता है और न ही दुख देता है। वह तो सर्व आत्माओं को सुख का रास्ता बताता है, उस रास्ते पर चलकर जो आत्मायें अपने कर्मों द्वारा जड़-चेतन के साथ जैसा सम्बन्ध बनाती हैं, उस अनुसार उनसे फल पाती हैं। इसलिए ड्रामा प्लेन अनुसार हर आत्मा को सुख-दुख उसके कर्मों अनुसार प्रकृति देती है। इस विश्व-नाटक का अन्तर्जाल

(Internet) इतना सूक्ष्म और शक्तिशाली है कि हर आत्मा के मन में उठने वाले संकल्पों का भी प्रभाव प्रकृति पर पड़ता है और उसके अनुसार उसका फल उसको प्रकृति द्वारा मिलता है।

कर्मों की गति अति गहन गाई हुई है। जैसे विकर्म बनने की गति गहन है वैसे ही कर्मों का हिसाब-किताब चुक्तू होने की गति भी अति गहन है। कई बार निरीह प्राणियों की हत्या करते देखकर मन में प्रश्न उठता है कि इन निरीह प्राणियों के साथ मनुष्यों का क्या हिसाब-किताब है, जो उनको ये मार रहे हैं और यदि नया बन रहा है तो कैसे वह हिसाब-किताब चुक्तू होगा। ये प्रकृति जड़ होते भी चेतन्य की भांति कार्य करती है और उसका विधि-विधान बिल्कुल न्यायपूर्ण है। दुनिया में जैसे कोई चोर चोरी करता है और वह पकड़ में नहीं आता है सरकार उसकी सम्पत्ति को कुर्क करके दूसरों के हितों की भरपाई करती है। ऐसे ही प्रकृति को भी किन्हीं आत्माओं को उनके कर्मों अनुसार सुख देना होता है तो किन्हीं को उनके कर्मों का फल दुख के रूप में देना होता है, जिसके फलस्वरूप वे आत्मायें प्रभावित होती हैं।

अनेक प्रकार से सामूहिक रूप से किये गये कर्मों के कारण प्रकृति दूषित होती है, जिसका फल भी सामूहिक रूप में मिलता है अर्थात् उसके फल स्वरूप भूकम्प, बाढ़, तूफान आदि आते हैं, जिससे संगठित रूप में आत्मायें प्रभावित होती हैं। संगठित योगादि के द्वारा हमा जो करते हैं, उसके कारण प्रकृति पावन बनती है और उसके फलस्वरूप सतयुग-त्रेता में सुखदायी फल देती है।

"ब्राह्मण विश्व की किसी भी आत्माओं को देखते हैं, उनको सिर्फ कल्याण की ही भावना से देखते हैं। सम्बन्ध और लगाव की भावना से नहीं। सिर्फ ईश्वरीय सेवा के भाव से देखते हैं। पंच तत्वों को देखते हुए, प्रकृति को देखते हुए, प्रकृति के वश नहीं होंगे। ... अभी जो प्रकृति को वश नहीं कर सकते, वे भविष्य में सतोप्रधान प्रकृति के सुख को नहीं पा सकते।"

अ.बापदादा 13.6.73

"कोई भी कार्य करो तो कभी भी कोई हलचल के वातावरण के प्रभाव में नहीं आओ, अपना प्रभाव डालो। ... हिम्मत का बहुत महत्व है। कभी किसी भी बात में घबराओ नहीं। हजार भुजाओं वाले आप भी हो। बाप की भुजायें आपकी भी तो हुई ना।"

अ.बापदादा 10.1.90

बाबा ने अनेक बार मुरलियों में कहा है - तुम अपने योग द्वारा प्रकृति को भी पावन बनाते हो, क्लास में कोई का बुद्धियोग भटकता है तो वह वातावरण को खराब करता है, उसका पाप उन पर चढ़ जाता है।

"यहाँ मधुबन में रहते, क्लास में बैठे अगर मित्र-सम्बन्धी आदि याद आये, कहाँ बाहर बुद्धि गई तो दण्ड पड़ जायेगा। योग में न रहने से फिर वायुमण्डल को बिगाड़ देते हैं।"

सा.बाबा 16.12.06 रिवा.

## २९. कर्म और चिन्तनधारा

श्रेष्ठ कर्म के लिए श्रेष्ठ चिन्तन अति आवश्यक है और श्रेष्ठ चिन्तन से श्रेष्ठ कर्म स्वत: होते हैं। यह कर्म का विधि-विधान है। इसलिए परमात्मा पिता सदैव हमको अपने महावाक्यों में प्रेरणा देते हैं कि बच्चे सदा इस ज्ञान का चिन्तन करो, अपने आत्मिक स्वरूप का चिन्तन करो, ईश्वरीय सेवा के लिए चिन्तन करो। कभी भी पर-चिन्तन, व्यर्थ-चिन्तन, विकारी-चिन्तन में अपना समय-शक्ति-स्वांस बरबाद मत करो। इस ईश्वरीय ज्ञान, गुण, शक्तियों के चिन्तन से ही तुम्हारा जीवन श्रेष्ठ बनेगा।

"तुम्हारा नाम ही स्वदर्शन चक्रधारी। तो उसका चिन्तन चलना चाहिए। स्वदर्शन चक्र कब रुकता थोड़ेही है। तुम चेतन्य लाइट हाउस हो।... बहुतों की बुद्धि में ये बातें रहती नहीं हैं, जो उनका चिन्तन करें।" सा.बाबा 11.1.05 रिवा.

"उठते-बैठते, चलते-फिरते ज्ञान को सुमिरन करते रहो। सारा दिन बुद्धि में यही रहे कि किसको कैसे समझायें, बाप का परिचय कैसे दें।" सा.बाबा 27.11.04 रिवा.

"तुम बच्चों को हर एक बात का विचार सागर मंथन करना चाहिए।"

सा.बाबा 3.12.04 रिवा.

"बैठे-बैठे यह विचार आना चाहिए। तुम्हारी बुद्धि अब अलौकिक है और किसी मनुष्य की बुद्धि में यह बातें रमण नहीं करती होंगी। ... देवी-देवतायें भी तो नम्बरवार होंगे, एक जैसे तो हो भी न सकें क्योंकि राजधानी है ना। यह ख्यालात तुम्हारे चलते रहने चाहिए।"

सा.बाबा 1.12.04 रिवा.

"हम आत्मायें इस ड्रामा में एक्टर हैं, इनसे हम निकल नहीं सकते, मोक्ष पा नहीं सकते। बाप कहते हैं ड्रामा से कोई निकल जाये, दूसरा कोई एड हो जाये - यह हो नहीं सकता। इतना सारा ज्ञान सबकी बुद्धि में रह नहीं सकता। सारा दिन ऐसे ज्ञान में रमण करना है।"

सा.बाबा 26.4.05 रिवा.

"हमारा धन्धा ही सर्विस करना है। सर्विस करते रहेंगे तो सारा दिन विचार सागर मन्थन होता रहेगा। यह बाबा भी विचार सागर मन्थन करता होगा ना। नहीं तो यह पद कैसे पायेगा।"

सा.बाबा 25.4.05 रिवा.

"यह है याद की अग्नि, जिससे विकर्म विनाश होते हैं। एक बाप से प्रीत बुद्धि होना है। सबसे फर्स्टक्लास माशूक है, जो तुमको भी फर्स्टक्लास बनाते हैं।... यह सब विचार-सागर मन्थन करेंगे तो तुमको बड़ा मजा आयेगा।"

सा.बाबा 24.5.05 रिवा.

"खजाना अपना बन गया फिर दूसरे को देने से बढ़ता जाता है। यह हुई पीछे की बात। लेकिन पहले अपना कैसे बनायेंगे जितना-जितना जो खजाना मिलता है उसके ऊपर मनन करने से अन्दर समाता है। जो मनन करने वाले होंगे उन्हों के बोलने में भी विल पॉवर होगी।"

अ.बापदादा 30.5.71

"जो बातें मनन की जाती हैं उन को वर्णन करना सहज हो जाता है। तो मनन करते और वर्णन करते चलो। यह भी दो बातें हुई। मनन करते-करते मग्न अवस्था ऑटोमेटीकली हो जायेगी। जो मनन करना नहीं जानते वह मग्न अवस्था का भी अनुभव नहीं कर सकते।"

अ.बापदादा 24.5.71

"शुभ-चिन्तक अर्थात् ज्ञान-रत्नों से भरपूर। ... शुभ-चिन्तन वाला सदा अपने सम्पन्नता के नशे में रहता है। ... पर-चिन्तन और व्यर्थ चिन्तन वाला सदा खाली होने के कारण अपने को कमजोर अनुभव करेगा।"

अ.बापदादा 10.11.87

"शुभ-चिन्तक सदा रहें, इसका विशेष आधार है - शुभ-चिन्तन। जिसका शुभ-चिन्तन सदा रहता है, वह अवश्य ही शुभ-चिन्तक है। ... सदा शुभ-चिन्तक मणि का शुभ-चिन्तन का शक्तिशाली खजाना सदा भरपूर होगा। भरपूरता के कारण ही औरों को प्रति शुभ-चिन्तक बन सकते हैं।"

अ.बापदादा 10.11.87

"शुभ-चिन्तक ही सदा प्रसन्नता की पर्सनॉलिटी में रह सकते हैं। ... तुम रुहानी पर्सनॉलिटी वाले सिर्फ गायन योग्य नहीं लेकिन गायन-योग्य के साथ पूजन योग्य भी बनते हो।"

अ.बापदादा 10.11.87

"तुमको नॉलेज देने वाला वर्ल्ड आलमाइटी अथॉर्टी, नॉलेजफुल बाप है। ... सदैव बुद्धि में यह ज्ञान टपकता रहे तो तुम सदा खुशी में रहेंगे, फिकर से फारिग हो जायेंगे।"

सा.बाबा 3.10.01 रिवा.

"रोज़ सवेरे उठकर यह विचार सागर मन्थन करो और यही चार्ट रखो। कितना समय हमने बाप को याद किया, कितनी जंक उतरी है। ... अन्दर में यही घोटना है - हम आत्मा हैं। गाते भी हैं तुलसीदास चन्दन घिसे, तिलक देत रघुवीर। ... एकान्त में बैठकर अपने साथ बातें करो।"

सा.बाबा 14.6.06 रिवा.

"घड़ी-घड़ी यह चिन्तन करने कसे बच्चों को खुशी रहेगी और पुरुषार्थ भी करेंगे।... सारा दिन बुद्धि में विचार सागर मन्थन चलना चाहिए। जैसे गाय खाना खाकर उगारती रहती है, ऐसे उगारना है। बच्चों को अविनाशी खज़ाना मिलता है। यह है आत्माओं के लिए भोजन।"

सा.बाबा 4.9.06 रिवा.

"दान-पुण्य आदि भी यहाँ किया जाता है, सतयुग में नहीं। ... सारा मदार कर्मों पर है। ... इस चक्र का तुमको ही पता है। जो विचार सागर मंथन करते रहेंगे, उनको ही धारणा होगी। मुरली चलाने वाले का विचार सागर मंथन अच्छा चलता रहेगा।"

सा.बाबा 3.12.04 रिवा.

"बाप आया है पतितों को पावन बनाने। बाबा कहते हैं - तुम्हारा भी यही धन्धा है। रात-दिन यही चिन्तन करो कि हम पतितों को पावन बनने का रास्ता कैसे बतायें।"

सा.बाबा 16.10.06 रिवा.

Q. जीवन में परमसुख और परमानन्द को प्राप्त करने का सुगम मार्ग क्या है या सुगम पुरुषार्थ क्या है?

विश्व-नाटक की यथार्थता को जानकर भूतकाल के चिन्तन और भविष्य की चिन्ता से मुक्त होकर अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर परमपिता परमात्मा की मधुर याद में परमानन्द-परमसुख को अनुभव करना क्योंकि आत्मिक स्वरूप परमानन्दमय है और ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण और कल्याणमय है।

राग-द्वेष, ईर्ष्या, भय-चिन्ता आत्मा के बड़ शत्रु, जिनके वशीभूत आत्मा पर-चिन्तन के कारण परमात्मा पिता को याद कर नहीं सकती, ज्ञान का चिन्तन कर नहीं सकती क्योंकि इनके वशीभूत आत्मा को किसी न किसी व्यक्ति या वस्तु की याद अवश्य रहेगी। परमात्म-चिन्तन और ज्ञान-चिन्तन से विहीन आत्मा संगमयुग के परम सुख से वंचित हो जाती है और भविष्य के सुख को भी गँवा देती है। इसलिए हमारा परम कर्तव्य है कि विश्व-नाटक की यथार्थता को जानकर इनसे मुक्त हो संगमयुग के परमसुख को अनुभव करें और भविष्य के लिए भी श्रेष्ठ प्रालब्ध का संचय करें।

"अभी अपना राजभाग ले रहे हो। जैसे नाटक में एक्टर पार्ट बजाकर फिर कपड़े बदली कर अपने घर जाते हैं, वैसे तुम्हारी बुद्धि में भी है कि अब यह नाटक पूरा होने वाला है, अब अशरीरी बनकर घर वापस जाना है।... ऐसे-ऐसे अपने साथ बातें करते-करते तुम पावन बन वापस चले जायेंगे।"

सा.बाबा 8.12.06 रिवा.

## ३०. कर्म और जीवन, मृत्यु एवं जन्म

प्राय: सभी प्राणी मृत्यु से भयभीत होते हैं परन्तु मृत्यु तो आत्मा के लिए एक वरदान है, जो आत्मा को पुराने वस्त्र को छोड़कर नया वस्त्र धारण करने का साधन है। अज्ञानता के वशीभूत इस जीवन में या भूतकाल के जन्मों में किये गये कर्मों के कारण आत्मा के लिए मृत्यु वरदान के बजाये अभिषाप बन गई है। ये सृष्टि का विधि-विधान है कि जब तक आत्मा का इस देह के साथ हिसाब-किताब हैं, इस देह के सम्बन्ध से अन्य आत्माओं के साथ अच्छे-बुरे हिसाब-किताब हैं तब तक आत्मा को मृत्यु का भय और उससे अरुचि (Disinterest) रहेगा ही। ब्राह्मणों को तो कब मृत्यु से भयभीत नहीं होना चाहिए क्योंकि परमात्मा ने हमको सृष्टि के इस विधि-विधान को बता दिया है और यह जन्म और मृत्यु का विधि-विधान तो सृष्टि के आदि से चलता आया है और अनादि काल तक चलते रहने वाला है। साथ ही परमात्मा ने हमको जो श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान दिया है और हमको जो श्रेष्ठ कर्मों का विधि-विधान बताया है तथा हम जो अभी परमात्मा की श्रीमत पर श्रेष्ठ कर्म करते हैं, उनके फलस्वरूप हमारा भविष्य जन्म निश्चित ही वर्तमान जीवन से अच्छा होने वाला ही है, तो हमको भय किस बात का। जब अभी हम मृत्यु-भय से मुक्त होंगे तब ही भविष्य सतयुग में भी मृत्यु भय से मुक्त स्वेच्छा से देह का त्याग कर सकेंगे। परन्तु हमको अपने पिछले कर्मों का हिसाब-किताब चुक्तू तो करना ही होगा।

## ३१. कर्म और दया-मृत्यु

मनुष्य को भयानक दुख से मुक्ति दिलाने के लिए कई देशों में दया-मृत्यु विधान है परन्तु जब दया-मृत्यु पर विचार करते हैं तो अनेक प्रश्न उठ जाते हैं, जिन पर विचार करना भी आवश्यक है। जैसे -

Q. क्या दया-मृत्यु का विधि-विधान उचित है?

Q. क्या आत्मा दया-मृत्यु से अपने किये हुए कर्मों के दुख से बच सकती है?

Q. दया-मृत्यु देने वाले पर पाप चढ़ता है या उसका पुण्य जमा होता है?

कर्म-सिद्धान्त और पुनर्जन्म पर विश्वास करने वाले व्यक्ति दया-मृत्यु के पक्ष में नहीं हैं क्योंकि कर्म-सिद्धान्त पर विश्वास रखने वालों की मान्यता है कि हर आत्मा को अपने कर्म का फल अवश्य भोगना होता है, वह चाहे तो इस शरीर से ही भोगकर पूरा करे या पुनर्जन्म लेकर दूसरे शरीर को धारण करके पूरा करे, इसलिए दया-मृत्यु देना यथार्थ नहीं है क्योंकि

उस आत्मा को दूसरे जन्म में वह दुख भोगना ही पड़ेगा तो क्यों न वह इसी शरीर में भोगकर पूरा कर ले। इसलिए तर्क के आधार पर ही भारत में दया-मृत्यु का विधान पास नहीं हो सका है।

विश्व-नाटक के ज्ञान और कर्म के सिद्धान्त को विचार करें तो दया-मृत्यु यथार्थ नहीं है। इसलिए बाबा ने अनेक बार कहा है कि तुमको इस देह से कब तंग नहीं होना है, तुमको अपने कर्मों का हिसाब-किताब यहीं भोगकर पूरा करना है और कर्मातीत होकर घर जाना है।

विश्व-नाटक के ज्ञान के दर्पण में देखें तो यदि किसी को दया-मृत्यु दी जाती है तो वह भी उसका ड्रामा में पार्ट है और दया-मृत्यु देने वाले के साथ उसका कोई कर्मों का हिसाब-किताब है। दया-मृत्यु स्वीकार करने वाले और देने वाले दोनों का हिसाब-किताब उससे पूरा होता है, इसलिए उसमें पाप-पुण्य की बात नहीं होती है। एक बार मुरली में बाबा ने ऐसा भी कहा कि ऐसे किसी को दुख से छुड़ा देना भी अच्छा है परन्तु बाबा ये भी कहते हैं कि तुमको दुख से तंग नहीं होना है, अपने कर्मभोग को खुशी से पूरा करना है। इसलिए दोनों बातें ड्रामा और समय अनुसार सही कही जायेंगी।

## ३२. कर्म और निश्चय

कर्म इस विश्व-नाटक का मुख्य घटक है। सुखी जीवन के लिए श्रेष्ठ कर्म आवश्यक हैं और श्रेष्ठ कर्म करने के लिए कर्म का यथार्थ ज्ञान और कर्म करने की शक्ति अति आवश्यक है, जिसका ज्ञान और शक्ति का विधि-विधान परमात्मा अभी बता रहा है। जो कर्म के नियम-सिद्धान्त और विधि-विधान को जानता है और जानकर उनके विषय में पूर्ण निश्चय-बुद्धि होकर श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त होता है, वही इस विश्व-नाटक में अच्छे कर्मफल अर्थात् सुख को पाता है।

जैसा निश्चय, वैसा कर्म अवश्य होता है और जैसा कर्म होता है, वैसा कर्मफल अवश्य होता है। इसलिए हमको श्रेष्ठ फल प्राप्त करने के लिए श्रेष्ठ कर्म करना ही होगा और श्रेष्ठ कर्म के लिए कर्मों का ज्ञान हमारी बुद्धि में स्पष्ट होना अति आवश्यक है। परमात्मा हमारे लिए सुख-शान्ति कोई परमधाम से बांधकर नहीं लाता है। वह आकर हमको श्रेष्ठ कर्मों का ज्ञान देता है और श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति प्राप्त करने का रास्ता बताता है, जिस ज्ञान-योग के अभ्यास से आत्मा श्रेष्ठ कर्म करने में समर्थ होती है और उसके फल स्वरूप सुख-शान्ति प्राप्त करती है।

किसी कार्य की सफलता के लिए दृढ़ता परमावश्यक है और दृढ़ता के लिए निश्चय

परमावश्यक है। निश्चय अन्धश्रद्धा से भी हो सकता है, अनुभव के आधार पर भी हो सकता है और ज्ञान की यथार्थ समझ के आधार पर हो सकता है। जैसे भक्तों को अन्धश्रद्धा के आधार पर परमात्मा के प्रति या अपने इष्टदेव के प्रति निश्चय होता है, जिससे वे त्याग-तपस्या करते हैं और उससे उनके अनेक कार्य सिद्ध होते हैं। ज्ञान मार्ग में भी जो आत्मायें पहले आई, उनको यथार्थ ज्ञान न होते हुए भी परमात्मा की शक्ति का यथार्थ अनुभव हुआ और उस अनुभव के आधार पर उनका निश्चय दृढ़ हुआ, जिससे बाबा ने जो कहा, उसके प्रति उनका निश्चय दृढ़ रहा, उस अनुसार उन्होंने त्याग-तपस्या की और उन्होंने असम्भव लगने वाली बातों को भी सम्भव करके दिखाया। अभी के समय ज्ञान बहुत कुछ स्पष्ट हो गया है, इसलिए अभी आने वाली आत्मायें ज्ञान के आधार पर निश्चय करती हैं और जिसको ज्ञान जितना स्पष्ट होता है, उनका निश्चय उतना ही दृढ़ होता है और उसके आधार पर ही वे त्याग-तपस्या करती हैं, जिससे वे ज्ञानमार्ग का सच्चा सुख अनुभव करते हैं और उस अनुसार उनके कर्म स्वत: होते हैं, उस अनुसार संस्कार बनते हैं, जो उनके भविष्य का निर्माण करते हैं।

## निश्चयबुद्धि विजयन्ति

निश्चयबुद्धि विजयन्ति का गायन है अर्थात जो निश्चयबुद्धि होकर कर्म करता है, उसके उस कर्म की सफलता निश्चित होती है। निश्चयबुद्धि अर्थात् कर्म के विधि-विधान में निश्चय - कर्म के हिसाब-किताब, प्रकृति और ड्रामा के विधि-विधान, कर्म की सफलता के विषय में निश्चयबुद्धि, परमात्मा की शक्तियों में निश्चयबुद्धि। परमात्मा सर्वशक्तिवान है, वह हमारे कर्मों की विषय में जब चाहे तब जान सकता है।

हर आत्मा को इस सत्य पर अटल निश्चय रखकर कि हमारे कर्म का फल हमको मिलना ही है, हमारे कर्म का फल और कोई खा नहीं सकता और न ही किसी दूसरे के कर्म का फल हमको मिल सकता है, इसलिए श्रेष्ठ कर्म-फल के लिए श्रेष्ठ कर्म करना अति आवश्यक है। कर्म-सिद्धान्त का ज्ञान और उस पर निश्चय होने से आत्मा शत्रुता और मित्रता दोनों से परे हो जाती है, जिससे उसका सबके साथ समान व्यवहार स्वत: होता है।

जिस बात के विषय में निश्चय होता है, उसके लिए उसके अनुरूप संकल्प और कर्म निश्चित ही होते हैं और जब संकल्प और कर्म होते हैं तो उसका फल भी अवश्य होता है। जिसका निश्चय जितना दृढ़ होता है, संकल्प और कर्म उतने ही उसके अनुरूप होते हैं। जिसको ये निश्चय होगा कि हर आत्मा को उसके कर्मों का फल अवश्य मिलता है और उसके ही कर्म उसके लिए सुख या दुख का कारण हैं, वह श्रेष्ठ कर्म का पुरुषार्थ अवश्य करेगा और जब

कर्म श्रेष्ठ होगा तो कर्मफल भी श्रेष्ठ अवश्य होगा और जीवन में सदा सुख का अनुभव होगा।

जब परमात्मा पर निश्चय होता है कि वह हमको देखता है, जानता है तो बुरे संकल्पों और कर्मों पर नियन्त्रण रहता है और अच्छे कर्म स्वत: होते हैं। बाबा के महावाक्य हैं कि मैं बच्चों के संकल्पों को भी जानता हूँ। जो लोग परमात्मा को जानते-मानते नहीं हैं परन्तु अपने कर्म पर निश्चय और विश्वास रखते हैं और समझते हैं कि हर अच्छे-बुरे कर्म का फल अवश्य ही कर्म के अनुसार मिलता है तो उनसे भी बुरे कर्म नहीं होते हैं, अच्छे कर्म ही होते हैं। संसार में कई धर्म भी ऐसे हैं जो परमात्मा में विश्वास नहीं रखते परन्तु कर्म पर विश्वास करते हैं और श्रेष्ठ कर्मों को करके निर्वाण, मोक्ष आदि के लिए पुरुषार्थ करते हैं। परन्तु ये अवश्य ध्यान रहे कि उनकी भी न चढ़ती कला हो सकती है और न ही वे मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। चढ़ती कला और मुक्ति-जीवनमुक्ति तो परमात्मा के बताये हुए मार्ग पर चलने से ही होता है।

वर्तमान विश्व के सभी व्यक्ति स्वार्थपरता से परिपूर्ण हैं और सभी साधन नश्वर हैं, जो कर्ता के कर्म अनुसार सुखदायी-दुखदायी बनते हैं - इस अविनाशी सत्य पर निश्चय होगा तब ही उस साधन-सम्पत्ति से बुद्धियोग निकलेगा और एक बाप के साथ बुद्धियोग जुटेगा और बाप से सच्चा सुख अनुभव होगा तथा कर्मों में श्रेष्ठता आयेगी। जब कर्म श्रेष्ठ होगा तो कर्म-फल अवश्य ही श्रेष्ठ होगा अर्थात् उसके अनुसार साधन-सम्पत्ति अवश्य मिलेगी। जिनको परम-पिता परमात्मा पर, अपने कर्म और भाग्य पर निश्चय और विश्वास होता है, वे किसी अन्य सहारे का आसरा नहीं तकते। वे अपने कर्मों के बल पर जीवन को सफल बनाते हैं।

जो बात अन्तर-आत्मा सत्य समझती है और निर्णय करती है, वह करना ही चाहिए। कहना हर आत्मा का अधिकार है लेकिन सभ्यता से कहना परम कर्तव्य है। सत्यता को सभ्यता से कहने में कोई भय नहीं होना चाहिए और उसके लिए मृत्यु से भी डरना नहीं चाहिए। याद रखना है - सत्यता की परीक्षा अवश्य होती है परन्तु उसकी विजय भी अवश्य होती है। ब्रह्मा बाप की अन्तरात्मा ने जिसको स्वीकार किया उसको उन्होंने किया अवश्य और उस सत्य को कभी भी किसी के भय से छिपाया नहीं, चाहे वह शासन का भय हो, व्यक्ति का भय हो, समाज का भय हो। सदा निर्भय होकर सभ्यता से उस सत्यता को उजागर किया।

अन्य धर्मों में भी निश्चय के अनुसार कर्म के अनेक उदाहरण है। गुरु गोबिन्द सिंह के दो सुकुमार बच्चों का उदाहरण भी इतिहास में देदीप्यमान हैं, जिन्होंने सत्य और धर्म के लिए मृत्यु को हँसते हुए वरण कर लिया किन्तु असत्य के आगे सिर नहीं झुकाया। दैहिक और भौतिक स्वतन्त्रता के लिए कर्म करने वाले महाराणा प्रताप, सरदार भगतसिंह जैसे वीरों ने अपने प्राणों का हंसते हुए बलिदान किया परन्तु अपने अभीष्ट लक्ष्य और कर्तव्य-पथ से

विमुख नहीं हुए। इसलिए तुमको अपने श्रेष्ठ कर्मों से कब पीछे नहीं हटना चाहिए।

बिना किसी की परवाह किये अपना श्रेष्ठ कर्म करते रहना है और दृढ़ निश्चय रखना है कि श्रेष्ठ कर्म का फल अवश्य ही श्रेष्ठ होगा।

"आज से अपने में देखो। दूसरा भी करता, तीसरा भी करता है - इसे मुझे नहीं देखना है। ... अच्छाई की रेस करो, बुराई की रीस नहीं करो। नहीं तो धोखा खा लेंगे। ... महारथियों का निश्चय का फाउण्डेशन अटूट-अचल है, उसकी उनको एक्स्ट्रा दुआयें मिलती हैं।"

अ.बापदादा 3.4.97

"जब जीवनमुक्त का अभी फाउण्डेशन पक्का होगा, तब तो वह 21 जन्म चलेगा। जितना अपने में निश्चय रखेंगे, उतना ही नशा होगा। बाप में निश्चय, आप में निश्चय और फिर ड्रामा में भी निश्चय। तीनों निश्चय में पास होना।"

अ.बापदादा 13.3.90 पार्टी 2

## निश्चय और प्रमाण एवं उसका कर्म से सम्बन्ध

किसी बात की सत्यता को सिद्ध करने के लिए उसकी प्रमाणिकता की आवश्यकता होती है, जिसके आधार पर उसकी सत्यता मान्य होती है। मुख्यता किसी बात की प्रमाणिकता को सिद्ध करने के लिए आध्यात्म मार्ग में चार प्रकार के प्रमाण बताये गये हैं। प्रत्यक्ष प्रमाण, अनुभव प्रमाण, अनुमान प्रमाण और आप्त प्रमाण अर्थात् कही हुई या लिखी हुई बात के आधार पर प्रमाणित करना।

प्रथम है प्रत्यक्ष प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष में किसी बात को देखकर उसको मानना, उस पर निश्चय करना।

दूसरा है अनुभव प्रमाण अर्थात् किसी बात के विषय में अनुभव करके उसको मानना। जैसे पानी की मिठास को चखकर उसमें चीनी है उसको मानना, निश्चय करना।

तीसरा अनुमान प्रमाण अर्थात् अनुमान के आधार पर मानना, निश्चय करना जैसे दूर से धुयें को देखकर आग की विद्यता का पता चलता है और उसके आधार निश्चय करना।

चौथा कही, सुनी या लिखी हुई बात के आधार पर किसी बात की सत्यता को मानना और निश्चय करना। जैसे शास्त्रों में अनेक प्रकार की बातें लिखी हुई हैं, उनको लोग मानते आते हैं क्योंकि वे धर्म शास्त्रों में लिखी हैं, इसलिए उनको लोग सत्य मान लेते हैं या किसी बड़े विद्वान ने कोई बात कह दी तो भी उसे लोग मान लेते हैं भले ही वह बात उसी रूप में सही हो या न हो।

बाबा ने जो हमको ज्ञान दिया है, उनकी सत्यता को स्वीकार करने में या निश्चय करने में ये चारो ही प्रमाण काम में आते हैं क्योंकि बाबा ने जो ज्ञान दिया है उनमें अनेक बातें तो हम प्रत्यक्ष में देखते हैं, कुछ का अनुभव करते हैं, कुछ को अनुमान के आधार पर मानते हैं और कुछ की सत्यता को बाबा ने कहा है, इसलिए सत्य मानते हैं क्योंकि बाबा के द्वारा कही हुई सभी बातें हमको प्रत्यक्ष में सत्य देखने में आती, अनुभव होती हैं तो जो बातें अभी हम अनुभव में नहीं कर रहे हैं या जो भविष्य में होने वाली हैं, वे भी अवश्य ही सत्य होंगी।

कहा गया है प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती है और अनुभव को भी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है क्योंकि जिस बात का अनुभव कर लिया, वह तो हमारे लिए स्वत: सिद्ध है ही। वास्तव में प्रत्यक्ष और अनुभव की हुई बात को मानने या निश्चय करने के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है, प्रमाण की आवश्यकता अनुमान और कही-सुनी-लिखी हुई बात की सत्यता को जानने और निश्चय के लिए ही प्रमाण की आवश्यकता होती है। जैसा मनुष्य का निश्चय होता है, वैसे कर्म अवश्य होते हैं।

कर्म के विषय में बाबा ने अनेक प्रकार के नियम और सिद्धान्तों के विषय में हमको ज्ञान दिया है, जो हमारे जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए परमावश्यक हैं। उन नियम-सिद्धान्तों पर, विधि-विधानों पर हमको जितना ही निश्चय होगा, उतना ही उनकी जीवन में धारणा होगी और धारणा के अनुसार हमारे कर्म-संस्कार होंगे। उन नियम और सिद्धान्तों के विषय में मनन-चिन्तन के द्वारा उनकी सत्यता को जाना और अनुभव किया जा सकता है। जिस बात का अनुभव हो जाता है, उसके विषय में निश्चय सहज हो जाता है और जैसा निश्चय वैसा कर्म भी स्वत: होता है और जैसा कर्म वैसा फल मिलता ही है।

परमात्मा जो भी ज्ञान दिया है, वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमारे कर्मों से सम्बन्धित है ही है और उनके महावाक्य ही उसकी श्रेष्ठता का प्रमाण हैं। परमात्मा के महावाक्यों की सत्यता को सिद्ध करने के लिए किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं है, वे स्वत: ही प्रमाण हैं। जिसको उनकी प्रमाणिकता पर निश्चय होता है, उसके कर्म अवश्य ही उसके अनुरूप होते हैं अर्थात् श्रेष्ठ होते हैं।

"कोई भी कर्म का फल निष्फल हो ही नहीं सकता, क्योंकि बाप की याद में करते हो ना! याद में किये हुए कर्म का फल सदा श्रेष्ठ रहता है, इसलिए कभी भी दिल-शिकस्त नहीं बनना।"

अ.बापदादा 14.1.79 पार्टी

"जो बात अच्छी न लगे वह करनी नहीं चाहिए। अच्छे-बुरे को तो अब समझते हो, आगे नहीं समझते थे।... अब अच्छी रीति पुरुषार्थ कर कर्मातीत बनना है।"

सा.बाबा 11.12.2000 रिवा.

"बाप (परमात्मा) कर्म-अकर्म-विकर्म की गुह्य गति समझाते हैं। अगर बाप की श्रीमत पर चलते रहें तो कब विकर्म न हो।" सा.बाबा 1.10.97 रिवा.

"दिव्य बुद्धि की पहले परख - वह सदा बाप को, आपको और हर ब्राह्मण आत्मा को जो है, जैसा है वैसे जानकर ... जैसा है वैसे जानकर आगे बढ़ाना। यह है दिव्य बुद्धि की पहली परख। ... दिव्य बुद्धि अर्थात् होली हंस बुद्धि ... दिव्य बुद्धिबल द्वारा ही बाप से सर्वशक्तियां कैच कर सकते हो ... दिव्य बुद्धि द्वारा परमात्म टचिंग अनुभव कर हर कर्म में सफलता का अनुभव कर सकते हो।" अ.बापदादा 1.3.90

## 33. कर्म के सम्बन्ध में विचारणीय प्रश्न और सम्भावित उत्तर

Q. क्या परमात्मा आत्माओं को उनके अच्छे-बुरे कर्मों का फल देता है अर्थात् आत्माओं को उनके कर्म केफल में परमात्मा का सीधा सम्बन्ध रहता है ? यदि देता है तो किस रूप में और कैसे ?

नहीं, परमात्मा तो कर्म के विधि-विधान का ज्ञाता है, जो आत्माओं को बताता है। कर्म का फल हर आत्मा को विश्व-नाटक के विधि-विधान अनुसार प्रकृति और आत्माओं द्वारा उनके साथ के हिसाब-किताब के अनुसार स्वत: मिलता है।

Q. क्या किसी आत्मा के किये हुए कर्म का फल किसी दूसरी आत्मा को मिल सकता है ?

नहीं, हर आत्मा को अपने ही अच्छे या बुरे कर्मों का अच्छा या बुरा फल मिलता है।

Q. क्या कर्म का फल आत्माओं को धर्मराज पुरी में मिलता है ? यदि हाँ तो वह धर्मराज पुरी कहाँ है और कैसे फल मिलता है ?

इस सृष्टि में अर्थात् तीनों लोकों में अलग से कोई धर्मराजपुरी नहीं है परन्तु विश्व-नाटक के विधि-विधान पूर्ण न्यायपूर्ण हैं, इसलिए हर आत्मा को अपने कर्मों का फल यहाँ ही स्थूल वा सूक्ष्म देह के साथ भोगना ही पड़ता है। विश्व नवनिर्माण के लिए ब्रह्मा तन में पधारे परमात्मा का स्वरूप ही अन्त समय धर्मराज का हो जाता है, जिसका साक्षात्कार आत्माओं को अपने कर्मानुसार अन्त समय होता है, वे ही धर्मराज की सजायें हैं। जैसे रामायण में राजा दशरथ को अन्त समय श्रृवणकुमार की मृत्यु के सम्बन्ध हुआ।

Q. परमानन्दमय जीवन का राज़ क्या है अर्थात् परमानन्दमय जीवन की अनुभूति केसे हो ?

आत्मा, परमात्मा और विश्व-नाटक का यथार्थ ज्ञान, उसका अनुभव और उस पर निश्चय ही परमानन्दमय जीवन की अनुभूति का यथार्थ मार्ग है। आत्मा का ज्ञान अर्थात् आत्मा के ज्ञान,

गुण-शक्तियों, पार्ट का, परस्पर हिसाब-किताब का ज्ञान और अनुभव। परमात्मा का ज्ञान अर्थात् परमात्मा के ज्ञान, गुण-शक्तियों, कर्तव्य का ज्ञान और अनुभव। विश्व-नाटक का ज्ञान अर्थात् विश्व-नाटक के गुण-धर्मों, विधि-विधानों, विश्व-नाटक में कर्म के विधि-विधान का ज्ञान, अनुभव और निश्चय। इन सब सत्यों का ज्ञान होगा, अनुभव होगा, जीवन में धारणा होगी तो ये जीवन अवश्य ही परमानन्दमय अनुभव होगा और अपने अधिकार और कर्तव्यों को समझकर उसके अनुरूप कर्म अवश्य होगा और जब कर्म होगा तो उसका फल भी अवश्य होगा।

"चेक करो सफलता स्वरूप कहाँ तक बने हैं? अगर सफलता में परसेन्टेज है तो उसका कारण निश्चय में भी परसेन्टेज है। निश्चय सिर्फ बाप में है, यह तो बहुत अच्छा है लेकिन निश्चयबुद्धि अर्थात् बाप में निश्चय, स्व में निश्चय, ड्रामा में निश्चय और साथ-साथ परिवार में भी निश्चय। इन चारो निश्चय के आधार से सफलता सहज और स्वत: है।" (वास्तव में सारा विश्व एक परिवार है क्योंकि सर्वात्मायें एक बाप के बच्चे हैं)

अ.बापदादा 14.11.02

Q. कृत्य-अकृत्य का निर्णय आत्मा कैसे करे अर्थात् श्रेष्ठ कर्म क्या है और विकर्म क्या है, उसका निर्णय आत्मा कैसे करे?

आत्मिक स्वरूप में स्थित आत्मा को कृत्य का संकल्प स्वत: आता है और उसकी शुभ में अभिरुचि और अशुभ में अरुचि स्वत: होती है। जैसा आत्मा अपने लिए दूसरों से व्यवहार चाहती है, वैसा ही उसको दूसरों के साथ करना चाहिए, वही उसके लिए कृत्य है, श्रेष्ठ कर्म है।

Q. आत्मा पर पापों का बोझा कितने जन्मों का है और जंक कितने जन्मों की चढ़ी है?

आत्मा पर पापों का बोझा 63 जन्मों अर्थात् द्वापर युग से पापों का बोझा चढ़ना आरम्भ हुआ परन्तु जंक तो सतयुग के आदि जन्म से ही जब से आत्मा इस धरा पर पार्ट बजाने आई और अपने असली स्वरूप को भूलकर देह-भान में आई तब से ही जंक चढ़ना आरम्भ हो जाती है, जिससे आत्मा की कलायें गिरना आरम्भ हो जाती हैं। सतयुग के आदि से ही आत्मा की कलायें गिरना आरम्भ हो गई परन्तु आत्मिक शक्ति संचित होने के कारण दो युगों तक पाप-कर्म नहीं हुए। पाप-कर्म द्वापर से होते हैं।

जंक चढ़ने से आत्मा को दुख नहीं होता है। दुख तब होता है जब आत्मा पर इतनी जंक चढ़ जाती है अर्थात् जंक के कारण आत्मा अपने स्वरूप और अपनी शक्तियों को भूलकर देहाभिमान के वशीभूत होकर विकारों के वशीभूत होकर पाप-कर्मों में प्रवृत्त हो जाती है, तो उन पाप कर्मों के वशीभूत आत्मा को दुख होता है। इस सम्बन्ध में बाबा ने भी मुरलियों

में कहा है - आत्मा को देहाभिमान के कारण दुख नहीं होता है, दुख तब होता है, जब आत्मा देहाभिमान के वश पाप-कर्म करती है अर्थात् उन पाप-कर्मो के फलस्वरूप दुख होता है।

जंक भी आत्मा को उड़ती कला का अनुभव नहीं करने देगी अर्थात जंक चढ़ी हुई आत्मा भी उड़ नहीं सकती अर्थात् वह अपने को देह से न्यारी स्थिति में स्थित होकर अतीन्द्रिय सुख का अनुभव नहीं कर सकती।

"राग-द्वेष आदि किसी कारण से बुद्धि में मेरे और बाप के बीच में कोई व्यक्ति या वस्तु होगी तो वह कब बॉडीलेस बन नहीं सकेंगे।" दादी जानकी 9.11.06 मधुबन

Q. हमारे सिर पर पापों का बोझा कितना है, उसकी कसौटी क्या है?

"जन्म-जन्मान्तर का पापों का बोझा सिर पर रहा हुआ है, यह कैसे पता पड़े। ... देखना है - बाप से हमारी दिल लगती है या देहधारियों से। अगर कर्म सम्बन्धियों आदि की याद आती है तो समझना चाहिए हमारे विकर्म बहुत हैं। ... बाप को याद कर अपने सिर से पापों का बोझा उतारना है।" सा.बाबा 30.4.05 रिवा.

"अभी तो अनेक आत्माओं के अनेक जन्मों के बने हुए खाते, जिसको पाप-कर्मों का खाता कहा जाता है, उसको भस्म कराने के आप निमित्त हो। जो अन्य के व्यर्थ खाते को भस्म कराने वाले हैं, वे स्वयं अपना ऐसा खाता बना नहीं सकते। यह तो पुराने खाते हैं। आप तो पुराने खाते समाप्त कर नया जन्म, नये खाते बनाने वाले हो। पुराने खाते सब खत्म हो रहे हैं - ऐसा अनुभव होता है?" अ.बापदादा 4.2.75

"बुद्धि को अपनी तरफ क्या खींचता है, क्यों खींचता है? बोझा है कोई, जो अपनी तरफ खींचता है? हल्की चीज कभी भी नीचे नहीं आयेगी, वह चढ़ती कला में ही होगी। किसी भी प्रकार का बोझ है तो कितना भी ऊपर करना चाहें तो ऊपर नहीं जायेगा, बल्कि नीचे ही आयेगा। ऐसे ही सारे दिन में मन्सा, वाचा, कमर्णा में, सम्पर्क और सेवा - इन बातों से चेक करो।" अ.बापदादा 4.2.75

Q. आत्मा में खाद क्या पड़ती है और कैसे पड़ती है?

(अज्ञानता ही खाद है, अज्ञानतावश आत्मा देहाभिमान के वशीभूत विकर्म करती और विकर्मों के वशीभूत दुख भोगती)

ये देह आत्मा का वस्त्र है। आत्मा इस देह में भृकुटी में रहती है। आत्मा के देह में प्रवेश होने से ही आत्मा की चेतनता सिद्ध होती है। देह में आने से ही आत्मा पर अज्ञानता के वशीभूत देहाभिमान की कट चढ़ती है। जैसी आत्मा की स्थिति होती है, वैसा ही आत्मा को शरीर मिलता है। जिसको बाबा कहते हैं जैसा आसामी, उस अनुसार ही उसका फर्नीचर होता है।

"सिर्फ घर को याद करेंगे तो पाप विनाश नहीं होंगे। बाप को याद करेंगे तो पाप विनाश हो और तुम अपने घर चले जायेंगे।" सा.बाबा 6.5.05 रिवा.

Q. पाप नाश होने की प्रक्रिया क्या है ?

अपने को आत्मा समझ बाप को याद करने से देहाभिमान की जो कट आत्मा पर चढ़ी है, वह खत्म होती है और योग तथा कर्मभोग से पापों का बोझा कम होता है। वास्तव में योग भी एक प्रकार भोग ही है, जो स्वेच्छा से भोगा जाता है और योग में रहने से नये पाप नहीं होते हैं।

"दूसरों को देना, वह खर्चा नहीं है। यह तो एक देना फिर लाख पाना है। ...जब अपने विघ्नों के प्रति शक्ति का प्रयोग करते हो, वह होता है खर्च। ...अब बचत की स्कीम बनाओ। खर्चे को फुल स्टॉप लगाओ। अभी तो देते रहो, अभी लेने को कुछ रहा है क्या ? अगर रहा हुआ है तो सिद्ध होता है कि बाप ने पूरा वर्सा दिया नहीं है। बाप ने अपने पास कुछ रखा नहीं है। वह तो एक सेकेण्ड में ही पूरा वर्सा दे देते हैं। जो कुछ लेने को रहता ही नहीं है।"

अ.बापदादा 8.7.73

"अभी के समय प्रमाण मास्टर रचयिता को कौनसा पोतामेल देखना है ? क्या-क्या गलती की - यह तो बचपन का पोतामेल है ... आप मास्टर रचयिता हर शक्ति को सामने रखते हुए यह पोतामेल देखो कि आज के दिन सर्व शक्तियों में से कौनसी शक्ति और कितनी परसेन्टेज में जमा की।" अ.बापदादा 8.7.73

"ऐसे ही स्थूल धन भी अगर ईश्वरीय कार्य में, हर आत्मा के कल्याण के कार्य में वा अपनी उन्नति के कार्य में न लगाकर अन्य कोई स्थूल कार्य में लगाया तो व्यर्थ लगाया ना।... यज्ञ निवासियों के लिए यज्ञ की सेवा, यज्ञ की वस्तु की एकानॉमी रुपी धन स्थूल धन से भी ज्यादा कमाई का साधन है।" अ.बापदादा 15.3.72

Q. सृष्टि-चक्र और जीवन में सुख-दुख, पुण्य-पाप के संचित का क्रम क्या चलता है ?

| सतयुग-त्रेतायुग में | द्वापर-कलियुग में | संगमयुग पर |
|---|---|---|
| पुण्य - सुख | पुण्य - सुख + - पाप और दुख, पाप ही + होता | पाप - दुख + - पुण्य-सुख पुण्य + होता |
| नेचुरल | नेचुरल | पुरुषार्थ से |

Q. क्या वहाँ ऐसे समझेंगे कि अगले जन्म के कर्मों के अनुसार राजा, प्रजा, दास-दासी बने हैं ? यदि वहाँ राजा-प्रजा, दास-दासी, साहूकार-गरीब की फीलिंग होगी और कर्मों का ये ज्ञान होगा तो दुख की फीलिंग क्यों नहीं होगी ?

सतयुग में सब में आत्मिक प्यार (Love affection) होगा, जिससे वहाँ राजा-प्रजा, दास-दासी, साहूकार-गरीब की फीलिंग नहीं होगी और न ये ज्ञान होगा कि ये पद हमको अपने पूर्व जन्म में किये गये कर्मों के फलस्वरूप मिला है। ये सब फीलिंग यहाँ संगमयुग पर ही अन्त में होगी।

"सर्विस नहीं करेंगे तो मिलेगा क्या ? कोई बादशाह बनते हैं तो जरूर कोई अच्छे कर्म किये हैं। यह तो कोई भी समझ सकते हैं। यह राजा-रानी हैं, हम दास-दासियाँ हैं तो जरूर आगे जन्म में कर्म ऐसे किये हैं। बुरे कर्म करने से बुरा जन्म मिलता है। कर्मों की गति तो चलती रहती है। अब बाप तुमको अच्छे कर्म करना सिखलाते हैं। वहाँ भी ऐसे जरूर समझेंगे कि अगले जन्म के कर्मों के अनुसार ऐसे बने हैं। बाकी क्या कर्म किये हैं, वह नहीं जानेंगे।... पिछाड़ी में सबको साक्षात्कार होगा।" सा.बाबा 2.3.04 रिवा.

Q. परमात्मा पिता से किये गये पापों की कहाँ तक माफी हो सकती है और किस प्रकार के पापों से माफी हो सकती है ?

परमात्मा पिता को अपने इस जन्म के किये गये पापों को बता देने से वे पाप जो दिल में खाते हैं, वह मिट फीलिंग मिट जाती है, जिससे आगे का पुरुषार्थ सहज हो जाता है। जिन पापों का दूसरी आत्माओं के साथ सम्बन्ध है, हिसाब-किताब है, वह हिसाब-किताब खत्म नहीं हो सकता। वह तो पूरा करना ही होगा परन्तु परमात्मा को बता देने से हल्के होकर यथार्थ पुरुषार्थ करने से उसकी महसूसता कम हो जाती है।

"अगर कोई भी कमजोर वा पतित वायुमण्डल का वर्णन भी करते हैं तो यह भी पाप है क्योंकि उस समय बाप को भूल जाते हैं। ...वायुमण्डल का वर्णन करना - यह भी व्यर्थ हुआ ना। जहां व्यर्थ है वहां समर्थ की स्मृति नहीं। ...कितना भी कोई माफी ले लेवे लेकिन जो कोई पाप कर्म वा व्यर्थ कर्म भी हुआ तो उसका निशान मिटता नहीं। निशान पड़ ही जाता है।"

अ.बापदादा 10.5.72

Q. ड्रामा में पार्ट नहीं है और चाहते हुए भी न कर सके तो दोनों में अन्तर क्या है ?

ड्रामा में पार्ट ही नहीं है, उसके लिए कब संकल्प नहीं उठेगा, चाहना नहीं होगी और जिस कार्य की चाहना होती है, इसलिए उसके लिए दुख नहीं होता है परन्तु चाहते हुए अर्थात इच्छा होते हुए भी कर नहीं पाते तो वह कर्मो का हिसाब-किताब है, आत्मा पर पापों का बोझा है, जिसके कारण आत्मा को दुख होता है।

"तुम जीते जी देह का भान छोड़ो, मुझे याद करो।... जो अच्छी रीति पढ़ेंगे वे जरूर तीखे जायेंगे, ऊंच पद पायेंगे।... कहते - बाबा मेरी बुद्धि का ताला खोलो। बाप कहते -मैं बुद्धि का

ताला खोलने ही आया हूँ। परन्तु तुम्हारे कर्म ही ऐसे हैं, जो बुद्धि का ताला नहीं खुलता।"

सा.बाबा 15.9.06 रिवा.

Q. पुरुषोत्तम संगमयुग पर कर्म का फल विशेष क्यों होता है ?

1. ज्ञान सागर परमात्मा मिले कर्मों का यथार्थ ज्ञान होने के कारण संगमयुग किये गये कर्मों का फल विशेष होता है अर्थात् एक कई गुणा अधिक होता है। संगमयुग पर अच्छे कर्म का भी एक का सौगुणा फल मिलता है और अगर बुरा करते तो उसका भी एक का सौगुणा दण्ड अर्थात् बुरा फल मिलता है। दुनिया में कानून को जानने वाला कानून को तोड़ता है तो उसको विशेष दण्ड मिलता है।

2. संगमयुग पर हम निमित्त बनते हैं तो हम जो कर्म करते हैं, उसको देखकर और भी फॉलो करते हैं तो उसका अंश भी हमको मिलता है और गलत करते हैं तो कट भी होता है।

3. संगमयुग पर हमको परमात्मा के द्वारा कर्म के सभी विधि-विधानों का ज्ञान मिला हुआ है, इसलिए हमारा उत्तरदायित्व बनता है कि हम उनको समझकर अच्छे कर्म करें। यदि अच्छे कर्म नहीं करते या उन विधि-विधानों को समझने का पुरुषार्थ नहीं करते तो भी हम उस उत्तरदायित्व से छूट नहीं सकते।

"संगमयुग है ही एक का पदमगुणा जमा करने का युग। ... कैसा भी कमजोर तन हो, रोगी हो लेकिन वाचा-कर्मणा नहीं तो मन्सा सेवा अन्तिम घड़ी तक भी कर सकते हो।... कैसे भी बीमार हो अगर दिव्य-बुद्धि सालिम है तो अन्त घड़ी तक भी सेवा कर सकते हैं।"

अ.बापदादा 18.2.85

Q. क्या मनुष्यात्मा अपने कर्मों का फल भोगने के लिए अन्य योनियों में जन्म लेती है ? क्या अन्य योनियां भोग योनियां हैं ?

नहीं, हर योनि की आत्मा अपने स्तर पर कर्म करती है और उसी योनि में अपने कर्मों का फल भोगती है। मनुष्य सबसे बुद्धिमान और चिन्तनशील प्राणी है और जो जितना अधिक बुद्धिमान और चिन्तनशील होता है, उसको सुख और दुख दोनों की ही महसूसता अधिक होती है, इसलिए मनुष्यात्मा अपने कर्मों का फल मनुष्य योनि में ही भोगती है।

Q. क्या लिंग परिवर्तन होता है ?

लिंग परिवर्तन की क्रिया असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है क्योंकि आत्मा के पुनर्जन्म लेने में उसके पूर्व जन्म के कर्म-संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है और ये कर्म-संस्कारों में मूलभूत परिवर्तन एकदम होना असम्भव ही है, इसलिए लिंग परिवर्तन की क्रिया भी बहुत कठिन है परन्तु ज्ञान सागर परमात्मा ने कहा है तो उसमें सम्भावना अवश्य है परन्तु वह कैसे

और किन परिस्थितियों में होती है, वह विचारणीय है।

Q. यथार्थ जीवन क्या है? जीवन क्या है और उसका कर्म से क्या सम्बन्ध है?

देह में रहते देह से न्यारी स्थिति, कर्मातीत स्थिति के अनुभव में रहना ही यथार्थ जीवन है। इसका ही गायन होता है। इस स्थिति वाला ही इस विश्व-नाटक को साक्षी होकर देखते हुए परमानन्द, अतीन्द्रिय सुख के अनुभव में रहेगा। परन्तु यह भी कटु सत्य है कि इस जीवन का अस्तित्व कर्म के फलस्वरूप कर्म-सम्बन्ध और कर्म-बन्धन का खेल खेलने के लिए है, इसलिए कर्म-सम्बन्ध और कर्म-बन्धन से मुक्त स्थिति वाला ही उसका यथार्थ अनुभव कर सकता है। कर्मातीत, पवित्र, बीजरूप स्थिति... एक ही अवस्था के पर्यायवाची शब्द हैं, उस स्थिति को धारण करने के लिए आत्मा की बोझा-मुक्त अर्थात् कर्मातीत स्थिति चाहिए। बोझा अर्थात् आत्मा पर देहाभिमान की जंक प्लस, उसके पाप-पुण्य का फल। इसलिए योग से जंक को खत्म करना और भोग (सुख और दुख दोनों का) भोगकर पाप-पुण्य का हिसाब-किताब खत्म करना। पाप-पुण्य दोनों का ही हिसाब-किताब आत्मा को अतीन्द्रिय सुख को अनुभव करने नहीं देगा। इसलिए बाबा कहता है देह-भान को भी खत्म करो, कर्म-बन्धन के साथ-साथ कर्म-सम्बन्ध भी आत्मा को आकर्षित नहीं करें, खींचे नहीं, साधन साधना में बाधक नहीं बनें। देही-अभिमानी स्थिति अर्थात् आत्मिक स्वरूप परमानन्दमय है, जिसके लिए किसी साधन-सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं है। उसके लिए आवश्यकता है यथार्थ ज्ञान की धारणा और सतत अभ्यास से आत्मा के कर्म-बन्धन और कर्म-सम्बन्ध दोनों के हिसाब-किताब से मुक्त होने की।

कर्मातीत स्थिति, पवित्र स्थिति स्वयं को भी अतीन्द्रिय सुख की अनुभूति कराती है और दूसरों के लिए भी मार्ग-दर्शन करती और उनको भी उसका अनुभव करने में सहयोग करती है, उनको भी अनुभव कराती है। जैसे ब्रह्मा बाबा का जीवन।

Q. विकर्मो अर्थात् पाप कर्मो का कारण क्या है अर्थात् मनुष्य विकर्म क्यों करता है और उसका निवारण क्या है?

अज्ञानता जनित देहाभिमान के वशीभूत भय विकर्मों का मूल कारण है। यथार्थ ज्ञान ही विकर्मों से मुक्ति का एकमात्र साधन है। भय अनेक प्रकार का होता है। यथा अन्धकारमय भविष्य का भय, मृत्यु का भय, कर्मभोग का भय, कर्मभोग के समय कौन मदद करेगा, उसका भय, मान-प्रतिष्ठा का भय, शत्रुओं का भय आदि। वास्तविकता को देखें तो ये सब विकर्मो का कारण है और ये सब बातें विकर्मों के फलस्वरूप ही होती हैं। यज्ञ में समर्पित होकर और बाबा का बच्चों को भी यह भय भयभीत करता है, जिससे वे भी अनेक प्रकार के विकर्म कर

बैठते हैं। यथा असुरक्षा की भावना से प्रेरित यज्ञ में रहकर यज्ञ का पैसा बाहर जमा करना, सर्वज्ञ-सर्वशक्तिवान परमात्मा का बनकर अल्पज्ञ आत्माओं से आशा रखना, उनके साथ सम्बन्ध स्थापित करना। वास्तव में परमात्मा का बनकर अल्पज्ञ आत्माओं से आशा रखना भी एक विकर्म है क्योंकि उससे परमात्मा और ज्ञान की निन्दा कराते हैं। यथार्थ सत्य को देखा जाये तो जो ड्रामा में पहले हुआ होगा, वही होगा, हमारे शुभ कर्मों का संचित हमको यत्र-तत्र-सर्वत्र मदद करता है। इस सत्य को जानकर विकर्मों से विमुक्त होकर सुकर्मों में प्रवृत्त होना ही उज्ज्वल-सुखमय भविष्य का एकमात्र साधन है। परमात्मा भी हमको मदद तब ही करता है, जब हम उसकी आज्ञा पर चलकर सुकर्म करते हैं।

Q. सबसे अच्छी स्थिति क्या है ?

विश्व-नाटक की यथार्थता को समझकर देह में रहते देह से न्यारी स्थिति परमानन्दमय है, जो जीवन की सर्वश्रेष्ठ स्थिति है, जिसकी अनुभूति पुरुषोत्तम संगमयुग पर ही सम्भव है।

Q. विकर्मों और व्यर्थ कर्मों के भोग का विधि-विधान क्या है ?

विकर्मों का फल तो आत्मा दुख-अशान्ति के रूप में भोगती ही है परन्तु व्यर्थ कर्मों और साधारण कर्मों का फल भी आत्मा को सजाओं के रूप में भोगना ही पड़ता है क्योंकि कर्म-फल के विधि-विधान के अनुसार कोई भी कर्म निष्फल नहीं होता है। आत्मा जो साधारण या व्यर्थ कर्म में अपना समय, संकल्प और शक्ति लगाती है, उसके फल स्वरूप आत्मा संगमयुग के परमानन्द से वंचित हो जाती है और उस समय, संकल्प, शक्ति से जो भविष्य फल बनने वाला है, वह भी नहीं बनता है। साधारण और व्यर्थ कर्मों के फलस्वरूप भी आत्मा को कुछ न कुछ दैहिक व्याधि आती ही है। आत्मा जो विकर्म करती, उससे दूसरी आत्मायें भी प्रभावित होती है, उसके फलस्वरूप आत्मा को गहरा दुख-अशान्ति भोगनी पड़ती और उसके निदान के लिए अन्य आत्माओं से भी सम्बन्ध जोड़कर हिसाब-किताब चुक्ता करना पड़ता है।

Q. श्रीकृष्ण के जन्म होने के बाद विनाश होगा या विनाश होने के बाद श्रीकृष्ण का जन्म होगा ?

विवेक कहता है कि विनाश के बाद श्रीकृष्ण का जन्म होना चाहिए या विनाश और जन्म साथ होना चाहिए क्योंकि बाबा के महावाक्य हैं कि देवतायें पतित दुनिया में पैर नहीं रख सकते और श्रीकृष्ण की आत्मा को भी परमधाम घर वापस जाकर सतयुग में जन्म लेना है तो विनाश के समय जब परमधाम का गेट खुलेगा तब ही श्रीकृष्ण की आत्मा परमधाम जाकर फिर आकर ही जन्म लेगी।

Q. विनाश के समय बचने वाली आत्माओं की स्थिति कैसी होगी या विनाश के समय स्थिति

कैसी होगी ?

अभी बाबा जो देह से न्यारे निर्संकल्प होकर बिन्दु रूप में स्थित होने का अभ्यास कराता है, उस समय वे आत्मायें उसी निर्संकल्प स्थिति में स्थित हो जायेंगी और बहुत काल तक वह समाधि की स्थिति रहेगी, जिसके बीच में महा-विनाश की प्रक्रिया पूरी होगी और बहुत काल तक निर्संकल्प स्थिति में रहने के कारण उनको पूर्व का सब कुछ भूल जायेगा, भूख-प्यास का प्रभाव भी नाममात्र रहेगा, उनको वह निर्संकल्प स्थिति ही खीचती रहेगी और वे उस स्थिति में परिवर्तित दुनिया को देखती रहेंगी, जो बड़ी शान्त और सुखमय दिखाई देगी।

Q. योग से हेल्थ मिलती है - कैसे ?

"योगी आत्मा के जीवन में भल कमभोग तो आता है परन्तु योगयुक्त आत्मा उससे जल्दी छूट जाता है और उसको उस कर्मभोग का दुख-दर्द कम फील होता है परन्तु जो योगयुक्त नहीं होता, उसकी बीमारी बहुत समय तक चलती है और उसको दुख-दर्द अधिक फील होता है।"

दादी जानकी 9.1.07 मधुबन

Q. विचार करो - क्या तुम भविष्य के दिलासे पर जी रहे हो या वर्तमान जीवन की परम प्राप्तियों की अनुभूतियों में जी रहे हो ?

वर्तमान जीवन भविष्य पद्मापदम गुणा श्रेष्ठ है और सारे कल्प का फूल है। इस जीवन जैसा सुख त्रिलोक्य में कहाँ भी नहीं है। इस सत्य को जानकर इस जीवन का परम सुख अनुभव करो और कराओ। आत्मिक स्वरूप परमानन्दमय है, जिसका यथार्थ ज्ञान और अनुभव अभी ही हो सकता है। इस विश्व-नाटक के विधि-विधान को जानकर कर्म करने वाले को ही परम सुख की अनुभूति होती है।

Q. क्या किसी दुर्घटना, जैसे किसी हिंसक जीव द्वारा किसको घायल कर देना या मार देना आदि को सुनकर या देखकर हमको भयभीत होकर अपने यथार्थ पुरुषार्थ या पथ से विचलित होना चाहिए ?

वास्तविकता को विचार करें तो हमको अपने अभीष्ट पथ अहिंसा से विचलित नहीं होना चाहिए और अपने सिद्धान्त पर अटल रहना चाहिए। हमको हर बात पॉजिटिव पथ को विचार करना चाहिए।

1. योग और शुभ भावना, शुभ कामना का प्रभाव जड़, जंगम और चेतन पर अवश्य पड़ता है,

2. हमारा शुभ कर्म का खाता संचित है तो कोई भी हमको दुख नहीं दे सकता है,

3. ड्रामा के ज्ञान को भी विचार करें तो हमको कोई हिंसक वृत्ति या संकल्प को करने की

आवश्यकता नहीं है।

अब एक ही बात रहती है कि हम भी हिंसक वृत्ति को धारण कर अपनी सुरक्षा का विचार करें, उसके लिए अस्त्र-शस्त्र को धारण करें परन्तु अनेक बातों को देखें तो वह भी कारगर नहीं होती है क्योंकि समय पर यथार्थ बुद्धि ही काम करती है।

Q. नम्बरवार महल बनाने का आधार क्या होगा ?

# विविधि बिन्दु

## क्रिया-प्रतिक्रिया का सिद्धान्त

इस विश्व-नाटक के विधि-विधान के अनुसार हर क्रिया की प्रतिक्रिया अवश्य होती है और क्रिया-प्रतिक्रिया के आधार पर ये विश्व-नाटक 5000 वर्ष तक सफलता पूर्वक चलता है। सूक्ष्म कर्म अर्थात् हमारे जो संकल्प उठते हैं, उनका प्रभाव अपने लक्ष्य पर अवश्य होता है और वहाँ से उनकी प्रतिक्रिया भी होती है। ये सिद्धान्त सुकर्म और विकर्म दोनों में प्रभावित होता है। इसके लिए बाबा कहते हैं - बच्चे, तुम किसी भी कोने में बैठे संकल्प करते हो, याद करते हो तो वह बाबा के पास पहले ही पहुँच जाता है और बाप उसका रिटर्न देते हैं। इस क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त को समझकर ही कोई कर्म करना चाहिए क्योंकि हम जो कर्म करेंगे, उसकी प्रतिक्रिया हमारे ऊपर अवश्य होगी।

* अपने कर्मों के स्वरूप, कर्म की सफलता-असफलता, सुख-शान्ति की स्टेज से अपने ज्ञान-योग की वर्तमान स्थिति और भविष्य जीवन की स्थिति को परख सकतेहैं।

"रहमदिल एक बाप ही है, वही संगमयुग पर सर्वात्माओं पर रहम करता है। कोई देवी-देवता या मनुष्य, गुरु-गुसाई यथार्थ रहमदिल नहीं हो सकता।" दादी जानकी 3.12.06

"जो धर्मराज से डरेगा, उसको धर्मराज आँख नहीं दिखायेगा क्योंकि उससे कोई विकर्म नहीं होगा। भक्ति मार्ग में भी धर्मराज या परमात्मा के डर से भक्त पाप-कर्म नहीं करते हैं।"

दादी जानकी 3.12.06

* अहंकार और हीनता दोनों ही देहाभिमान जनित हैं, इसलिए दोंनों के वशीभूत किये गये कर्म विकर्म हैं और उनके फलस्वरूप आत्मा को दुख अवश्य भोगना पड़ता है। आत्मिक स्वरूप इन दोनों से मुक्त है, इसलिए आत्मिक स्वरूप में किये गये कर्म ही सुकर्म हैं और उनका ही फल सुखदायी होता है।

* किसी के अपमान को देखकर खुश होना भी विकर्म है और उस व्यक्ति के साथ कर्म-बन्धन का खाता बनाता है। ऐसे ही किसी के पतन को देखकर खुश होना भी विकर्म है और उस व्यक्ति के साथ कर्म-बन्धन का खाता बनाता है। किसी का उपहास करना भी किसको दुख देना है और उस व्यक्ति के साथ कर्म-बन्धन का खाता बनाना है।

"आत्मा पर जन्म-जन्मान्तर का बोझा चढ़ा हुआ है, वह अब तुमको योगबल से भस्म करना है। इसको योग-अग्नि कहा जाता है। काम चिता पर बैठने से पापात्मा बनते आये हैं ... भारत के प्राचीन योग की बहुत महिमा है।" सा.बाबा 22.1.07 रिवा.

"बाबा राय देते हैं - बच्चे सेन्टर्स खोलते जाओ, मनुष्यों का बैठ श्रृंगार करो। ... तो उनकी आशीर्वाद से तुम भी भरपूर हो जायेंगे। बल तो मिलता है ना। ... मेहनत करनी पड़ती है। कहाँ से हमारे कुल का निकल आये।" सा.बाबा 22.1.07 रिवा.

"5 विकार तुम्हारे में प्रवेश होने से तुम देहाभिमानी बन पड़े हो। रावण ही तुमको देहाभिमानी बनाते हैं। वास्तव में असुल तुम देही-अभिमानी थे। अभी फिर से यह प्रैक्टिस कराई जाती है कि अपने को आत्मा समझो। Q. 5 विकार आने से देहाभिमानी बने या देहाभिमानी बनने से 5 विकार आये ? वास्तव में देहाभिमानी बनने से आत्मा में विकार आये हैं।"

सा.बाबा 24.1.07 रिवा.

"सोल कान्सेस होने से ही तुम्हारे विकर्म विनाश होते हैं।... विकर्म विनाश तब होते हैं जब संगमयुग पर डायरेक्ट शिवबाबा आकर मन्त्र देते हैं कि मामेकम् याद करो।"

सा.बाबा 24.1.07 रिवा.

"तुमको लिखना चाहिए कि आबू में आकर जिसने यह दिलवाला मन्दिर नहीं देखा और इन्होंके आक्यूपेशन को नहीं जाना तो कुछ नहीं देखा। ... हमारा जड़ यादगार बना हुआ है। वण्डरफुल मन्दिर यह है। मम्मा-बाबा और बच्चे यहाँ चैतन्य में बैठे हैं।"

सा.बाबा 25.1.07 रिवा.

"यहाँ गरीब अथवा साहूकार की बात नहीं है ... अब तुम बाप के पास अपने को इन्श्योर करो... साहूकार का एक हजार और गरीब का एक रुपया - दोनों को एक समान फल मिलता है। ... साहूकार कभी नहीं आयेंगे और न बाबा को उनकी दरकार है।... यहाँ पैसे आदि की कोई बात नहीं है। बाप सिर्फ कहते हैं - मन्मनाभव।"

सा.बाबा 25.1.07 रिवा.

"ब्रह्मा कुमार-कुमारी भाई-बहन होने के कारण विकार में जा नहीं सकते। नहीं तो वह हो जाये क्रिमिनल एसॉल्ट। उसको बहुत खराब कहा जाता है। भाई-बहन कहलाकर फिर अगर विकार में गये तो बहुत कड़ी सज़ा भोगनी पड़ेगी। गायन है - सतगुरु का निन्दक ठौर न पाये।" सा.बाबा 26.1.07 रिवा.

"आज विश्व में तीन शक्तियाँ विशेष हैं - एक धर्म-सत्ता, दूसरी राज-सत्ता और तीसरी विज्ञान की सत्ता। लेकिन आप ब्राह्मण आत्माओं में चार सत्तायें हैं। पहली तीन सत्तायें तो हैं ही, साथ-साथ चौथी सत्ता है - श्रेष्ठ कर्मों की सच्चा।... इसको ही कहा जाता है श्रेष्ठ चरित्र की सत्ता।... चारों सत्ताओं का बैलेन्स ही बाप समान सम्पन्न और सम्पूर्ण स्थिति है।"

अ.बापदादा 10.1.91

"धर्म-सत्ता अर्थात् सदा श्रेष्ठ सुखी, खुशनुमा जीवन जीने की कला... राज-सत्ता अर्थात् अपने को और राज्य को अर्थात् अपने कर्म साथियों को अपने स्नेह और शक्ति के बैलेन्स द्वारा सर्व प्राप्ति, सन्तुष्टता का अधिकार दाता बन अनुभव कराना। ... विज्ञान की सत्ता अर्थात् विज्ञान के साधनों द्वारा प्रत्यक्ष फल की अनुभूति कराने की कला। श्रेष्ठ कर्म की सत्ता अर्थात् कर्म का वर्तमान फल खुशी और शक्ति अनुभव कराना और साथ-साथ भविष्य फल जमा होने की अनुभूति होना।" अ.बापदादा 10.1.91

"श्रेष्ठ कर्म की सत्ता अर्थात् कर्म का वर्तमान फल खुशी और शक्ति अनुभव कराना और साथ-साथ भविष्य फल जमा होने की अनुभूति होना।... सबसे बड़ा खज़ाना है श्रेष्ठ कर्मों का खज़ाना।" अ.बापदादा 10.1.91

"धर्म, राज, विज्ञान और श्रेष्ठ कर्मों की सत्ता के आधार से ही एकरस स्थिति का आसन सदा अचल-अडोल रहेगा। ... बेफिकर बादशाह का अनुभव करेंगे और करायेंगे।"

अ.बापदादा 10.1.91

"पहले-पहले अपने समीप के कर्म-साथी कर्मेन्द्रियों को चेक करो कि मुझ आत्मा राजा के स्नेह और शक्ति अर्थात् लव और लॉ दोनों ही सदा आर्डर में चलते हैं। ... सन्तुष्ट रहे।"

अ.बापदादा 10.1.91

"कोई भी प्रकार का दान देकर फिर वापस नहीं लिया जाता है।... इन्श्योर करना हो तो करो। नहीं करेंगे तो तुमको कुछ भी नहीं मिलेगा।"

सा.बाबा 1.1.07 रिवा.

"विनाश से पहले बाप से वर्सा लेना है। ... अभी तुम दिन-रात योग में रहो तब विकर्म विनाश हों। विकर्म विनाश होने में टाइम लगता है। इनको भी कितना समय लगा है। ... यह कितनी तरावट की नॉलेज है। बेड़ा ही पार हो जाता है। सब कामनायें सिद्ध हो जाती हैं।"

सा.बाबा 1.1.07 रिवा.

"जो सिर्फ सर्विस लेते रहते हैं, उनको क्या मिलेगा ? ... जगदम्बा ज्ञान-ज्ञानेश्वरी है, वह फिर राज-राजेश्वरी लक्ष्मी बनती है। ... ये सब समझने की बातें हैं। औरों को समझाने से खुशी रहती है। दान देने में खुशी होती है। बाप अविनाशी ज्ञान रत्नों का दान देते हैं तो फिर औरों को भी दान देने की सर्विस करनी चाहिए।" सा.बाबा 2.1.07 रिवा.

"मम्मा-बाबा के पिछाड़ी नहीं पड़ना चाहिए। सर्विस पर लगना है, तब बाबा राज़ी हो। ... जिनमें रोने की आदत है, वे किसको ज्ञान नहीं दे सकते।... अगर रोते हैं तो कोई खोटे कर्म किये हुए हैं, जो धोखा देते हैं।" सा.बाबा 2.1.07 रिवा.

"मुझे बच्चों का शो करना होता है परन्तु ऐसे नहीं कि उसका फल उनको मिलेगा। नहीं, बच्चों को अपनी मेहनत का फल मिलेगा।... सब प्वाइन्ट्स समझाई जाती हैं।"

सा.बाबा 2.1.07 रिवा.

"इस समय हर एक पर विकर्मों का बोझा बहुत भारी है। अभी सुकर्म थोड़े होते हैं, बाकी विकर्म तो जन्म-जन्मान्तर के बहुत हैं। कितना ज्ञान और योग में रहते हैं तो भी इतने विकर्म हैं, जो छूटते ही नहीं हैं। जब कर्मातीत बन जायेंगे फिर तो तुमको नया जन्म नई दुनिया में मिलेगा। अगर कुछ विकर्म रहे हुए होंगे तो पुरानी दुनिया में ही दूसरा जन्म लेना पड़ेगा।"

सा.बाबा 10.1.07 रिवा.

"दुनिया में तो रिश्वतखोरी बहुत है। तुमको रिश्वत लेने की कोई दरकार ही नहीं है। ... बाबा कहते हैं - बच्चे किसी से भी मांगो मत। तुम दाता के बच्चे हो ना। तुमको देना है, न कि मांगना है। तुमको जो कुछ चाहिए वह शिवबाबा के भण्डारे से मिल सकता है। और कोई से लेंगे तो उनकी याद आती रहेगी।... नहीं तो देने वाले को भी नुकसान पड़ता है क्योंकि उसने शिवबाबा के भण्डारे में नहीं दिया।"

सा.बाबा 10.1.07 रिवा.

"यह सब इच्छायें छोड़कर एक बाप को याद करो। बन्धन आदि हैं, यह सब कर्मों का हिसाब है। ... कई सेन्टर्स पर भी आते रहते हैं और काला मुँह भी करते रहते हैं। ... इन्द्रप्रस्थ की भी कहानी है। पत्थरबुद्धि बन पड़ेंगे। ... पुरुषार्थ नहीं करते, यह भी ड्रामा में नूँध है। राजधानी में नम्बरवार चाहिए।"

सा.बाबा 10.1.07 रिवा.

"कोई की सिर्फ कथनी है, करनी नहीं है तो कोई को तीर नहीं लगता है। कथनी से भल और किसका भला हो जायेगा परन्तु खुद की करनी नहीं है तो गिर पड़ेगा। जिसको ज्ञान देगा, वह चढ़ जायेगा, खुद गिर पड़ेगा।"

सा.बाबा 11.1.07 रिवा.

"पहले सतयुग में ये एरोप्लेन आदि थे, तो फिर संगमयुग पर ही होना चाहिए। जो सुख फिर तुमको स्वर्ग में मिलना है। एरोप्लेन जो बनाते हैं, वह भी वहाँ होंगे।... अभी बनाते हैं विनाश के लिए, फिर वहाँ सुख के काम में आयेंगे। ... ब्राह्मणों के द्वारा ही यज्ञ रचते हैं, फिर सुख भी ब्राह्मणों को मिलता है। ब्राह्मण वर्ण ही देवता वर्ण बनता है।"

सा.बाबा 13.1.07 रिवा.

"योग में रहकर शान्ति और सुख का दान देना है। बाबा कहते हैं - रात्रि को उठकर योग में बैठो, सृष्टि को शान्ति-सुख का दान दो। सवेरे उठकर अशरीरी होकर बैठो तो तुम न सिर्फ भारत को, बल्कि सारी सृष्टि को योग से शान्ति का दान देते हो और फिर चक्र का ज्ञान सुमिरण करने से तुम सुख का दान देते हो।"

सा.बाबा 16.1.07 रिवा.

"यह भी अभ्यास करता होगा। फिर कोई बच्चे आकर कहते है - बाबा गुडमॉर्निंग। तो इनको नीचे उतर गुडमॉर्निंग करना पड़े, आवाज़ में आना पड़े। यह तो पुरुषार्थ करते रहते हैं वाणी से परे होने का क्योंकि इससे ही पाप कटेंगे।... जिसका बहुत अच्छा पुरुषार्थ होगा, वही कर्मातीत अवस्था को पा सकेंगे। बहुत मेहनत करने से पिछाड़ी में कर्मातीत अवस्था होनी है।"

सा.बाबा 18.1.07 रिवा.

"अशरीरी बनने के लिए बहुत प्रैक्टिस करनी है। यह शरीर बिल्कुल भूल जाये। ... जब यह प्रैक्टिस पक्की हो जायेगी तो यह कर्मभोग भी समाप्त हो जायेगा।... कोई कार्य करने के लिए बुद्धि लगाने की भी आवश्यकता नहीं रहेगी।... सोचना नहीं पड़ेगा। बुद्धि में वही संकल्प आयेगा, जो यथार्थ करना है।"

अ.बापदादा 18.1.07 रिवा.

"देह के सब धर्म छोड़ मुझे याद करो तो विकर्म विनाश होंगे और मेरे पास चले आयेंगे और चक्र को याद करने से तुम चक्रवर्ती राजा बनेंगे।... सतयुग की निशानियां हैं तो वह फिर रिपीट जरूर होंगी।"

सा.बाबा 19.1.07 रिवा.

* स्वप्न का आधार भी जाग्रत अवस्था में दृष्टि-वृत्ति, स्थिति से किये गये कर्म ही होते हैं।

# कर्म सम्बन्धित विविध बिन्दु

"सर्विस के लिए बहुत विशालबुद्धि चाहिए। खर्चा तो होगा ही। पैसे तो खर्च करने के लिए ही हैं। खर्च करते जायेंगे तो आते जायेंगे। धन दिये धन न खुटे।... ये बड़ी समझने की बातें हैं। इसमें बड़ी विशालबुद्धि चाहिए और देही-अभिमानी स्थिति चाहिए।"

सा.बाबा 30.1.07 रिवा.

"बाबा है बेहद सृष्टि को स्वर्ग बनाने वाला, उनकी सबके लिए यह दृष्टि रहती है कि इनको उठायें। गरीबों पर खास ध्यान जाता है। दान हमेशा गरीबों को दिया जाता है। गरीब ही निमित्त बने हुए हैं। राजाई स्थापन हो रही है।" सा.बाबा 31.1.07 रिवा.

"तुम्हारी है सच्ची कमाई। तुम यह कमाई साथ ले जायेंगे। तुम जानते हो अभी हम सब कुछ स्वर्ग में ट्रान्सफर करते हैं। ... कितनी समझने की बातें हैं। सो भी श्रीमत पर चलना है। ... बाबा की श्रीमत पर चलना चाहिए, दान देकर औरों का भी जीवन हीरे जैसा बनाना है।"

सा.बाबा 31.1.07 रिवा.

"प्रजा में भी किसके पास बहुत धन होगा तो सोने के महल बना सकते हैं। कोई-कोई प्रजा भी बहुत साहूकार होती है क्योंकि उन्होंने धन की बहुत मदद की है।"

सा.बाबा 3.2.07 रिवा.

"बाबा को कहा जाता है सुप्रीम जस्टिस, सुप्रीम टीचर और सुप्रीम सत्गुरु। फिर सुप्रीम धर्मराज भी कहा जाता है। उनकी जजमेन्ट में नीचे-ऊपर कुछ नहीं हो सकता। ड्रामा में ऐसी नूँध ही नहीं है। ... बाप की बदनामी करने की सजा बहुत भारी है। जो यज्ञ में विघ्न डालते, वे सजा लायक बन जाते हैं।" सा.बाबा 17.2.07 रिवा.

"बाप समान बनना है। ... समानता कैसे आयेगी ?... एक तो अपने को सदैव आधारमूर्त समझो। आधारमूर्त समझने जो भी कार्य करेंगे, वह जिम्मेवारी से करेंगे। ... जो कर्म आप करेंगे, वह सब करेंगे। ... दूसरा उद्धारमूर्त बनना है। जितना अपना उद्धार करेंगे, उतना औरों का भी उद्धार करेंगे और जितना औरों का उद्धार करेंगे, उतना अपना भी उद्धार होगा।"

अ.बापदादा 17.10.70 - 18.2.07 रिवा.

"संगमयुग पर जो रीति-रस्म यथार्थ चलती है, वह भक्ति मार्ग में बदलकर चलती है।... टीका सौभाग्य की निशानी है। जो बातें सुनी, उन बातों में टिकने की निशानी टीका है। ... एक है शक्तिशाली बनने का टीका (इनजेक्शन) और दूसरा है सदा सुहाग और भाग्य में स्थित रहने का टीका।" अ.बापदादा 17.10.70-18.2.07 रिवा.

"पास नहीं लेकिन पास विद् ऑनर अर्थात् मन में भी संकल्पों से सज़ा नहीं खायें। धर्मराज की सज़ाओं की बात तो पीछे है लेकिन अपने संकल्पों में उलझन अर्थात् सज़ाओं से परे रहें। ... सर्व

के सहयोगी बनेंगे तो स्नेह मिलता रहेगा।"

अ.बापदादा 17.10.70 - 18.2.07 रिवा.

Q. क्या अभी संगमयुग पर हम तन-मन-धन से पूर्ण स्वस्थ हो सकते हैं? यदि हाँ तो कैसे और उसके लिए अभीष्ट पुरुषार्थ क्या है और यदि नहीं तो हमारा कर्तव्य क्या है?

नहीं अर्थात् तन से पूर्ण स्वास्थ्य संगमयुग पर असम्भव नहीं तो अति कठिन अवश्य है परन्तु हमको कोई बीमारी है तो उसके निदान के लिए अभीष्ट पुरुषार्थ अवश्य करना चाहिए परन्तु हमको अति आशावादी (Over optimistic) नहीं बनना चाहिए कि हम हठयोग, तन्त्र-मन्त्र, वास्तु-शास्त्र या किसी अन्य विधि-विधान से सदा स्वस्थ हो जायेंगे और उसके कारण अपने योग में अलबेलापन, यथार्थ विश्वास उठ जाये, संशय आ जाये। हमको इस सत्य को नहीं भूल जाना चाहिए कि संगमयुग पर अनेक जन्मों के विकर्मों का खाता चुकता करना है। हमारे आदर्श मम्मा-बाबा को भी इस परीक्षा से पास करना पड़ा है। इसलिए उनके पद-चिन्हों पर चलते हुए अपने योग में पूर्ण श्रृद्धा-भावना रखकर, श्रीमत अनुसार उसकी सफलता के लिए पुरुषार्थ करना चाहिए। इनके चक्कर में भटकना भी एक विकर्म है, अपने योग की निन्दा कराना है, अपने सिद्धान्त की निन्दा कराना माना बाप की निन्दा कराना है, इससे हमारे कर्मभोग का खाता कम नहीं होता बल्कि और बढ़ता ही जाता है, उसकी वेदना बढ़ती जाती है। इसके चक्कर में अपना अभीष्ट पुरुषार्थ न करना भी एक बहाने-बाजी है।

"कर्म-अकर्म-विकर्म की गति का ज्ञान भी गीता में हैं, और तो कोई नहीं जानते। विकर्म कराने वाली है माया, वह सतयुग में होती नहीं है। ... तुम योगबल से गुप्त वेष में अपनी किंगडम स्थापन कर रहे हो।"

सा.बाबा 23.2.07 रिवा.

"तुम बच्चों में कुदृष्टि, क्रोध आदि कुछ नहीं होना चाहिए। उससे अपना ही नुकसान करते हो। कुदृष्टि होती है तो सामने वाले को भी उसका वायब्रेशन आता है, दूसरे को भी कशिश होती है। ... अभी अगर कोई विकर्म किया तो सौगुणा दण्ड हो जाता है।"

सा.बाबा 24.2.07 रिवा.

"कोई भी स्थूल-सूक्ष्म देहधारी को याद करने से विकर्म विनाश नहीं होंगे। इसलिए बाबा बार-बार समझाते रहते हैं ताकि कोई ऐसे न कहे कि हमको कोई ने समझाया नहीं। तुम बच्चों को हर एक को बाप का पैगाम देना है। कोई ऐसा न रह जाये, जो कहे कि हमको मालूम ही नहीं पड़े कि बाबा आया है।"

सा.बाबा 24.2.07 रिवा.

# सारांश

इस विश्व-नाटक के विधि-विधान, नियम-सिद्धान्तों को पूरी रीति से समझना और वर्णन करना तो किसी भी व्यक्ति के लिए असम्भव ही है परन्तु ये कटु सत्य है कि ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण और कल्याणकारी है, इसमें कोई भी घटना किसी आधार के बिना नहीं होती है और कोई भी कर्म फल के बिना नहीं हो सकता। विश्व-नाटक में आत्माओं के परस्पर सम्बन्धों की गति भी अति गहन है, जिसको समझना भी अति कठिन है परन्तु ये सत्य है कि किसी भी अच्छे-बुरे सम्बन्ध का आधार अवश्य है। इसलिए इस सत्य को समझकर ज्ञानी आत्मा का कर्तव्य है कि वह किसी भी घटना को देखकर आश्चर्यचकित या दुखी न होकर इस विश्व-नाटक की हर घटना को साक्षी होकर देखे और ट्रस्टी होकर कर्म करते हुए इस विश्व-नाटक का आनन्द ले और इसका परम-सुख अनुभव करे।

परमात्मा जानते हुए भी हर घटना और हर कर्म के फल के सम्बन्ध में अधिक न बताकर, जो हमारे लिए हितकर है उस अनुसार संक्षेप इसके नियम-सिद्धन्तों, विधि-विधानों को बताते हैं, जिनको जानकर, उन पर निश्चय करने वाले इस विश्व-नाटक का परमानन्द अनुभव करते हैं।

ये सृष्टि कर्म और फल, हार और जीत, दिन और रात, ज्ञान और भक्ति, राम और रावण, पतित और पावन .... का एक खेल है। कर्म इसका मुख्य घटक है, इसलिए इसको कर्मक्षेत्र कहा जाता है, इसलिए कर्म-योग, कर्म-भोग, कर्म-सन्यास, कर्मेन्द्रियां, कर्म-सम्बन्ध, कर्म-बन्धन, कर्मातीत, विकर्माजीत, सुकर्म-अकर्म-विकर्म आदि का गायन है। ये सारा खेल कर्म के आधार पर ही चलता है। कर्म ही चढ़ती कला का आधार है तो कर्म ही गिरती कला का कारण भी बनता है, कर्म ही जीत का आधार है तो कर्म ही हार का कारण भी है। संगम पर परमात्मा भी आकर कर्म करते हैं और ब्राह्मणों को श्रेष्ठ कर्म करना सिखलाते हैं, जिसके आधार पर वे सतयुग में देवी-देवता बनते हैं। देवताओं के कर्मों का पूजन होता है परन्तु परमात्मा और ब्राह्मणों के कर्मों का गायन होता है। पूजन से गायन अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि गायन चढ़ती कला के कर्मों का होता है, जबकि पूजन होने वाले कर्म उतरती कला के होते हैं परन्तु वे विकर्म नहीं होते हैं, सुखदायी कर्म होते हैं, इसलिए उनका पूजन होता है।

आत्मा को अपने अच्छे या बुरे कर्म का फल अवश्य मिलता है, उसके लिए परमात्मा या धर्मराज की कोई आवश्यकता नहीं है। ये सृष्टि का विधि-विधान स्वत: चालित है अर्थात् ड्रामा में नूँधा हुआ है। परमात्मा उस विधि-विधान का ज्ञाता है और उसका हमको ज्ञान

देता है। उसको जानकर, अनुभव करके, निश्चय करके इस जीवन का परमसुख, परमानन्द, अतीन्द्रिय सुख अनुभव करना हर आत्मा का अपना कर्तव्य है।

विश्व-नाटक के विधि-विधान और कर्म-सिद्धान्त को जानने वाली आत्मा को कब भी किसी आत्मा के प्रति राग-द्वेष, ईर्ष्या-घृणा आदि नहीं हो सकती क्योंकि ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण, कल्याणकारी है और कर्म का विधि-विधान अटल और न्यायपूर्ण है, जिसके अनुसार हर आत्मा अपने कर्म के फलस्वरूप ही सुख-दुख भोगती है।

वर्तमान विश्व में हम अनेक ऐसी घटनाओं को देखते हैं, जिनके विषय में विचार करें तो बुद्धि की समझ से परे हो जाता है। जैसे कन्याओं का अपहरण करके बलात्कार करके मार देना, छोटै-छोटे बच्चों का अपहरण करके, उनको मारकर उनके अंगों का व्यापार करना, उनका मास खाना, अर्थ-क्वेक, सुनामी आदि में सामूहिक मृत्यु और अनेक आत्माओं का दुखी होना आदि आदि। इन सम्बन्धों का निर्माण कैसे हुआ, ये समझ से परे हो जाता है परन्तु कर्म और फल के सिद्धान्त पर विचार करें तो कोई आत्मा किसी को अकारण दुख नहीं दे सकती है। कर्म और फल का सिद्धान्त एवं क्रिया-प्रतिक्रिया का सिद्धान्त जो कल्प के आदि से ही चलता आ रहा है, वही इन सब घटनाओं का कारण है। परन्तु उसको मानकर इसे छोड़ा भी नहीं जा सकता है, उसके निवारण के लिए पुरुषार्थ करना और कराना भी ड्रामा का विधान है। "इसीलिए नाम है - कर्म-क्षेत्र, कर्म-सम्बन्ध, कर्मेन्द्रियाँ, कर्मभोग, कर्मयोग। ... कर्म श्रेष्ठ है तो श्रेष्ठ प्रालब्ध है, कर्म भ्रष्ट होने के कारण दुख की प्रालब्ध है। लेकिन दोनों का आधार कर्म है। कर्म आत्मा का दर्पण है।" अव्यक्त बापदादा 19.3.82

ज्ञान सागर परमात्मा ने हमको विश्व-नाटक और उसमें कर्म के विधि-विधान का सारा राज बता दिया है, उस राज को समझकर जो आत्मा जैसा कर्म करेगी, उस अनुसार उसको अपने कर्म का अच्छा-बुरा फल मिलेगा। विश्व-नाटक के विधि-विधान और कर्म-सिद्धान्त को जानकर किसी आत्मा को अति महत्वाकाक्षी भी नहीं बनना है और कर्म से विमुख भी नहीं होना है क्योंकि ये विश्व-नाटक विविधतापूर्ण है, इसमें आत्माओं के विविध पार्ट है, जिसके अनुसार प्राप्तियां भी विविध हैं अर्थात् सबकी प्राप्तियों में भिन्नता है अर्थात् सबकी प्राप्तियां एक समान नहीं हो सकती परन्तु सब में कर्म और फल का अटल न्यायपूर्ण विधि-विधान है। कर्मों के आधार पर ही कर्म-सम्बन्धों और कर्म-बन्धनों का निर्माण होता है, जिसके आधार पर आत्मा का पुनर्जन्म होता है।

संकल्प भी एक कर्म है, उसका भी फल होता है। संकल्प ही स्थूल या प्रत्यक्ष कर्म का आधार है। कर्म-योग से आत्मा की चढ़ती कला और कर्मभोग से उतरती कला होती है।

परमपिता परमात्मा भी इस कर्मक्षेत्र पर आकर कर्म करते हैं। वह कर्म और कर्म के फल, विश्व-नाटक के विधि-विधान का पूर्ण ज्ञाता है। वही आकर आत्माओं को श्रेष्ठ कर्मों का, कर्म के नियम-सिद्धान्तों, विधि-विधान का ज्ञान देता है और श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति का मार्ग प्रदर्शित करता है। आत्मा को श्रेष्ठ फल प्राप्ति के लिए श्रेष्ठ कर्म करना अति आवश्यक है और कर्म करने के लिए कर्म के उन नियम-सिद्धान्तों का ज्ञान, उनका अनुभव और उन पर निश्चय परमावश्यक है। इसलिए "निश्चयबुद्धि विजयन्ति" कहा गया है।

कर्मभोग (बीमारी, दुख आदि) आत्मा के विकर्मों का बोझा हल्का होने का एक साधन है, इसलिए कर्मभोग के समय भी आत्मा को धैर्य से योगयुक्त होकर उसे पूरा करना चाहिए। उसमें भी कब अधीर नहीं होना चाहिए।

कर्म का संकल्प और ड्रामा के पार्ट का इस विश्व-नाटक में अद्वितीय सन्तुलन है तथा कर्म और फल का पूर्ण न्यायपूर्ण सन्तुलन है। पवित्र योगयुक्त स्वस्थिति में स्थित आत्मा में कृत्य का संकल्प स्वत: उत्पन्न होता है, उसकी शुभ में अभिरुचि और अशुभ में अरुचि स्वत: होती है। एक परमपिता परमात्मा को याद करना और कराना सबसे श्रेष्ठ कर्म और आत्माओं को परमात्मा से विमुख करना सबसे भ्रष्ट कर्म है।

* सम्पूर्णता के पुरुषार्थ के लिए किसी साधन-सम्पत्ति, महल-माड़ी, व्यक्ति के सहयोग की आवश्यकता नहीं है। उसके लिए दृढ़ इच्छा शक्ति और दृढ़ पुरुषार्थ की आवश्यकता है। इस पुरुषार्थ में कोई व्यक्ति या वस्तु बाधक भी नहीं बन सकती है।ब्रह्माबाबा ने अपने पुरुषार्थ और सम्पूर्णता की स्थिति से ये सिद्ध करके दिखा दिया।

* सुखी जीवन के लिए तन, मन, धन, जन सब स्वस्थ चाहिए, जिसका आधार है स्वस्थ अर्थात् श्रेष्ठ कर्म। किसके लिए क्या और कैसा कर्म करना है, उसके लिए भी बाबा श्रीमत दी है, उसका विधि-विधान बताया है।

"पुराना घर छोड़ नया घर लिया, इसमें मरने की क्या बात हुई। रोने पीटने की कोई बात ही नहीं। अफसोस करने की दरकार ही नहीं। खुशी से पुराना चोला छोड़ नया लेते हैं तो उसको कहा जाता है - काया कल्पतरु।" सा.बाबा 14.8.71 रिवा.

"बाप कहते हैं कोई भी बुरा कर्म हो तो बताते रहो। बाबा जानते हैं कइयों से बुरे कर्म होते हैं, रावण राज्य है ना। माया चमाट मारती है परन्तु छिपाते बहुत हैं। बाप कहते हैं कोई भी भूल होती है तो बतलाने से आगे के लिए युक्ति मिलेगी। नहीं तो वृद्धि होती जायेगी। काम महाशत्रु है, बाबा को लिखते भी हैं बाबा माया का ऑपोजीशन बहुत होता है। सदैव तो किसका योग रहता नहीं है जो माया से बच सकें।" सा.बाबा 25.7.71 रिवा.

"हमको बनाने के लिए ही उनको इतने तरीके सब लेने पड़ते हैं।... ऐसे नहीं कि परमात्मा सर्व समर्थ है तो अपनी शक्ति से वा अपने तरीके से बना दे। बनायेंगे भी हमारे ही तरीके से क्योंकि हमको कर्मों से बनना है। हम कर्म के आधार पर बनने वाली चीज हैं, हम दूसरी तरह से बन ही नहीं सकते हैं। हम बनते ही कर्मों से हैं, बिगड़ते भी कर्मों से हैं। हमारा है ही कर्म का चक्कर। वे कहते हैं - मेरा यही तरीका है, इसे जो मेरे द्वारा जानते हैं और समझते हैं, वे ही कर्म करके अपना सौभाग्य लेते हैं।"

मातेश्वरी 27.6.1964

"जैसा निश्चय वैसा कर्म। निश्चय वाले की वाणी में, चेहरे पर हर समय रुहानी नशा दिखाई देगा। हर कर्म, संकल्प में विजय सहज प्रत्यक्ष फल के रूप में अनुभव होगी। ... अपने श्रेष्ठ भाग्य, श्रेष्ठ जीवन वा बाप और परिवार के सम्बन्ध-सम्पर्क द्वारा एक परसेन्ट भी संशय संकल्पमात्र भी नहीं होगा। क्वेश्चन मार्क समाप्त, हर बात में बिन्दु बन बिन्दु लगाने वाले होंगे। निश्चयबुद्धि हर समय अपने को बेफिकर बादशाह सहज और स्वत: अनुभव करेंगे।"

अ.बापदादा 27.12.87

* इस विश्व-नाटक की यथार्थता को जानकर मनुष्य को राग-द्वेष दोनों से मुक्त रहना चाहिए। ये सृष्टि एक कर्मक्षेत्र है, जहाँ हर आत्मा अपना कर्म करती है और उस अनुसार फल पाती है। ये कर्मक्षेत्र एक धर्म-युद्ध भी है, जिसमें अन्तत: श्रेष्ठ धर्म-कर्म वाला ही विजयी होता है। जिसकी पवित्रता की धारणा पक्की होती है और शुभ कार्यों में प्रवृत्ति है, उसकी इस धर्म-युद्ध में विजय निश्चित है। इसमें अंशमात्र भी संशय की बात नहीं है।

आत्मिक स्थिति और परमात्मा से योगयुक्त स्थिति परमानन्दमय है। संगमयुग पर परमसुख परमानन्द के अनुभव का शुभ अवसर मिलते भी दैहिक-मानसिक व्याधियों, बुद्धि की कमजोरी, आलस्य-अलबेलेपन, व्यर्थ चिन्तन, किन्ही वस्तु और व्यक्तियों के आकर्षण या राग-द्वेष के वशीभूत उसको अनुभव न कर पाना कर्म-बन्धन अर्थात् अपने ही कर्मों का हिसाब-किताब है परन्तु कर्म-बन्धन का हिसाब-किताब होते भी सच्चे पुरुषार्थी को कब हिम्मत नहीं हारना। हिम्मतवान को परमात्मा की मदद अवश्य मिलती है और उसकी विजय निश्चित होती है। पुरुषार्थ ही कर्मभोग से मुक्त होने और कर्मयोग द्वारा परमसुख परमानन्द पाने का एकमात्र आधार है। पुरुषार्थ ही जीवन है और पुरुषार्थहीनता ही मृत्यु है।

कर्म-सिद्धान्त को सार रूप में देखें तो हमको अभी इस जन्म में जो प्राप्त है अर्थात् हमको जाति-धर्म, देश-काल, साधन-सम्प्ति, शिक्षा, सम्बन्ध-सम्पर्क, स्वस्थ-अस्वस्थ देह, बुद्धि, आदि जो भी प्राप्त है, वह हमारे पूर्व कर्मों का फल है, उसको हमको सहर्ष स्वीकार

करना चाहिए और भविष्य जन्म में भी ये सब हमको हमारे वर्तमान के कर्मों के आधार पर ही प्राप्त होंगे, इसलिए अभी अपने कर्मों में बहुत सावधानी रखनी है। हमारा ये वर्तमान जन्म और जीवन महान है, इसके अस्तित्व को पहचान कर अभी जो आत्मा अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होगी, वह भूतकाल के चिन्तन और भविष्य की चिन्ता से मुक्त होकर श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त होगी और अभी ही परमानन्द को अनुभव करेगी क्योंकि आत्मिक स्वरूप में स्थित आत्मा में भूतकाल के कर्मों के फल अर्थात् कर्मभोग को सहन करने और भविष्य के लिए श्रेष्ठ कर्म करने की शक्ति स्वत: होती है। परमात्मा सच्चिदानन्द सागर है और आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है।

# अमृत-धारा

यह अटल सत्य है कि जो हुआ वह टल नहीं सकता और जो नहीं हुआ वह हो नहीं सकता। जो हुआ वह अच्छा हुआ, जो हो रहा है वह अच्छा है और जो होगा वह भी अच्छा होगा क्योंकि ये विश्व-नाटक सत्य, न्यायपूर्ण और कल्याणकारी है। पवित्रता ही जीवन है। पवित्रता अर्थात् आत्मिक स्वरूप में स्थिति, आत्मिक स्मृति, आत्मिक दृष्टि और आत्मिक वृत्ति। जहाँ पवित्रता है, वहाँ सर्व प्राप्तियां, सर्व सुख स्वत: होते हैं, इच्छामात्रम् अविद्या होती है। सर्व सम्बन्धों में मधुरता होती है, ब्रह्मचर्य की स्वभाविक धारणा होती है, राग-द्वेष, भय-चिन्ता, दुख-अशान्ति, ईर्ष्या-घृणा, इच्छा-आकांक्षा का नाम-निशान नहीं होता है। पवित्र आत्मा में समय पर कृत्य का संकल्प स्वत: जाग्रत होता है, उसकी शुभ में अभिरुचि और अशुभ में अरुचि स्वत: होती है, इसलिए सदा निर्संकल्प होती है। सर्व आत्माओं के प्रति उसकी शुभ भावना, शुभ कामना होती है, जिसके परिणाम स्वरूप सर्व की उसके प्रति शुभ भावना, शुभ कामना अवश्य होती है।

विश्व एक नाटक है, इसमें न कोई अपना है और न कोई पराया है। न कोई अपना मित्र है और न कोई अपना शत्रु है। जो आज अपना है, वह कल पराया होगा और पराया अपना होगा। न कोई हमको कुछ दे सकता है और न कोई हमारा कुछ ले सकता है। न किसी ने हमको कुछ दिया है और न ही हमारा किसी ने कुछ लिया है। हर आत्मा अपना अनादि-अविनाशी पार्ट बजा रही है और अपने कर्मों अनुसार सुख या दुख को पा रही है। इसलिए किससे राग-द्वेष, भय-चिन्ता का कोई प्रश्न ही नहीं।

दाता एक परमात्मा है, उसने हमको जो दिया है, वही हमारे लिए हितकर है। भगवानोवाच्य- बच्चे, तुम परमधाम के रहने वाले हो, इस सृष्टि पर पार्ट बजाने आये हो, अभी तुमको वापस घर चलना है। इस सत्यता को समझकर देह और देह की दुनिया से न्यारे होकर अपने आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर परम-शान्ति का अनुभव करो, बाप के साथ विश्व-कल्याण की सेवा कर परमानन्द का अनुभव करो और साक्षी होकर इस विश्व-नाटक को देखो और ट्रस्टी होकर पार्ट बजाते हुए परम सुख का अनुभव करो। यही सुख-शान्तिमय जीवन का सुगम पथ है।

इस सत्य पर दृढ़ निश्चय होगा और सतत् अभ्यास तथा सहज स्थिति होगी तब ही हम अपनी अन्तिम मंजिल सुखमय जीवन और सुखद मृत्यु को सहज प्राप्त कर सकेंगे अर्थात् राग-द्वेष, भय-चिन्ता से मुक्त होंगे। यही जीवन की परम-प्राप्ति, परमात्मा का परम वरदान है, इस ब्राह्मण जीवन का परम-पुरुषार्थ और इस जीवन का परम-कर्तव्य है।

यह बात भी ध्यान में रखना अति आवश्यक है - ड्रामा का ज्ञान और आत्मिक स्थिति रूपी दोनों पहिये साथ होंगे और उनके बीच में परमात्मा रूपी धुरी होगी तब ही गाड़ी सफलतापूर्वक चलेगी। "जैसे कर्मों की गति गहन गाई है, वैसे पवित्रता की परिभाषा भी अति गुह्य है। पवित्रता माया के अनेक विघ्नों से बचने की छत्रछाया है। पवित्रता को ही सुख-शान्ति की जननी कहा जाता है। ... किसी भी कारण से दुख का जरा भी अनुभव होता है तो सम्पूर्ण पवित्रता की कमी है।"

अ.बापदादा 14.11.87